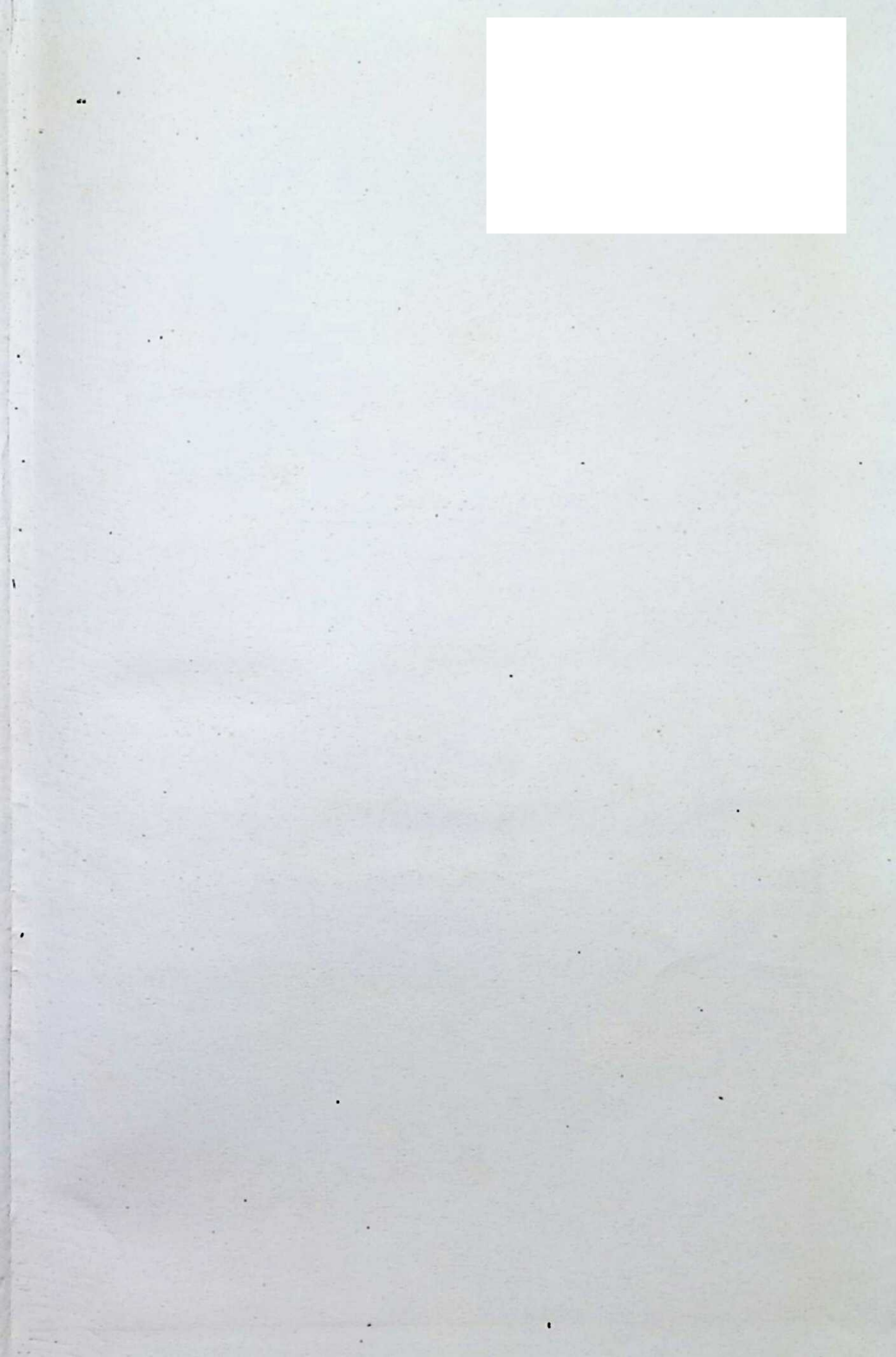
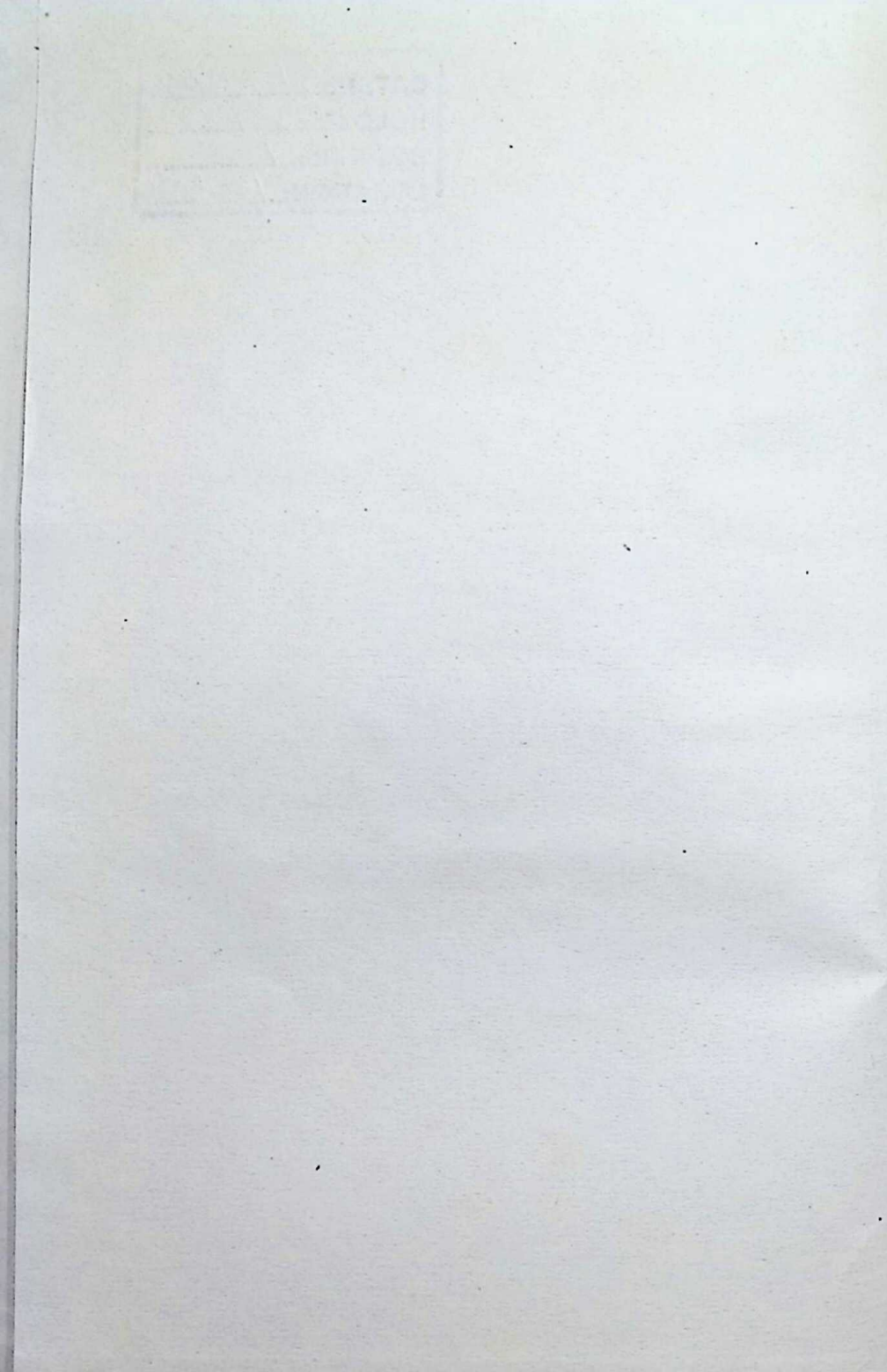






देवादिदेव महादेव शिव

(पुराणों के सन्दर्भ में)

Forwarded free of cost with the
Compliments of Rashtriya
Sanskrit Sansthan, New Delhi

उत्पादन मंत्रालय

(विज्ञान विभाग)

CAT. No:.....
HOLD ID:.....
BOOK No:.....
LOCATION:.....

देवादिदेव महादेव शिव

(पुराणों के विशेष सन्दर्भ में)

सिप्रा बैनर्जी



परिमल पब्लिकेशन्स
दिल्ली

प्रकाशक :

परिमल पब्लिकेशन्स

२७/२८ शक्ति नगर

दिल्ली - ११०००७

दूरभाष : २३८४५४५६, ४७०१५१६८

ई-मेल : order@parimalpublication.com

© सिप्रा बैनर्जी

ISBN : 978-81-7110-390-4

प्रथम संस्करण : वर्ष २०११

मूल्य - १५०.०० रुपये

मुद्रक

विशाल कौशिक प्रिंटर्स

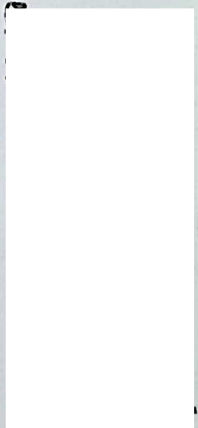
नजदीक जी.टी.बी. हॉस्पिटल,

जगतपुरी विस्तार, दिल्ली-११००९३

ॐ सद्योजाताय नमः । ॐ वामदेवाय नमः ।

ॐ घोराय नमः । ॐ तत्पुरुषाय नमः ।

ॐ ईशानाय नमः ।





अनुक्रमणिका

सङ्केत सूची	xi
निवेदन	xv
देवादिदेव महादेव शिव	1 – 21
परमात्मा	1
बाह्य रूप	10
भूषण	14
पुष्प	15
वाहन	15
लोक	16
गण	19
शिवरात्रि	21
शिव – पारिवारिक जीवन	22 – 68
सती एवं दक्षयज्ञ – विध्वंस	23
विधुर शिव	35

पार्वती	41
कामदहन	43
पार्वती परीक्षा तथा विवाह	46
काशीवास	52
पुत्र - कार्तिकेय	54
पुत्र - गणेश	57
दाम्पत्य - जीवन	59
आध्यात्मिक सम्पर्क	64
अर्धनारीश्वर	65
शिव और नदियां	67
देववृन्द के अधीश्वर	69 - 109
ब्रह्मा, विष्णु एवं सुदर्शन चक्र	69
रामचन्द्र	95
हनुमान्	98
वासुदेव कृष्ण	100
अन्य देववृन्द	104
शिव - भक्त	110 - 141
भक्तवत्सलता और कालकूट	110

राजा वीरमणि	114
शुक्राचार्य	114
परशुराम	119
अन्धकासुर	121
गुणनिधि (कुबेर)	125
बाणासुर	125
वृकासुर	127
त्रिपुराधिपति तारकाक्ष	128
जलन्धर	130
अन्याय भक्त – एक विहङ्गावलोकन	131
शिव – अवतार	142 – 152
नील	142
रुद्र	143
अन्य अवतार	145
शिव – नाम	153 – 163
सहस्रनाम,	153
शतनाम, अष्टोत्तरशतनाम,	154
नामावली, कवच,	155

अष्टोत्तरशत मूर्तियां, श्रीकण्ठमातृकान्यास	157
शिव तथा तीर्थनाम	159
शिव - लिङ्ग	164 - 179
लिङ्ग - विशद परिचय	164
द्वादश ज्योतिर्लिङ्ग	169
शतरुद्रीय	175
संहारी शिव	180 - 182

सङ्केत सूची

अग्नि	अग्निपुराण
कालिका	कालिकापुराण
कूर्म, उत्तर	कूर्ममहापुराण, उत्तरार्द्ध
कूर्म, पूर्व	कूर्ममहापुराण, पूर्वार्द्ध
देवी	श्रीमद्देवीभागवत पुराण
नारद, उत्तर	बृहन्नारदीयपुराण, उत्तर भाग
नारद, पूर्व	बृहन्नारदीयपुराण, पूर्व भाग
पद्म, उत्तर	पद्ममहापुराण, उत्तर खण्ड
पद्म, पाताल	पद्ममहापुराण, पाताल खण्ड
पद्म, सृष्टि	पद्ममहापुराण, सृष्टि खण्ड
पद्म, स्वर्ग	पद्ममहापुराण, स्वर्ग खण्ड
ब्रह्म	ब्रह्मपुराण
ब्रह्मवै, गण	ब्रह्मवैवर्तपुराण, गणपति खण्ड
ब्रह्मवै, प्रकृति	ब्रह्मवैवर्तपुराण, प्रकृति खण्ड
ब्रह्मवै, ब्रह्म	ब्रह्मवैवर्तपुराण, ब्रह्म खण्ड
ब्रह्मवै, श्रीकृष्ण, पूर्व	ब्रह्मवैवर्तपुराण, श्रीकृष्णजन्म खण्ड, पूर्वार्ध
ब्रह्माण्ड, अनु	ब्रह्माण्डपुराण, अनुषङ्ग पाद
ब्रह्माण्ड, मध्य, उप	ब्रह्माण्डपुराण, मध्यम भाग, उपोद्घात पाद
ब्रह्माण्ड, ललिता	ब्रह्माण्डपुराण, ललितोपाख्यान
भविष्य, उत्तर	भविष्यमहापुराण, उत्तर पर्व
भविष्य, प्रति	भविष्यमहापुराण, प्रतिसर्ग पर्व
भविष्य, ब्राह्म	भविष्यमहापुराण, ब्राह्म पर्व
भविष्य, मध्यम	भविष्यमहापुराण, मध्यम पर्व
भाग	श्रीमद्भागवतपुराण
मत्स्य	मत्स्यपुराण

महा, अनु
 महा, आदि
 महा, आर
 महा, आश्व
 महा, उद्योग
 महा, कर्ण
 महा, द्रोण
 महा, शल्य
 महा, शान्ति
 महा, सौप्तिक
 मार्क
 राम, बाल
 लिङ्ग, पूर्व
 वामन
 वायु
 वाराह
 विष्णु
 शिव, उमा
 शिव, कैलास
 शिव, कोटि
 शिव, रुद्र, कुमार
 शिव, रुद्र, पार्वती
 शिव, रुद्र, युद्ध
 शिव, रुद्र, सती
 शिव, रुद्र, सृष्टि
 शिव, वाय, उत्तर
 शिव, वाय, पूर्व
 शिव, विद्येश्वर
 शिव, शत
 स्कन्द, आव, अव

स्कन्द, आव, चतुर्

महाभारत, अनुशासन पर्व
 महाभारत, आदि पर्व
 महाभारत, आरण्यक पर्व
 महाभारत, आश्वमेधिक पर्व
 महाभारत, उद्योग पर्व
 महाभारत, कर्ण पर्व
 महाभारत, द्रोण पर्व
 महाभारत, शल्य पर्व
 महाभारत, शान्ति पर्व
 महाभारत, सौप्तिक पर्व
 मार्कण्डेयपुराण
 रामायण, बाल काण्ड
 लिङ्गमहापुराण, पूर्वार्द्ध
 वामनमहापुराण
 वायुमहापुराण
 वाराहपुराण
 विष्णुमहापुराण
 शिवमहापुराण, उमासंहिता
 शिवमहापुराण, कैलाससंहिता
 शिवमहापुराण, कोटिरुद्रसंहिता
 शिवमहापुराण, रुद्रसंहिता, कुमार खण्ड
 शिवमहापुराण, रुद्रसंहिता, पार्वती खण्ड
 शिवमहापुराण, रुद्रसंहिता, युद्ध खण्ड
 शिवमहापुराण, रुद्रसंहिता, सती खण्ड
 शिवमहापुराण, रुद्रसंहिता, सृष्टि खण्ड
 शिवमहापुराण, वायवीय संहिता, उत्तर भाग
 शिवमहापुराण, वायवीय संहिता, पूर्व भाग
 शिवमहापुराण, विद्येश्वरसंहिता
 शिवमहापुराण, शतरुद्रसंहिता
 स्कन्दमहापुराण, आवन्त्य खण्ड,
 अवन्त्य क्षेत्र माहात्म्य
 स्कन्दमहापुराण, आवन्त्य खण्ड,
 चतुरशीति लिङ्ग माहात्म्य

स्कन्द, आव, रेवा
स्कन्द, काशी, उत्तर
स्कन्द, काशी, पूर्व
स्कन्द, नागर
स्कन्द, प्रभा, अर्बुद
स्कन्द, प्रभा, प्रभा

स्कन्द, प्रभा, वस्त्र

स्कन्द, ब्राह्म, धर्म
स्कन्द, ब्राह्म, सेतु
स्कन्द, माहे, अरुण, उत्तर

स्कन्द, माहे, अरुण, पूर्व

स्कन्द, माहे, केदार
स्कन्द, माहे, कौमारिका

स्कन्द, वैष्णव, कार्तिक

स्कन्द, वैष्णव, पुरुष

स्कन्द, वैष्णव, बदरिका

स्कन्द, वैष्णव, वेङ्कट

स्कन्द, वैष्णव, वैशाख

हरि, विष्णु

स्कन्दमहापुराण, आवन्त्य खण्ड, रेवा खण्ड
स्कन्दमहापुराण, काशी खण्ड, उत्तरार्द्ध
स्कन्दमहापुराण, काशी खण्ड, पूर्वार्द्ध
स्कन्दमहापुराण, नागर खण्ड
स्कन्दमहापुराण, प्रभास खण्ड, अर्बुद खण्ड
स्कन्दमहापुराण, प्रभास खण्ड,
प्रभास क्षेत्र माहात्म्य

स्कन्दमहापुराण, प्रभास खण्ड, वस्त्रापथ
(गिरनार) क्षेत्र माहात्म्य

स्कन्दमहापुराण, ब्राह्म खण्ड, धर्मारण्य खण्ड
स्कन्दमहापुराण, ब्राह्म खण्ड, सेतु माहात्म्य
स्कन्दमहापुराण, माहेश्वरखण्ड,
अरुणाचल माहात्म्य, उत्तरार्ध

स्कन्दमहापुराण, माहेश्वरखण्ड, अरुणाचल
माहात्म्य, पूर्वार्द्ध

स्कन्दमहापुराण, माहेश्वरखण्ड, केदार खण्ड
स्कन्दमहापुराण, माहेश्वरखण्ड, कौमारिका
खण्ड

स्कन्दमहापुराण, वैष्णवखण्ड, कार्तिक मास
माहात्म्य

स्कन्दमहापुराण, वैष्णवखण्ड, पुरुषोत्तम क्षेत्र
माहात्म्य

स्कन्दमहापुराण, वैष्णवखण्ड, बदरिकाश्रम
माहात्म्य

स्कन्दमहापुराण, वैष्णवखण्ड,
वेङ्कटाचल माहात्म्य

स्कन्दमहापुराण, वैष्णवखण्ड,
वैशाख मास माहात्म्य

हरिवंशपुराण, विष्णु पर्व



निवेदन

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च।

वंशानुचरितं चैव पुराणं पञ्चलक्षणम्॥

पुराणों के प्रतिपाद्य के सम्बन्ध में पुराणों में जहां सृष्टि एवं प्रलय के उपरान्त पुनः सृष्टि आदि विषयों के अतिरिक्त मनुओं, ऋषियों, राजाओं प्रभृति की वंशावली के साथ देवों के विवरण को भी एक सामान्य विषय—वस्तु स्वीकार किया गया है वहीं दूसरी ओर शैव पुराण, वैष्णव पुराण, ब्राह्म पुराण आदि कहकर पुराणों का प्रमुख वर्ण्य — विषय देवों को ही माना गया है। अतः यह स्पष्ट होता है कि देव, देवियों का वर्णन पुराणों का एक सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विषय है और तभी पुराणों में पञ्चदेव—उपासना को महत्त्व प्राप्त हुआ है। इसी कारण आज से पांच वर्ष पूर्व आपके हाथों में मैंने 'पार्वती (पुराणों के सन्दर्भ में)' सौपी थी और आज प्रस्तुत है 'देवादिदेव महादेव शिव (पुराणों के सन्दर्भ में)'। मेरी 'महादेव शिव' विषयक प्रस्तुत योजना के विषय में जानकर परिमल पब्लिकेशन्स के संस्थापक, आज गोलोकवासी डा० के० एल० जोशी जी ने अपनी रोग-शय्या से ही शिव, विष्णु, कृष्ण आदि विषयक एक पूरी मृंखला प्रस्तुत करने के लिए मुझे टेलीफोन के माध्यम से ही प्रेरित तथा उत्साहित किया था। अन्य विविध कार्यों में स्वयं को मैंने उलझाया हुआ है अतः आज मृंखला की प्रथम कड़ी ही आपके हाथों सौंप रही हूँ।

'देवादिदेव महादेव शिव' में मेरा अपना कुछ नहीं है। देवादिदेव के सम्बन्ध में रामायण, महाभारत तथा पुराणों से उपलब्ध सामग्री का जैसा अर्थ मुझे बुद्धिगम्य तथा हृदयङ्गम हुआ, उसी का पूर्ण निष्ठा तथा परिश्रम से प्रस्तुतीकरण है प्रस्तुत पुस्तक।

पुराणों में शिव के दो रूप परिलक्षित होते हैं — प्रथम उनका आध्यात्मिक अथवा दार्शनिक रूप तथा दूसरा उनका पारिवारिक तथा देववृन्द के अधीश्वर का रूप। आध्यात्मिक वर्णन के अनुसार अज, अनादि, अनन्त शिव का उद्भव अज्ञेय है अतः वे स्वयम्भू हैं। सर्वत्र व्याप्त शिव दिग्वास हैं। सत्त्व, रजः तथा तमः रूपी शूल को धारण करने वाले वे शूली हैं तो काम, क्रोध, मद, लोभ आदि रूपी सर्पों के आभूषणधारी वे सर्पभूषण हैं। वे घोर हैं तभी रुद्र कहलाते हैं, अघोर हैं अतः वे शिव हैं। वे प्राण, अपान हैं तो वे ही काल हैं, मृत्यु हैं। सोमनिःस्यन्दी चन्द्र से शोभित वे

चन्द्रमौली हैं तो हलाहल विष को कण्ठ में धारण कर विश्व की रक्षा करने वाले वे नीलकण्ठ हैं। समस्त देवों में महीनय हैं, महान् विषय के अधिकारी हैं, महत् विश्व के पालक हैं अतः महेश्वर हैं, महादेव हैं। वे ही प्रणवरूप ओम् हैं, निर्गुण ब्रह्म हैं।

उनका दूसरा रूप है, लीलापुरुष शिव का जो नाना रूप धारण कर विविध संवेदनाओं को व्यक्त करते हैं। सती के दग्ध होने पर जहां दक्ष-यज्ञ का विध्वंस करते हैं वहीं प्रेमाद्रि चित्त से सती की अर्धदग्ध देह को कन्धे पर उठाकर वियोगी शिव यत्र-तत्र-सर्वत्र पर्यटन करते हैं, परिणामतः सती पीठों की स्थापना होती है। लीलाधर वे ही कालान्तर में नाना छल करके मेना तथा हिमालय को छकाते हैं तो पार्वती-वल्लभ बनकर विविध लीलाओं को रूपायित करते हैं, कार्तिकेय के जनक बनते हैं तो गणेश के साथ भयावह युद्ध करने के उपरान्त गजानन बनाकर गणेश को देवताओं का अग्रपूज्य वे ही बनाते हैं।

देवादिदेव वे विष्णु के आराध्य बनकर उनके मुख से सहस्रनाम कहलवाते हैं, उनके एक नेत्र-कमल की भेंट ग्रहण करते हैं तो स्वयं विष्णु की आराधना करते हैं, उनका ध्यान करते हैं। महादेव शिव ब्रह्मा के गर्वित सिर का छेदन करके ब्रह्महत्या से प्रताड़ित होते हैं तो स्वयं ब्रह्मापुत्र बनकर रुद्र रूप में प्रकट होते हैं। रावण को दस सिरों का वर देते हैं तो द्रौपदी को पञ्चपतियों का वर भी वे ही देते हैं।

वस्तुतः शिव का इतिवृत्त बहुत व्यापक है, विस्तृत है, विविध है, गूढ़ भी है और रहस्यात्मक भी। विविध आख्यानों, उपाख्यानों के साथ उनके चार सहस्रनाम, शतनाम, अष्टोत्तरशतनाम; नामावली, स्तुतियां, स्तोत्र, कवच आदि भी पुराणों में यत्र-तत्र उपलब्ध हैं। उन सभी को संकलित किया गया है। विविध कल्पों में अज शिव विभिन्न अभिधानों से अवतरित होते हैं, उनका भी समायोजन पुस्तक में हुआ है।

शिव ही एक मात्र देव हैं जिनका लिङ्ग भी उतना ही पूज्य है, जितने स्वयं शिव हैं। द्वादश ज्योतिर्लिङ्गों के विशद परिचय के साथ उज्जयिनी के चौरासी लिङ्गों, काशी के अनेक लिङ्गों तथा अन्यत्र भी उपलब्ध प्रमुख लिङ्गों की नामावली का संग्रह भी पुस्तक में उपलब्ध है।

शिव को परिचित करवाया जाए तो उनका शिवलोक, उनके गण आदि पर प्रकाश डालना भी अपेक्षित होता है। प्रारम्भ में उनका भी परिचय प्रस्तुत किया गया है।

अपनी समस्त अक्षमताओं तथा सीमाओं से अवगत मेरी सम्पूर्ण निष्ठा तथा परिश्रम का परिणाम है 'देवादिदेव महादेव शिव (पुराणों के सन्दर्भ में)'। यदि मेरा यह विनम्र प्रयास स्वतः आलोकित महादेव, महेश्वर शिव के महीनय व्यक्तित्व को स्वल्प मात्रा में भी परिचित करवा सके तो मैं समझूंगी मेरी निष्ठा फलीभूत हुई, मेरा परिश्रम सार्थक हुआ।

सिग्ना बैनर्जी

देवादिदेव महादेव शिव

वैदिक देवताओं में देवादिदेव महादेव शिव महत्त्वपूर्ण पद के अधिकारी हैं। वैदिक रुद्र की तुलना में पौराणिक शिव अधिक महिमामण्डित प्रतीत होते हैं क्योंकि जहां एक ओर उनके आध्यात्मिक अथवा दार्शनिक रूप को पूर्ण विस्तार तथा स्पष्टता से परिचित करवाया गया है, वहीं उनका सती के साथ सम्बन्ध, दक्षयज्ञ-विध्वंस, पार्वतीवल्लभ, कैलासवासी, नागभूषण, चन्द्रमौलि, गङ्गाधर, नीलकण्ठ और कार्तिकेय तथा गणेश के जनक आदि पारिवारिक रूप भी उल्लेखनीय हैं। तात्त्विक दृष्टि से ये दोनों रूप एक हैं, अभिन्न हैं तथापि दोनों रूपों का परिचय ही महादेव शिव को जानने के लिए अपेक्षित है।

पौराणिक आख्यानों के माध्यम से परमात्मा शिव के चार सहस्रनामों, एकाधिक शतनामों तथा अनेकों स्तोत्रों और स्तुतियों में अनेक नूतन-नूतन अभिधानों को परिगणित किया गया है जो सभी सामिप्रायः तथा सार्थक हैं। उनमें से अनेकों अभिधान परमात्मा शिव के आध्यात्मिक रूप को व्यक्त करने में अलम् हैं।

परमात्मा

स्कन्द पुराण के अनुसार आध्यात्मिक दृष्टि से शिव जगत् के आदि हैं, देवादिदेव हैं। स्वयम्भू शिव का उद्भव अज्ञेय है। समस्त जगत् ही उनका रूप है अतः वे दिग्वास हैं। गुण त्रय — सत्त्व, रजः तथा तमः रूप शूल को धारण करने वाले वे शूली हैं, शूलपाणि हैं। वे भूतगणाधिप, भूतपति इस कारण हैं क्योंकि बद्ध तथा सर्वथा मुक्त भूतों के वे अधिपति हैं। समस्त संसाररूपी श्मशान में उनकी व्याप्ति होने के कारण वे श्मशाननिलय हैं। धर्मरूपी वृष पर आरूढ शिव वृषी हैं। क्रोध, मोह, लोभ आदि रूपी सर्पों को वशीभूत कर उन्हें वे धारण करते हैं अतः वे सर्पभूषण हैं। वेदत्रयी उनके त्रिनेत्र हैं। भूति (समृद्धि) से सम्पन्न वे भूतिभृत् कहलाते हैं तो नानाविध कर्मयोग को जटारूप में धारण करने वाले वे जटी हैं। उनकी देह त्रिपुर तथा त्रिगुण है, ऐसे त्रिपुर को धारण करने वाले वे ही त्रिपुरारि भी हैं और त्रिपुरघ्न भी। (स्कन्द, माहे, कौमा, 25/70-76)

देवादिदेव महादेव शिव

अग्नि, स्थाणु, एकाक्ष, त्र्यम्बक, विश्वरूप परमेश्वर भगवान् ही शिव हैं। वेदज्ञ उनकी दो मूर्तियों को स्वीकार करते हैं— घोरा और शिवा। उग्र और घोरमूर्ति ही घोरा है जो अग्नि, विद्युत् और सूर्य है। शिवा मूर्ति है सौम्यरूप धर्म, जल और चन्द्र। उन शिव के शरीर का अर्धभाग है अग्नि। उनकी शिवमूर्ति ब्रह्मचर्य का अवलम्बन करती है तो प्रलयकाल में घोरामूर्ति जगत् का संहार करती है। वे ही अपने ऐश्वर्य एवम् महत्त्व के कारण महेश्वर हैं। तीक्ष्ण, उग्र तथा प्रतापी वे ही प्रलयाग्नि रूप में मांस, मज्जा, शोणित आदि को ग्रहण करते हैं और तभी रुद्र कहलाते हैं। समस्त देवों में महीनीय होने के कारण, महान् विषय के अधिकारी तथा महत् विश्व का पालक होने के कारण वे ही महादेव हैं। ऊर्ध्व में स्थित होकर जीवों के प्राणों का दहन करते हैं, वे ही प्राणियों की उत्पत्ति तथा स्थिति के हेतुभूत हैं, स्थिर लिङ्गरूप हैं अतः स्थाणु हैं। उनको बहुरूप इसलिए कहा जाता है क्योंकि वे स्थावर, जङ्गम, भूत, भविष्यत् आदि भेद से अनेक रूप हैं। धूम्रवर्णी जटाधारी वे धूर्जटि हैं तो समस्त देवगण के आश्रयभूत वे विश्वरूप हैं। उनके नेत्र तेजपुञ्ज हैं, असीमित दृष्टिशक्तिसम्पन्न वे सहस्राक्ष, अयुताक्ष अथवा सर्वतोक्षिमय भी कहलाते हैं। पशुओं के अधिपति पशुपति वे ही ब्रह्मचर्यरत होकर शिवलिङ्ग की आराधना करने वालों पर प्रसन्न होते हैं, प्राणियों के शरीर में रहते हैं। प्राण, अपान आदि कहलाते हैं तो वे ही संहाररूप मृत्यु हैं। आदिपुरुष वे ही मुखाग्नि से वडवानल को उत्पन्न करते हैं। ऐसे परमात्मा, परम ब्रह्म वे सदा सभी की शिव (कल्याण) कामना करते हैं अतः शिव हैं। (महा, अनु, 146/1-29)

शिव एक अभिधान मात्र नहीं वरन् उससे बहुत अधिक है क्योंकि 'शिव-शिव' जप करता हुआ जो मानव देहत्याग करता है वह कोटि जन्मों के सञ्चित पापों से मुक्त होकर मोक्ष का अधिकारी बनता है। शिव कल्याण का वाचक है और कल्याण शब्द मोक्ष का वाचक है। शिव के नाममात्र का उच्चारण करने से मोक्ष की प्राप्ति होती है अतः शिव देव ही नहीं, महादेव हैं। शोक सागर में निमज्जित व्यक्ति शिव नामोच्चारण से कल्याण का भागी बनता है। शिव नाम जिसकी वाणी में वर्तमान रहता है उसे कोई पाप स्पर्श नहीं कर सकता है। (ब्रह्मवै, ब्रह्म, 6/49-53)

ऐसे शिव उत्पन्न नहीं होते, वे तीनों कालों के जनक हैं। वे शरण्य, शाश्वत, परमेश्वर हैं। समस्त देवता भी उनकी पूजा करके उनके पद को प्राप्त कर लेते हैं अन्यथा वे वेदों द्वारा भी लभ्य नहीं हैं। शिव अमङ्गलशील होने पर भी मङ्गलायतन हैं, अकिञ्चन होते हुए भी सर्वप्रदाता हैं। (स्कन्द, माहे, कौमा, 23/55-58)

शिव का गोत्र तथा कुल परम नाद है। नाद में शम्भु प्रतिष्ठित हैं और शम्भु में नाद अतः नादमय शम्भु नाद से प्राप्त होते हैं। इनके कुल और गोत्र को ब्रह्मा आदि भी

देवादिदेव महादेव शिव

नहीं जानते हैं। शिव अरूप, विरूपाक्ष, अकुलीन तथा गोत्रहीन हैं। (वही, माहे, केदार, 25/78-79) सम्पूर्ण जगत् उनका क्रीड़ाक्षेत्र तथा सम्पूर्ण विश्व उनका आज्ञानुवर्ती है अतः वे विश्वेश कहलाते हैं। शिव सभी के शासक हैं किन्तु उनका शास्ता कोई नहीं है। (वही, काशी, पूर्व, 23/23-25) वे परम अमूर्त के मूर्त रूप हैं। प्राचीन और अर्वाचीन—सभी विद्वान् उन्हें ईश्वर मानते हैं। (वही, काशी, पूर्व, 26/21) शिव ही नारायण, ब्रह्मा, शेषनाग, चन्द्रमा, हव्यवाह और सूर्य हैं और पार्वती ही लक्ष्मी, सरस्वती, वारुणी, रोहिणी, स्वाहा और सुवर्चला हैं। (वही, माहे, अरुणा, उत्तर, 21/12-13)

उन शिव की स्तुति ब्रह्मवादी तथा विद्वान् भी करते हैं। शिव सर्वलोकसाक्षी, कालात्मा, तीव्ररश्मि सूर्य हैं तो दयालु, कपाली, नीलकण्ठ विलोहित भी हैं। (कूर्म, पूर्व, 15/14-15)

शिव सदसद्वरूप हैं तो सदसत्पति भी हैं। वस्तुतः शिव सत् भी हैं और असत् अर्थात् अस्तित्वहीन भी हैं। शिव के अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं है। वे ही सत् और असत् के पति (स्वामी) भी हैं। इसी भांति वे क्षराक्षर भी हैं तो विद्या और अविद्यारूप भी माने जाते हैं। आदिदेव महेश्वर धाता (सृष्टिकर्ता) हैं तो विधाता (धारणकर्ता) भी हैं। (लिङ्ग, पूर्व, 15/3-19)

शिव के चार रूप माने जाते हैं— कर्ता, क्रिया, कार्य और कारण। वे ही प्रमाता, प्रमाण, प्रमेय एवं प्रमिति हैं। शिव से पर-परमात्मा नहीं है और उनसे उत्पन्न पच्चीस तत्त्वों को उनसे उसी भांति अभिन्न माना जाता है जिस भांति ऊर्मिमालाएं जल से अभिन्न होती हैं। (वही, पूर्व, 16/20-27)

यद्यपि सामान्यतया शिव को समस्त भूतों, पिशाचों आदि का अधिपति माना जाता है (ब्रह्म, 4/4-6; वायु, 70/1-18) तथापि काम, क्रोध, भय, लोभ, मद, स्तब्धता तथा मात्सर्य जिनके अंश हैं (मह, अनु, 15/36) वे शिव समस्त कालों में ही पूजित हैं। ब्रह्मा कृत (सत्य) युग में पूज्य हैं, यज्ञ त्रेता में, विष्णु द्वापर में ही पूज्य माने जाते हैं क्योंकि उन्हें काल के तीन अंशमात्र स्वीकारा जाता है जबकि सभी कालों में पूज्य महाकाल, महेश्वर शिव चतुर्भूति होते हैं। वे अंश नहीं, अंशी हैं।' (वायु, 32/21-22)

ऐसे शिव को परम अज्ञानी लोग तामस कहते हैं जबकि वे शुद्ध सत्त्वरूप, निर्मल तथा वैष्णवों के अग्रणी हैं। शिव के साथ विष्णु सात्त्विक हैं, ब्रह्मा राजस और कृष्ण निर्गुण हैं। शिव के सात्त्विक होने पर भी एकादश रुद्रों को तमोगुणी माना जाता है। (ब्रह्मवै, ब्रह्म, 8/20-22) शिव पर मृत्यु प्रभाव नहीं डाल सकती है। सांप जिस भांति गरुड से दूर भागता है वैसे ही मृत्यु शिव के निकट नहीं जाती। (वही, ब्रह्म, 18/63-64)

देवादिदेव महादेव शिव

वस्तुतः परम ब्रह्म परमेश्वर की ही जब द्वितीय होने की इच्छा हुई थी तब वे सगुणरूप से शिव कहलाए। शिव ही पुरुष और स्त्री के मेद से दो प्रकार के हुए— पुरुष शिव हैं तथा स्त्रीरूपा शक्ति हैं। (शिव, कोटि, 22/2-4)

शिव के श्वास-प्रश्वास की संख्या निर्धारित नहीं है अतः वे अक्षय हैं। शिव का यह भी वैशिष्ट्य है कि वे गुणों से मुक्त हैं। विष्णु सतो गुणी, ब्रह्मा रजोगुणी, रुद्र तमोगुणी और शिव निर्गुण हैं। (शिव, रुद्र, सृष्टि, 10/24, 16/37-38) शिव के पूर्ण अंश रुद्र हैं, शिव ही विष्णु आदि सभी देवों की गति हैं, निर्द्वन्द्व और निर्विकारी हैं। (वही, रुद्र, सती, 1/3-4)

यह भी मान्यता है कि वेद के आदि में ओङ्कार रूप में शिव ही विद्यमान हैं। ओम् शिव का वाचक है। (वही, कैलास, 3/19-20) भिन्न-भिन्न मार्ग वाली अठारह विद्याओं के आदिकर्ता शिव हैं। जगत् के पति शिव ने जगत् की उत्पत्ति से पूर्व सनातन पुत्र ब्रह्मा को उत्पन्न किया। उन्होंने ब्रह्मा को सृष्टि करने की तथा विष्णु को पालन करने की शक्ति प्रदान की। अक्षर, कूटस्थ परमात्मा और अक्षर आत्मा महेश्वर शिव ही हैं। (वही, वाय, पूर्व, 1/27-30)

शिव ही आदि में संसार की रचना करते हैं, और अन्त में वे ही संहार करते हैं। उनके कार्य-कारण का नियम नहीं है किन्तु उन्हीं से सभी का नियम निर्धारित होता है। शर्व, भव, रुद्र, उग्र, भीम, पशुपति, ईशान और महादेव-शिव की ही आठ मूर्तियां हैं। अन्यतः ज्ञान, क्रिया और इच्छारूपिणी अपनी तीन मूर्तियों से वे विश्व को व्याप्त करके स्थित रहते हैं। शिव तथा शिवा के बिना इस चराचर जगत् का अस्तित्व ही नहीं है। (वही, वाय, उत्तर, 2/58-59, 3/18, 31, 37)

अन्यत्र उन्हीं शिव के विषय में यह विवरण उपलब्ध है कि प्रारम्भ में अर्धनारीश शिव ने अपने नारी-पुरुष के सम्मिलित रूप में से नारी और पुरुष को स्वेच्छा से अलग-अलग कर लिया। स्त्रीरूपी भाग सती हुई। शिव ने उन सती को सृष्टि के प्रयोजन से स्वयं को श्वेत और श्याम-दो भागों में विभक्त करने का निर्देश दिया। वह सती ही कालान्तर में ब्रह्मा की प्रार्थना पर दक्ष प्रजापति की पुत्री सती के रूप में उत्पन्न होकर शिव की पत्नी बनी। (लिङ्ग, पूर्व, 5/27-33)

यह भी मान्यता है कि शिव ने पूर्वकाल में तपस्या के लिए सती का निर्माण किया। वे अपने त्रिशूल से सदा उनकी रक्षा करते थे। वे ही सती कालान्तर में दक्षकन्या बनी। (शिव, रुद्र, सृष्टि, 16/34-35) यह सती पूर्व में शिव के अर्धाङ्ग में विराजित थी। सृष्टिकार्य को आगे बढ़ाने के लिए ब्रह्मा की प्रार्थना पर शिव ने उन्हें अपने अर्धाङ्ग से

देवादिदेव महादेव शिव

विलग किया था। उन शिवा अथवा सती अथवा शक्ति ने ब्रह्मा की प्रार्थना पर अपने श्रृंगल से अपने समान एक अन्य स्त्री का निर्माण किया और उन्हें ब्रह्मा का कार्य सम्पन्न करने का आदेश देकर स्वयं पुनः वे शिव के शरीर में प्रविष्ट हो गईं। वह द्वितीय सती ही दक्षकन्या हुई। (वही, शत, 3/6-30) स्पष्ट है कि नारी और पुरुष का सम्मिलित रूप अर्धनारीश शिव ही समस्त सृष्टि के मूल हैं। वे ही शिव हैं, वे ही शक्ति हैं। स्वयं शिव ने पार्वती को बताया था, 'शिव और शक्ति में भेद नहीं। तुम्हारे बिना मैं तथा मेरे बिना तुम नहीं हो।' (स्कन्द, प्रभा, प्रभा, 3/105-106)

शिव का कथन है, 'एक परम ब्रह्म कार्यभाव से पृथक् पृथक् रूप में अभिव्यक्त होते हैं। मुझ शिव में ही ब्रह्मा और विष्णु हैं अतः उन दोनों से द्वेष करने वाला मेरा द्वेष्य है। शिव, विष्णु और ब्रह्मा को एकरूप जानकर उनकी पूजा करनी चाहिए।' (वही, प्रभा, प्रभा, 105/72-75)

सैद्धान्तिक दृष्टि से यह भी माना जाता है कि महायोगी एवम् अविनाशी विष्णु ही भगवान् रुद्र हैं। संसार के मूल विष्णु को शिव से भिन्न मानने वाले अज्ञानी हैं। दोनों को ऐक्यभाव से देखने वाला ही मुक्तिगामी है। विष्णु जगत् की सृष्टि करते हैं और शिव द्रष्टा हैं। (कूर्म, पूर्व, 15/87-91) स्वयं शिव ने ही कहा है, 'जो श्रद्धालु अव्यक्त और आत्मस्वरूप विष्णु को शिव से पृथक् मानते हैं, वे मेरी पूजा करने पर भी मुझे प्रिय नहीं होते हैं।' (वही, पूर्व, 15/167-169)

इसी भाव को इस भांति भी प्रतिपादित किया जाता है कि शिव के प्रसाद से ब्रह्मा सृष्टि करते हैं और विष्णु पालन किन्तु सर्वव्यापी महेश्वर उदासीन की भांति विराजमान होकर संसार के सार का निरीक्षण करते हैं। स्वयं शिव विष्णु से कहते हैं, 'जो तुम्हारा मित्र है, वह मेरा मित्र है। जो तुम्हारा शत्रु है, वह मेरा भी शत्रु है। जहां तुम हो वहीं मैं भी हूँ। हम दोनों में कोई भेद नहीं।' (स्कन्द, प्रभा, वस्त्र, 8/17-19, 144) त्रिदेव के ऐक्य के सिद्धान्त को इस भांति भी प्रतिपादित किया गया है कि भगवान् शिव ने सृष्टि की रचना, उसका संरक्षण और संहार— तीनों कार्यों को सम्पन्न करने के लिए स्वयं को तीन रूपों — ब्रह्मा, विष्णु और शिव के रूप में विभाजित किया हुआ है। (लिङ्ग, पूर्व, 19/12)

इसी तथ्य को कूर्म पुराण में इस भांति विवेचित किया गया— 'महादेव शिव सम्पूर्ण जगत् की सृष्टि करते हैं, पालन करते हैं और स्वयं ही काल होकर उसका संहार भी करते हैं। शिव और विष्णु को दो न मान कर एक ही माना जाता है। शिव की ही द्वितीय मूर्ति विश्व की मूलकारण सनातनी वासुदेव विष्णु नाम की है। विष्णु शिव से उत्पन्न हुए

देवादिदेव महादेव शिव

और उन्हीं का परम शरीर हैं। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के समस्त पदार्थ शिव और विष्णु में ही ओत-प्रोत रहते हैं। यदि शिव सूर्य हैं तो विष्णु चन्द्र, शिव दिन हैं तो विष्णु रात्रि, शिव पुरुष हैं तो विष्णु अव्यक्त प्रकृति, विष्णु ज्ञान हैं तो शिव ज्ञाता, शिव ईश्वर हैं तो विष्णु माया। (कूर्म, पूर्व, 9/60-84)

दूसरे शब्दों में समस्त विश्व शिव के द्वारा ही क्रियाशील होता है। कालरूपी शिव समस्त जगत् को परिचालित करते हैं। शिव एक अंश से सम्पूर्ण जगत् की रचना करते हैं, एक अंश से पालन और एक अंश से संहार करते हैं। वस्तुतः शिव ही भगवान् ईश्वर, स्वयंज्योति, सनातन परमात्मा और परम ब्रह्म हैं। उनसे भिन्न कुछ भी नहीं है। (वही, उत्तर, 6/6-7, 51)

ऐसे परमात्मा, परम ब्रह्म शिव का विवेचन अन्यत्र कुछ पृथक् रूप से किया गया है। अतः शिव की पृष्ठभूमि को कूर्मपुराण के अनुसार भी जानना प्रासङ्गिक होगा। तदनुसार मरीचि आदि की सृष्टि करने के उपरान्त ब्रह्मा तप करने लगे तो उनके मुख से कालाग्निसम्भूत, त्रिशूलपाणि, त्रिलोचन ईशान आविर्भूत हुए। वे अर्धनारीश्वर, अतिभयङ्कर तथा दुर्लक्ष्य थे। भयभीत हो ब्रह्मा ने उनसे अपने को दो भागों में विभक्त करने का अनुरोध किया। तब उन अर्धनारीश्वर ने स्वयं को दो भागों में विभक्त किया—नारी और पुरुष। पुरुष भाग से एकादश रुद्र और नारी भाग से शाङ्करी, लक्ष्मी आदि शक्तियां आविर्भूत हुईं। शाङ्करी ने उन शक्तियों के द्वारा विश्व को व्याप्त कर लिया। (वही शाङ्करी शक्ति अनन्तर दक्षकन्या सती तथा हिमालयकन्या पार्वती बनी जिनको शिव ने ग्रहण किया था।) उन परमेश्वर शिव की शक्ति एक होने पर भी अनेक उपाधियों के योग से नाना रूपों में शिव के समीप क्रीड़ा करती हैं। वस्तुतः ईश्वर शिव का अपना कोई कार्य नहीं है। उनकी वह शक्ति ही समस्त कार्य सम्पन्न करती हैं। उसी शक्ति के शान्ति, विद्या, प्रतिष्ठा और निवृत्ति नामक चार रूप होने के कारण ईशान भी चतुर्व्यूह कहे जाते हैं। वह शिवा ही एकमात्र शक्ति तथा शिव शक्तिमान् हैं। यद्यपि उस शक्ति और शक्तिमान् में भेद कह दिया जाता है परन्तु परमार्थतः वे अभिन्न हैं। गिरिजा पार्वती ही वह शक्ति हैं तथा शिव शङ्कर हैं शक्तिमान्। शिव भोक्ता हैं, विश्वेश्वरी देवी भोग्या हैं। उन महेश्वर काल की शक्ति माया, जो सर्वगता तथा अनन्ता है, वह ही शिवा है और वह महेश्वर महाकाल हैं शिव। (कूर्म, पूर्व, 11/1-16, 12/1-40)

ब्रह्माण्ड पुराण के अनुसार प्राचीन काल में ललिता देवी ने तीन अण्डों का सर्जन किया था। उनमें से एक अण्डे में से सरस्वती के साथ शिव उत्पन्न हुए थे जबकि अन्य दो में से अम्बिका पार्वती तथा पुरुषोत्तम विष्णु का युग्म और लक्ष्मी तथा ब्रह्मा का युग्म उत्पन्न हुआ था। ललिता ने शिव के हाथों पार्वती को समर्पित किया और उन्हें

देवादिदेव महादेव शिव

संहार कार्य में नियुक्त किया। महादेवी ललिता का ध्यान करते हुए तभी से शिव पार्वती के साथ कैलास पर्वत पर रहने लगे। (ब्रह्माण्ड, मध्य, उप, 40/3-12)

ब्रह्मवैवर्त पुराण के अनुसार परमेश्वर शिव परम ब्रह्म श्रीकृष्ण के वाम पार्श्व से प्रकट हुए थे। शिव स्फटिक मणि के समान धवल, पञ्चमुखी, दिगम्बर, तप्तस्वर्ण सम कान्तिमान्, जटाधारी, मन्दस्मित युक्त, त्रिनेत्र, विधुशेखर, त्रिशूल, पट्टिश और जपमाला धारण किये हुए ही समक्ष आए थे। स्वयं सर्वसिद्धेश्वर, सिद्ध योगीन्द्रों के गुरु, मृत्यु के भी मृत्यु, वैष्णवों के शिरोमणि, ब्रह्मतेज से देदीप्यमान महादेव शिव ने करबद्ध अञ्जलि से श्रीकृष्ण की स्तुति की। उस समय शिव रोमाञ्चित हो रहे थे तथा उनकी वाणी गद्गद हो रही थी। श्रीकृष्ण ने उन्हें सादर रत्नमय सिंहासन पर बिठाया। (ब्रह्मवै, ब्रह्म, 3/18-27) इसी पुराण में अन्यत्र यह भी माना गया है कि श्रीकृष्ण ने दो रूप धारण किए। उनका आधा भाग शिव हुआ और आधे से वे गोपपति कृष्ण ही रहे। (वही, प्रकृति, 2/84)

श्रीकृष्ण ने शिव को सिंहवाहिनी देवी को ग्रहण करने का अनुरोध किया किन्तु शिव ने विनीतभाव से कह दिया कि उन्हें गृहिणी की इच्छा नहीं है। इसके विपरीत उन्होंने कहा, 'मुझे मेरा अभीष्ट विषय आपकी भक्ति प्रदान कीजिए। आपकी सेवा तथा नाम-जप से मुझे तृप्ति होती है।' कृष्ण ने प्रसन्न होकर सौ करोड़ वर्षों तक निरन्तर अपनी सेवा करने का उन्हें वर दिया। (वही, ब्रह्म, 6/4-11, 26) तब कृष्ण ने देवी से सामयिक रूप से गोलोक में रहने को कहा और उन्हें आश्वासन दिया कि उसके उपरान्त वे शिव की सेवा करेंगी। कृष्ण ने यह भविष्यवाणी की कि सत्ययुग में वे दक्ष की कन्या होकर, शिव की भार्या बनेंगी और तदुपरान्त हिमालय की पुत्री पार्वती होकर शिवभार्या बनेंगी। (वही, ब्रह्म, 6/55-58)

वस्तुतः परमेश्वर, स्वयंज्योति यूं जो अजन्मा हैं किन्तु उनके आविर्भाव के विषय में विविध मान्यताएं हैं। इस विषय में प्रथम मान्यता के अनुसार मूलतः एक ही तत्त्व होने पर भी तीन रूपों में व्यक्त शिव, विष्णु, और ब्रह्मा की बाह्य लीला विविध है। उस पर किञ्चित् दृष्टिपात करना समीचीन होगा— शिव तथा विष्णु में पारस्परिक प्रीति, भक्ति तथा आदर का भाव सर्वविदित होने पर भी उनमें एक बार विरोध भी पनप गया था। हुआ यह था कि एक समय शिव एवं विष्णु के बलाबल के प्रति कौतूहली देवताओं ने ब्रह्मा से जिज्ञासा व्यक्त की कि उन दोनों में अधिक बलशाली कौन है। इस पर ब्रह्मा ने प्रयासपूर्वक उन दोनों में विरोध उत्पन्न कर दिया। परिणामस्वरूप शिव तथा विष्णु के मध्य भयावह युद्ध प्रारम्भ हुआ। शीघ्र ही विष्णु ने भयङ्कर हुङ्कार से शिव के धनुष को शिथिल एवं शिव को स्तम्भित कर दिया। भयभीत देवों ने दोनों को ही शान्त होने को

देवादिदेव महादेव शिव

कहा। तब जाकर उनका विरोध उपशमित हुआ। (राम, बाल, 75/14-19)

इसी भांति अन्य एक समय विष्णु के भक्त स्वर्ग और मर्त्य में उपद्रव करने लगे। ब्रह्मा कैलास पर्वत पर गए और शिव से लोकरक्षा की प्रार्थना की। भक्तवत्सल शिव वृषभरूप धारण कर उपद्रवियों को शान्त करने के लिए उनके समक्ष गए तथा सींगों से उन पर प्रहार करने लगे। उस समय पाताल के विवर से विष्णु अपने भक्तों की रक्षा करने का निश्चय करके वृषभ के समक्ष आए किन्तु क्रोधावेश में शिव उन्हें जान न पाए तथा उन्हें भी सींगों से प्रताड़ित करने लगे। निरभिमानी विष्णु ने शिव को वृषभरूप में तुरन्त पहचान लिया और उनसे क्षमायाचना करने लगे। शिव ने तब मुनियों की रक्षा के लिए विष्णु को चक्र प्रदान किया और स्वयं कैलास लौट गए। (शिव, शत, 22/48-55, 23/3-36)

दूसरी ओर स्वयं परमेश्वर शिव का विष्णु के प्रति आदर-भाव का ज्ञान प्रस्तुत विवरण से हो जाता है— एक बार स्वयं देवी पार्वती ने शिव से कहा, 'आप अजन्मा हैं अतः आपके माता, पिता बन्धु बान्धव-नहीं हैं। मैं आपसे श्रेष्ठ किसी को नहीं जानती तो भी आप भक्तिपूर्वक जप करते हैं, ध्यान करते हैं। आपका जप्य, आपका ध्येय कौन है?' इस पर शिव ने कहा, 'मैं नित्य विष्णु के सहस्र नामों के सार का ध्यान करता रहता हूँ। वह सार है सनातन ब्रह्मरूप प्रणव। विशेषकर चातुर्मास्य में वह नाम अभीष्ट पदार्थ तथा ब्रह्म पद को प्रदान करता है।' (स्कन्द, नागर, 256/16-29)

शिव का विष्णु और ब्रह्मा के साथ सम्बन्ध अत्यधिक अद्भुत है। एक ओर शिव के गले में एक सहस्र नारायणों और दस सहस्र ब्रह्माओं की मुण्डमाला विराजित रहती है। अनादि निधन शिव प्रत्येक कल्प में पृथक्-पृथक् ब्रह्मा और विष्णु की सृष्टि करते हैं। दूसरी ओर शिव के वाम पक्ष में विष्णु और दक्षिण पक्ष में ब्रह्मा रहते हैं। सर्वदेवमय शिव के जठर में चारों वेद एवं हृदय में शाश्वत ब्रह्म विराजित रहते हैं। (वही, प्रभा, प्रभा, 9/7-11) उन तीनों की कालावधि के सम्बन्ध में भी स्मरणीय है कि ब्रह्मा के एक वर्ष विष्णु का एक दिन माना तथा विष्णु के एक वर्ष की अवधि शिव का एक दिन माना जाता है। (वही, नागर, 194/25)

शिव ने ब्रह्मा और विष्णु को अपने एक-एक वक्त्र प्रदान किए थे। मान्यता है कि पञ्चवक्त्र शिव पूर्व में सप्तवक्त्र थे। उन्होंने अज नामक अपना षष्ठ वक्त्र ब्रह्मा को और पिबु नामक सप्तम वक्त्र विष्णु को प्रदान किया था। (वही, प्रभा, प्रभा, 59/5-7)

ब्रह्मा का भी शिव के प्रति अत्यधिक आदर-भाव है। एक बार ब्रह्मा ने शिव की स्तुति करते हुए कहा था, 'मैं आपके विषय में जानता हूँ कि आप सम्पूर्ण जगत् के

देवादिदेव महादेव शिव

स्वामी हैं। विश्व की योनि शक्ति (प्रकृति) और उसके बीज शिव (पुरुष) से परे जो एक परब्रह्म है, वह आप ही हैं। आपने ही धर्म और अर्थ की प्राप्ति कराने वाले वेदों की रक्षा के निमित्त यज्ञ को प्रकट किया है, वर्णाश्रम की मर्यादाएं बांधी हैं। आप सभी के मूल हैं।' (भाग, 4/6/42-50)

इसी भांति ब्रह्महत्या से ग्रस्त शिव का शरीर जब कृष्णवर्ण का हो गया, उनके शरीर से दुर्गन्ध आने लगी एवम् उनके आभूषण लोहे के हो गए तो वे विष्णु की शरण में गए और ब्रह्महत्या से मुक्ति का उपाय पूछा। विष्णु ने उन्हें बताया कि ब्रह्महत्या सर्वाधिक भयङ्कर पाप है अतः उसकी कभी भावना भी नहीं करनी चाहिए। विष्णु के निर्देश पर ही शिव ने तीनों कालों में शरीर पर भस्म का लेप लगाया, शिखा रखी, हाथों तथा कानों में अस्थि धारण की और उस महती विपदा से मुक्त हुए। (स्कन्द, प्रभा, प्रभा, 14/155-160)

दूसरी ओर उन्हीं विष्णु ने एक बार तीनों लोकों में प्रख्यात सुवर्णाक्ष तीर्थ में जाकर शिव को प्रसन्न करने के लिए कठोर तप किया था। उससे प्रसन्न होकर शिव ने विष्णु को देवदुर्लभ अनेक वर प्रदान किए थे और यह भी कहा था, 'ब्रह्माण्ड में तुम हमारे प्रिय होकर कृष्ण नाम से अवतरित होओगे। इसमें कोई सन्देह नहीं कि समस्त जगत् में तुम्हारी ही प्रधानता होगी।' (महा, आर, 82/16-18)

स्कन्द पुराण के अनुसार एक बार शिव ने विष्णु की समता प्राप्त करने के लिए वायुमात्र का भक्षण करते हुए कठोर तप किया। कपोत के समान सूक्ष्म हुए शिव को विष्णु ने ऐश्वर्य प्रदान किया जिससे शिव पूजा तथा सम्मान में कृष्ण के समकक्ष बन गए। (स्कन्द, माहे, केदार, 13/4-11) दूसरी ओर विष्णु ने अन्यों द्वारा अप्रवेश्य बिल में प्रवेश कर बिल्व (बेल) का फल लेकर शिव का आवाहन, स्तवन आदि किया। शिव के प्रत्यक्ष होने पर विष्णु ने उनसे असुरों का संहार करने का अनुरोध किया। शिव से वर प्राप्त करके शिव को वहां बिल्वेश नाम से प्रतिष्ठित तथा प्रसिद्ध करके विष्णु द्वारका लौट गए। (वही, माहे, केदार, 13/20-31)

इसके विपरीत शिव को अपना द्वितीय तनु मानने वाले विष्णु भगवान् ने मार्कण्डेय ऋषि को आदेश दिया था कि विष्णु पुरुषोत्तम क्षेत्र में जिस तीर्थ की रचना करेंगे उसके तट पर मार्कण्डेय ऋषि शिव की स्थापना तथा आराधना करें जिससे विष्णु की कृपा से वे मृत्यु को भी विजित कर लेंगे। (वही, वैष्णव, पुरुषोत्तम, 3/47-48)

इसी सन्दर्भ में यह भी उल्लेखनीय है कि जब रुद्राणी गौरी ने स्वयं को आठ रूपों में विभाजित किया तो शिव ने भी स्वयं को आठ भागों में विभक्त कर परमेश्वर भगवान्

देवादिदेव महादेव शिव

विष्णु की आराधना की तथा विष्णु से वर मांगा कि उन दोनों का सह-अवस्थान हो। तब विष्णु ने स्वयं को मध्य भाग में रखकर चारों ओर शिव की आठ मूर्तियों—कपालमोचन, क्षेत्रपाल, यमेश्वर, मार्कण्डेय, ईशान, बिल्वेश, नीलकण्ठ तथा वटेश को स्थापित किया। उन सभी का दर्शन, स्पर्श एवं पूजन करने वाला मुक्ति को प्राप्त करता है। (वही, वैष्णव, पुरुषोत्तम, 4/47-53)

शिव के साथ ब्रह्मा और विष्णु के पारस्परिक सम्बन्ध को व्यक्त करता यह आख्यान द्रष्टव्य है— एक बार नैमिषारण्य में देवताओं के मन में यह जिज्ञासा उत्पन्न हुई कि त्रिदेव में कौन श्रेष्ठ है। अपनी जिज्ञासा के निराकरण के लिए वे सभी कैलाश पर्वत गए तो उन्होंने सुना शिव पार्वती से कह रहे थे, 'विष्णु तथा ब्रह्मा मेरे पूजनीय हैं। विष्णु की प्रसन्नता के लिए मैं एकादशी को विष्णु मन्दिर में जागरण तथा नृत्य करता हूँ।' इसके उपरान्त वे मुनिगण ब्रह्मलोक गए तो उस समय ब्रह्मा शिव एवं विष्णु की स्तुति में निरत थे। जब वे लोग क्षीरसागर पहुंचे तो विष्णु को शिव और ब्रह्मा की स्तुति करते पाया। (स्कन्द, माहे, कौमा, 41/8-12)

इन समस्त उद्धरणों से यह तो स्पष्ट हो जाता है कि परमात्मा शिव मूलरूप से एक ही परम शक्ति हैं जो क्रिया भेद से विभिन्न अभिधानों तथा रूपों में प्रकट हुई हैं।

शिव से सम्बन्धित कतिपय परिचायक विषयों यथा शिव का बाह्यरूप, उनका लोक, उनके गण, उनसे सम्बन्धित व्रत आदि को देखना उचित होगा।

बाह्यरूप

परमात्मा शिव बाह्यतः कोटि सूर्यों के समान प्रभामण्डित हैं। वे महाद्युति तथा सुन्दर जठर वाले हैं। उनकी ग्रीवा कम्बु के समान है। नाना भूषणभूषित, पिनाकधारी, सर्पोपवीती, मृदङ्ग तथा मेघ के समान गर्जन करने वाले वे वस्तुतः शिवरूप हैं, कल्याण रूप हैं। (ब्रह्माण्ड, मध्य, अनु, 26/51-56)

शिव चतुर्मुख हैं किन्तु वे प्रारम्भ से ही चतुर्मुख नहीं थे अपितु एक विशेष परिस्थिति में ही उनके चार मुख हुए। हुआ यह कि ब्रह्मा के आदेश से विश्वकर्मा ने अतुलनीय सुन्दरी तिलोत्तमा का निर्माण किया तो उसने जब शिव की परिक्रमा की तो उस अतुलनीया सुन्दरी नारी को प्रत्येक दिशा में देखने को व्यग्र शिव का दक्षिण, पश्चिम और उत्तर दिशा में नयनों से सुशोभित एक-एक मुख निकल आया था जिससे शिव चतुर्मुख हो गए। (महा, आदि, 203/20-26) यह भी माना जाता है कि कैलास में जब तिलोत्तमा शिव का दर्शन करने आई तब शिव पार्वती के साथ बैठे थे। सौन्दर्यरसिक शिव अपनी परिक्रमा करती तिलोत्तमा को पार्वती के भय से सिर मोड़कर देख नहीं

देवादिदेव महादेव शिव

सकते थे अतः उन्होंने प्रत्येक दिशा में अपना एक-एक सिर ही उत्पन्न कर लिया था और चतुर्मुखी बन गए। नारद ने जब पार्वती से इस रहस्य को उद्घाटित किया तो पार्वती ने तिलोत्तमा को कुरूप होने का शाप दे डाला और शिव के समस्त नेत्रों को अपनी हथेलियों से ढक दिया। शिव के नेत्र बन्द होते ही ब्रह्माण्ड में प्रलय आने लगा। देवों और मुनियों की प्रार्थना पर भी पार्वती ने जब शिव के नेत्र उन्मुक्त नहीं किए तो शिव ने लोककल्याण की भावना से अपने ललाट पर तृतीय नेत्र का निर्माण कर लिया। देवों ने इस कारण त्रिनेत्रधारी शिव को त्र्यम्बक नाम से सम्बोधित किया। (स्कन्द, नागर, 153/4-28)

चतुर्मुखी शिव पञ्चमुखी भी माने जाते हैं। शिव के पञ्चमुखी तथा त्रिनेत्री होने के सम्बन्ध में आख्यान इस प्रकार का भी है— एक बार शिव ने साठ सहस्र युगों तक तप करके सानन्द मन से भगवान् कृष्ण का ध्यान किया। जब किशोरवय श्यामसुन्दर कृष्ण उनके समक्ष प्रकट हुए तो उनके दर्शन से शिव को तृप्ति नहीं हुई। एकटक अपने आराध्य को देख कर प्रेमविह्वल होकर रोदन करते हुए शिव मन ही मन सोचने लगे कि चतुर्मुखी ब्रह्मा अधिक सौभाग्यशाली हैं जो चार मुखों से भगवान् की स्तुति करते हैं और त्रिनेत्र से उनके दर्शन करते हैं। भावातिरेक से शिव ने यह बात चार बार सोची तो अन्तर्यामी भगवान् कृष्ण ने शिव को चार मुख और प्रदान कर दिए। उनका प्रत्येक मुख तीन-तीन नेत्रों से शोभित था। इस भांति कृष्ण के अनुग्रह से शिव पञ्चमुख तथा त्रिनेत्र हो गए। (ब्रह्मवै, श्रीकृष्ण, पूर्व, 36/79-86)

शिव के त्रिनेत्र होने के पीछे एक अन्य वृत्तान्त भी उपलब्ध है। तदनुसार एक दिन पार्वती ने प्रेमविभोर होकर शिव के दोनों नेत्रों को अपनी हथेलियों से बन्द कर दिया। इस कारण समस्त ब्रह्माण्ड सूर्य चन्द्र के अभाव में अन्धकारमय हो गया। तभी शिव के ललाट से प्रदीप्त ज्वाला निकली और उसी ज्वाला से तृतीय नेत्र प्रकट हुआ। शिव ने प्रजा की अन्धकार से रक्षा करने के लिए इस तृतीय नेत्र को प्रकट किया। (महा, शान्ति, 127/1-30)

त्रिनेत्र शिव अपने सात्त्विक अंश के नेत्रों से सात्त्विकों को, राजस नेत्रों से राजसी व्यक्तियों को और तामस नेत्रों से तामसिक प्राणियों को देखते हैं और उन सभी की रक्षा करते हैं। संहारकर्ता शिव इन्हीं तामस नेत्रों से संहारकाल में क्रोधपूर्वक संवर्तक अग्नि को प्रकट कर संहार करते हैं। (ब्रह्मवै, श्रीकृष्ण, पूर्व, 36/89-90)

महाभारत के अनुसार शिव पूर्व दिशा वाले मुख से इन्द्रपद का अनुशासन करते हैं, उत्तर मुख से देवी पार्वती के साथ क्रीड़ा करते हैं। शिव का पश्चिम मुख अत्यधिक प्रियदर्शन होने के कारण सभी प्राणियों को सुख प्रदान करता है। रौद्र मुख अत्यधिक

देवादिदेव महादेव शिव

भयानक है अतः वह प्रजा का संहार करता है। समस्त लोकों की हितकामना से वे जटिल हुए हैं तथा ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं तो देवकार्य की सिद्धि हेतु वे पिनाकधारी हैं। इन्द्र के वज्र प्रहार से कण्ठ जलने के कारण शिव श्रीकण्ठ हैं। (महा, अनु, 128/3-10)

यह विवरण भी प्राप्त होता है कि शिव के चारों मुख चार लोकपालों का ही प्रतिनिधित्व करते हैं अर्थात् वे पूर्व मुख से इन्द्ररूप में, दक्षिण मुख से सभी लोकों के अन्तक यमरूप में, पश्चिम मुख से जलाधिपति वरुणरूप में और उत्तर मुख से चन्द्ररूप में प्रकाशित होते हैं। उक्त चारों लोकपालों के साथ ही उनके शरीर से ही उत्पन्न ब्रह्मा को शिव का दक्षिण हस्त और विष्णु को वाम हस्त भी माना जाता है। (वायु, 55/38-39, 57-58) इसके साथ ही यह भी माना जाता है कि देवत्रयी रूपधारी शिव सृष्टि करने के प्रयोजन से प्रपितामह ब्रह्मा, जगत् के संरक्षण हेतु चक्रधारी विष्णु और संहारकर्ता रुद्र हैं। वस्तुतः उनका विभाग नहीं किया जाता है। (स्कन्द, आव, रेवा, 19/36-38)

शिव कपाली हैं, तो वे पिनाकधर अथवा पिनाकपाणि भी हैं। कपाल धारण करने वाले शिव करवीरक तीर्थ में कपाली नाम से पूजित हैं। (स्कन्द, नागर, 109/5-21) कपाली कहलाने का कारण यह है कि ब्रह्मा का सिर, जो शिव द्वारा काटा गया था, शिव के हाथ में चिपट गया था और उतर ही नहीं रहा था। यह अवान्तर कथा है कि विष्णु के उपदेश से शिव तीर्थ में स्नान करके कपालमुक्त हुए थे। (शिव, रुद्र, युद्ध, 49/3-18)

पिनाकपाणि:

पिनाक धनुष शिव का प्रसिद्ध आयुध है जिस कारण वे पिनाकपाणि, पिनाकी आदि अनेक अभिधानों से सम्बोधित किये जाते हैं। प्रसिद्धि है कि उक्त पिनाक धनुष के भयावह टङ्कार से शिव ने त्रिपुरवासियों को युद्ध से पूर्व ही त्रस्त कर दिया था। (स्कन्द, ब्राह्म, सेतु, 40/27-33)

कृत्तिवासा

शिव के द्वारा मारे गए असुरों में एक मुख्य असुर था महिषासुर का पुत्र गजासुर। पितृवध से क्षुब्ध उसने कठोर तप करके ब्रह्मा से कामवशीभूत नर-नारी से अवध्यता का वर प्राप्त कर लिया। तब वह तीनों लोकों को सन्त्रस्त करने लगा। शिव की प्रिय नगरी काशी में जब उसने अत्याचार करना प्रारम्भ किया तो शिव स्वयं काशी गए जहां उनका गजासुर के साथ रोमाञ्चक युद्ध हुआ। (शिव, रुद्र, युद्ध, 57/2-45)

शिव को जब आभास हुआ कि गजासुर उनकी ओर आ रहा है तो उन्होंने उसे

देवादिदेव महादेव शिव

मारने के लिए त्रिशूल उठाया। भयभीत होने के स्थान पर गजासुर ने पूर्ण निर्भीकता और भक्ति से कहा, 'आपके हाथों मेरा वध होना मेरे लिए अत्यधिक कल्याणकारी होगा। मेरी त्वचा कठोर तप के कारण अग्नि से अदह्य हो गई है और सुगन्धित भी है। आप इस त्वचा से स्वयं को आच्छादित करने का अनुग्रह कीजिएगा। मेरी कृति (त्वचा) धारण करके आप कृतिवासा नाम धारण करें, यह मेरी प्रार्थना है।' भक्तवत्सल शिव ने गजासुर को आश्वस्त किया कि काशी में देहत्याग करने पर वह ज्योतिर्लिङ्ग बन जाएगा तथा सभी के लिए उसका दर्शन मुक्तिदायक होगा। वह लिङ्ग गजासुर की कृति के कारण लोक में कृतिवासेश्वर नाम से पूजित होगा। (स्कन्द, काशी, उत्तर, 68/10-29; शिव, रुद्र, युद्ध, 57/52-68)

यह भी माना जाता है कि अज्ञातनामा असुर के गज का रूप धारण करके युद्ध करने के कारण वह गजासुर कहलाता था। शिवांश कपाली रुद्र के हाथों वह मारा गया था। (मत्स्य, 53/29-50½)

शूलपाणि

शङ्खचूड से त्रस्त ब्रह्मा शिव के साथ जब विष्णु के समीप गए तो विष्णु ने शिव को दैत्यवध के लिए अपना त्रिशूल प्रदान किया था। विष्णु ने यह भी बताया कि दैत्य की पत्नी का सतीत्व भङ्ग किये बिना शङ्खचूड का वध नहीं किया जा सकता है। शिव ने दैत्यराज को परामर्श दिया कि वह देवों का राज्य लौटा दे और मृत्युञ्जय शिव के साथ युद्ध न करें। शङ्खचूड उनकी बातों से अप्रभावित रहा अतः युद्ध अवश्यम्भावी हो गया। (ब्रह्मवै, ब्रह्म, 16/157-205, 18/81-83) शिव ने दैत्यराज शङ्खचूड का वध करने के लिए जिस शूल को ग्रहण किया वह ग्रीष्म ऋतु के मध्याह्नकालीन सूर्य के समान समुज्ज्वल था। उस शूल के अग्रभाग में नारायण, मध्य में ब्रह्मा और मूल भाग में स्वयं शिव एवम् उसकी धार में काल अधिष्ठित थे। शिव ने लीलापूर्वक उस शूल को घुमाया और शङ्खचूड पर फेंक दिया। शूल शङ्खचूड का वध करके पुनः शिव के पाणि (हाथ) में लौट गया। तभी से शिव शूलपाणि कहलाने लगे। (ब्रह्मवै, प्रकृति, 20/12-14, 18-25)

वस्तुतः शिव ने पहले मोहग्रस्त, देवद्रोही, देवताओं को पीड़ित करने वाले शङ्खचूड के समीप दूत प्रेषित किया था कि वह देवों का राज्य लौटा दे किन्तु उसने बिना युद्ध कुछ भी देना नहीं चाहा। उस समय पहले देवी काली उसका वध करने गई तो आकाशवाणी ने शङ्खचूड को काली से अवध्य बताया। तब स्वयं शिव उसके वध के लिए गए। आकाशवाणी ने उन्हें भी सूचित किया कि उस दैत्य की पत्नी का पातिव्रत्य भङ्ग किये बिना और उससे विष्णु-कवच लिये बिना उसका वध असम्भव है, तभी शिव की इच्छा से कपट वेष से विष्णु ने शङ्खचूड से उसका कवच दान में मांग लिया और

देवादिदेव महादेव शिव

कपटाचरण से उसकी पत्नी तुलसी का सतीत्व नष्ट कर दिया। इसके उपरान्त ही शिव ने शूल से शङ्खचूड को भस्म कर दिया था। (शिव, रुद्र, युद्ध, 31/5, 16, 32/30, 38/35, 40/14-28)

उल्लेखनीय है कि शिव यथावसर दुष्टदलन के लिए बाह्यरूप को परिवर्तित भी कर लेते हैं तभी उन्होंने पाखण्डियों का रूप भी बनाया था। उदाहरणतया स्वायम्भुव मन्वन्तर में नमुचि आदि विष्णुभक्त तथा परम धार्मिक महादैत्य थे किन्तु वे देवों को सर्वदा सन्तप्त करते रहते थे। देवताओं ने विष्णु से उनसे रक्षा करने की प्रार्थना की तो अपने ही भक्तों को विष्णु मारने में उत्साही नहीं हुए। अतः उनके परामर्श के अनुसार शिव गौतम, कणाद, शक्ति आदि दस ऋषियों के शरीर में प्रविष्ट हो गए और भावशक्ति से उन्हें तामसी भाव से भर दिया। इस भांति उन्होंने लोकों के कल्याण हेतु उन्हें तामस उपदेश दिया और पाशुपत शास्त्र पढ़ाया। शिव ने देवों के हित के लिए पाखण्डियों का रूप बनाया, कपाल, चर्म, अस्थि, भस्म आदि धारण कर उन सभी दसों ऋषियों को वेदबाह्य उपदेश दिए। परिणामतः वे सभी उन्हीं के अनुरूप आचरण करते हुए शिव की पूजा करने लगे। इस भांति उनसे शिक्षित दैत्य नमुचि आदि सत्त्वहीन होकर देवों से पराजित होकर नष्ट हो गए। (पद्म, उत्तर, 235/28-58)

इसी भांति शिव के बाह्यरूप को परिचित करवाने के लिए उनके अन्य अनेक अभिधान मिलते हैं जिनको शिवनाम के अन्तर्गत परिगणित किये गए हैं।

भूषण

शिव सर्वदा भस्म लिप्त रहते हैं इसका कारण यह माना जाता है कि उनका वीर्य ही भस्म है। अग्निकार्य सम्पन्न करके भस्म का लेप करने से सभी पाप नष्ट हो जाते हैं। उस भस्म को रक्षा कवच के रूप में सूतिका-गृह आदि में प्रयोग किया जाता है क्योंकि उससे समस्त विघ्न विनष्ट हो जाते हैं। (ब्रह्माण्ड, मध्य, अनु, 27/109-114)

शिव की एक अन्य प्रिय वस्तु रुद्राक्ष के लिए माना जाता है कि एक बार शिव के प्रगाढ़ रुदन करने पर स्वर्ग से जो अश्रु बिन्दु नीचे गिरे, वे ही रुद्राक्ष के वृक्ष हो गए। माना जाता है कि ब्रह्महत्या से सन्तप्त शिव ने सर्वत्र भ्रमण किया किन्तु कहीं भी ब्रह्महत्या ने उनका पीछा नहीं छोड़ा किन्तु रुद्राक्ष के वृक्ष के नीचे जाते ही वे ब्रह्महत्या से मुक्त हो गए। तभी से उन्होंने रुद्राक्ष धारण करना आरम्भ किया। (भविष्य, प्रति, 4/13/11-15)

सर्पभूषण शिव के विभिन्न अङ्गों में पृथक्-पृथक् सर्प सुशोभित होते हैं यथा यज्ञोपवीत के रूप में सर्पराज वासुकि, वक्षस्थल पर कम्बल और अश्वतर, कर्णाभूषण

देवादिदेव महादेव शिव

के स्थान पर कर्कोटक, भुजाओं में अङ्गद बना पुलह और शङ्ख और पद्म नामक सर्प नुपूर के रूप में उनके चरणों में सुशोभित होते हैं। (स्कन्द, माहे, केदार, 22/2-5)

धृतराष्ट्र, तक्षक, वासुकि, कुलिक, दम्भ, सुदम्भ, कराल तथा भीषण आदि नाग शिव की सेवा में निरत रहते और उनके अङ्गभूत बने हुए हैं। (वही, माहे, केदार, 34/34-39)

सर्पों के शिव के आभूषण बनने की पृष्ठभूमि में यह आख्यान उपलब्ध है—

गरुड के द्वेषभाव से त्रस्त सर्प शिव की शरण में गए तो शरणागत वत्सल शिव ने सर्पों को आश्रय देने के उद्देश्य से उन्हें अपने अङ्गों में लपेट लिया था और तभी से वे सर्प उनके अङ्गभूषण बन गए।

प्रिय पुष्प आदि

शिव के लिए प्रसिद्धि है कि वे कोई सुगन्धित पुष्प स्वीकार नहीं करते हैं। उसका कारण यह है कि शिव ने पारिजात एवं अन्य सुगन्धित पुष्प आदि को आराध्य विष्णु को समर्पित कर दिया था अतः स्वयं शिव उनका सेवन नहीं करते हैं। शिव तो योगियों के अभीष्ट बित्त्व पत्र, धतूर पुष्प, गन्धहीन अन्य पुष्प एवं व्याघ्रचर्म का सेवन करते हैं। दिव्यलोक, दिव्यशय्या और जनसमुदाय में वे प्रसन्न नहीं होते हैं। तभी एकान्त श्मशान में वे विष्णु-ध्यान में निरत रहते हैं। ऐसे परम भक्त को विष्णुमाया भी स्पर्श नहीं कर सकती है। शिव विष्णु के उच्छिष्ट को सादर ग्रहण करते हैं। एक बार विष्णुलोक से सनत्कुमार द्वारा लाए विष्णु के उच्छिष्ट को पार्वती को दिये बिना ही ग्रहण कर लेने से कुपिता पार्वती ने शिव को शाप दिया कि शिव का उच्छिष्ट अमक्ष्य होगा। पार्वती ने शाप दिया, 'जो व्यक्ति तुम्हारा (शिव का) नैवेद्य खाएगा वह भारत वर्ष में कुक्कुर का जन्म भोग करेगा।' माना जाता है कि उसी क्रोध की मनःस्थिति में पार्वती की दृष्टि शिव के कण्ठ पर पड़ी थी जिससे शिव नीलकण्ठ हो गए थे। अस्तु, पार्वती ने कालान्तर में अपने शाप को इस भांति परिमार्जित कर दिया था कि केवल शिवलिङ्ग के ऊपर अर्पित नैवेद्य ही अमक्ष्य होगा किन्तु विष्णु के नैवेद्य के साथ मिश्रित शिव का नैवेद्य अत्यधिक पवित्र होगा। (ब्रह्मवै, श्रीकृष्ण, पूर्व, 36/100-109, 37/4-39)

वाहन

वृषी शिव के वाहन धर्म ने पूर्व में स्तुति करके शिव को प्रसन्न किया और उनका वाहन बनने का वर मांग लिया। शिव ने वर के साथ यह भी कहा, 'मेरा वाहन बनने से तुम सदा लोकपूजित होओगे और तुम्हारी शक्ति अमोघ होगी। धर्म का सेवन करने

देवादिदेव महादेव शिव

वाले मेरे भक्त बनेंगे।' तब धर्म वृषभ का रूप धारण कर शिव को वहन करने लगा। (वही, ब्राह्म, सेतु, 3/62-67)

उनके वाहन वृषभ के विषय में यह भी माना जाता है कि शिव को वहन करने में अन्यो के अक्षम होने के कारण स्वयं विष्णु ही वृषभ रूप में उनका वाहन बनते हैं। (ब्रह्मवै, श्रीकृष्ण, पूर्व, 36/100-109, 37/4-5)

शिव के वाहनरूप में जहां धर्म तथा विष्णु को माना गया है, वहीं यह मान्यता भी है कि परमेश्वर श्रीकृष्ण के लोमकूपों से उत्पन्न होने वाले सुस्थिरयौवनसम्पन्न गौ तथा वृषभों से एक वृषभ शिव का वाहन बना। वह मनोहारी है तथा करोड़ों सिंहों के समान बलशाली है। (वही, ब्रह्म, 5/42-43)

इस सम्बन्ध में एक अभिनव मान्यता यह भी है कि एक बार ऊर्ध्वलोक से गौओं का दुग्धपान करते बछड़ों के मुख से दुग्ध फेन कैलास पर स्थित शिव के मस्तक पर गिरा जिससे शिव ने क्रुद्ध होकर ऊपर कपिला गौ को देखा। शिव की दृष्टि के तेज से कपिला गाए विभिन्न वर्णों की हो गई। जो गौएं पलायन कर चन्द्र की शरण में गईं, उनका वर्ण विकृत नहीं हुआ। उस समय स्वयं प्रजापति ब्रह्मा ने आकर शिव के क्रोध को शान्त करते हुए कहा, 'हे भगवन्, आप अमृत से अभिषिक्त हो गए हैं। गौ-दुग्ध कभी झूठा नहीं होता है। वे गाएं अपने दूध और घी से लोक का भरण-पोषण करेंगी।' उसी समय शिव को प्रसन्न करने के लिए ब्रह्मा ने उन्हें गौओं के साथ एक वृषभ भी दिया। शिव ने प्रसन्न होकर उस वृषभ को अपना वाहन बनाया। तभी से शिव वृषभध्वज अभिज्ञान से परिचित हुए। देवताओं ने तभी शिव को पशुपति के रूप में स्वीकार किया और गौओं के मध्य रहने वाले वे वृषाङ्क भी कहलाए। (महा, अनु, 76/20-29)

लोक

सर्वव्यापक तथापि श्मशाननिलय शिव का अपना लोक तथा भूतल पर अपने प्रिय वासस्थान भी हैं। अतः शिव के परिचय के अन्तर्गत उनका परिचय भी अपेक्षित है।

शिवलोक

ब्रह्मलोक और ब्रह्माण्ड के मध्यभाग में रमणीय स्थान शिवपुरी शिवलोक है जो मनोमय भी कहलाता है। परम तेजस्वी शिव के उस पुर का विस्तार सौ योजन है तथा वहां पुनर्जन्म से मुक्त जनों का वास होता है। उस सुवर्णमयी पुरी की सृष्टि मानसिक भावभूमि पर हुई है। सुन्दरी दिव्य रमणियां वहां रहती हैं। वहां क्रीडारत शिव के समीप नन्दीश्वर के अतिरिक्त विश्वरूप धारण करने में सक्षम शिवगण तथा उदार और

देवादिदेव महादेव शिव

पराक्रमी रुद्र रहते हैं। अतुलनीय तेजस्वी शिवधनुष भी वहां रहता है तो अमोघ लक्ष्य वाला शिव-त्रिशूल, उनका प्रिय चन्द्र आदि भी वहीं शोभित होते हैं। शिव-पुत्र स्कन्द कार्तिकेय रक्त वस्त्रावृत होकर वहीं सुशोभित होते हैं। वस्तुतः अनेक मन्वन्तरों के व्यतीत हो जाने पर भी शिव की वहां की सभा पूर्ववत् ही रहती है क्योंकि वहां के अधिष्ठाता शिव मृत्यु के लिए भी मृत्युस्वरूप तथा यम के दर्प को चूर्ण करने वाले हैं। वस्तुतः मनसा, कर्मणा और विशुद्ध अन्तरात्मा से भक्तिमान् होकर अनन्यचित्त से शिव के शरणागत भक्त ही शिव का सायुज्य प्राप्त कर शिवलोक में रहते हैं। (वायु, 101/230-314)

आधारशून्य आकाश में शिव ने योगबल से अनेक विचित्र भवनों से अपने लोक को समृद्ध किया हुआ है। पवित्र अन्तःकरण वाले साधकों तथा महात्माओं से वह लोक पूरित है। सौ कोटि लाख सिद्ध एवं तीन कोटि लाख शिव पार्षद शिवलोक के वासी हैं। उनके साथ तीन लाख भैरव भी रहते हैं। अपने सभा मण्डप के मध्य भाग में शिव विराजित रहते हैं। (ब्रह्मवै, प्रकृति, 25/2-9)

कैलास

शिवभक्तों के लिए शिवलोक कितना भी अभिलषणीय क्यों न हो, सर्वव्यापक शिव का अधिकांश समय उनके प्रिय स्थान कैलास अथवा कैलाश पर्वत पर ही व्यतीत होता है। वैकुण्ठ से सोलह गुना विशाल कैलास है जहां शिव पार्वती, गणेश, कार्तिकेय, नन्दी तथा अन्य गणों के साथ अवस्थान करते हैं। (स्कन्द, काशी, पूर्व, 23/22-23)

अविमुक्त नगरी (काशी)

शिव का अन्य प्रिय स्थान काशी है जिसे उन्होंने स्वयं बनाया था। काशीक्षेत्र का वे कभी त्याग नहीं करते हैं। अपने पदतल से निर्मित काशी प्रलयकाल में भी परित्यक्त नहीं होती है इसलिए यह अविमुक्त कहलाती है। (वही, काशी, पूर्व, 26/26-27) इसी काशी में अपने वामाङ्ग पर दृष्टि डालकर शिव ने महाविष्णु को उत्पन्न किया था जिन्होंने एक पुष्करिणी का खनन कर उसे अपने स्वेदजल से पूरित कर दिया था। शिव ने जिस समय उन विष्णु की तपस्या को देखकर अनुमोदन में सिर हिलाया उस समय उनके कान से एक मणि उस पुष्करिणी में गिर पड़ी। मणियों से व्याप्त सुन्दर वह पुष्करिणी तभी से मणिकर्णिका कहलाने लगी। (वही, काशी, पूर्व 26/43-63)

शिव काशी के समान वशीकरण करने वाली अन्य किसी नगरी को नहीं मानते हैं। एक बार धर्मात्मा राजा दिवोदास ने शिव सहित समस्त देवताओं को काशी से निष्कासित कर दिया था। शिव काशी से दूर रहकर व्याकुल हो गए तो उन्होंने अपने गण शङ्खकर्ण, महाकाल आदि को वहां भेज दिया किन्तु वे काशी को दिवोदास से मुक्त

देवादिदेव महादेव शिव

नहीं करवा सके। तत्पश्चात् शिव ने सोमनन्दी, कुक्कुट आदि पांच गणों को वहां भेजा। वे भी काशी की प्रीति के कारण काशीवासी ही हो गए तथा वहीं शिवलिङ्ग की स्थापना करके शिव-उपासना करने लगे। इस भांति अप्रत्यक्ष रूप से अर्थात् शिवगणों के माध्यम से काशी में शिव का प्रवेश होने लगा। (वही, काशी, उत्तर, 52/3-63)

इस काशी में शिव के प्रिय ब्रह्मा तथा विष्णु भी रहते हैं। वहां महापातकी भी शिव के दर्शन से विशुद्ध होकर ब्रह्मलोक को गमन करता है। काशी में ही कपालमोचन तीर्थ है। (पद्म, सृष्टि, 14/183-185)

शिव के काशी के इतने अधिक प्रिय होने का कारण यह है कि पार्वती के साथ विवाह के उपरान्त दीर्घकाल तक अपने श्वसुरालय हिमालय में अवस्थान करने के कारण मेना के व्यङ्गबाणों से विद्ध पार्वती के आग्रह पर शिव ने पांच योजन की रमणीय नगरी वाराणसी (काशी) का निर्माण किया था। कालान्तर में उनके राजाओं ने काशी पर शासन किया। वहीं पर शिवभक्त काशिराज ने प्रमत्त होकर वासुदेव कृष्ण के साथ युद्ध किया था जिससे काशी दग्ध हो गई थी। उसके उपरान्त कृष्ण के उपदेश से शिव विष्णुक्षेत्र पुरुषोत्तम में गए और एकाम्रक तीर्थ में पार्वती के साथ उन्होंने निवास किया। वहीं वे एक करोड़ लिङ्गों के राजपद पर अभिषिक्त हुए। (स्कन्द, वैष्णव, वेङ्कट, 12/27-86)

शिव को काशी कितनी प्रिय है, यह शिव-भक्तों को भली-भांति ज्ञात है। शिव अपनी अविमुक्तपुरी काशी में पुनः लौटने को लालायित थे अतः अन्ततः शिवगणों और गणेश के प्रयास से दिवोदास को काशी का त्याग करना पड़ा और शिव का पुनः काशी में आगमन हुआ। इस समाचार से शिवभक्त जैगीषव्य मुनि अत्यधिक प्रफुल्ल हुए और तभी उन्होंने निम्न अभिधानों से शिव-स्तवन किया -

शुभात्मा, जगदानन्दकन्दः, परमानन्दहेतुः, स्थावरः, विधिः, विधिविष्णुस्तुतः, त्रैलोक्यकाम्यः, कामाङ्गदहनः, शेषविशेषः, शेषाङ्गदः, विषकण्ठः, वैकुण्ठवन्द्यपादः, अकुण्ठितशक्तिः, शक्त्यार्धदेहः, विदेहः, सुदेही, सकृतप्रणाममात्रेण देहिदेहनिवारी, कालकूटविषादी, व्यालयज्ञोपवीतः, व्यालभूषणधारी, खण्डिताशेषदुःखः, खड्गखेटकधारी, गीर्वाणगीतनाथः, गङ्गाकल्लोलमाली, चन्द्रार्धशुद्धभूषः, चन्द्रसूर्याग्निचक्षुः, चर्मवसनः, जीर्णः, जराजन्महरः, जअपूकादिहारी, डमरुहस्तः, धनुर्हस्तः, जगन्नेत्रः, त्रिशूलव्यग्रहस्तः, त्रिपथगाधरः, त्रिविष्टपाधिनाथः, त्रिवेदीपठितः, भक्ततुष्टिप्रदः, दीक्षितः, दारिताशेषपापः, दीर्घदर्शी, दुखाप्यः, दोषनिर्दलनः, दोषाकरकलाधरत्यक्तदोषागमः, धर्मपालः, नीलग्रीवः, नाममात्रस्मृतिकृतां त्रैलोक्यैश्वर्यपूरकः, प्रमथनाथः, पिनाकोद्यतपाणिः, पशुपाशविमोक्षः, नामोच्चारणमात्रेण महापातकहारी, परापरपरः, अपारचरित्रः, सुपवित्रकथः, वामार्धधारी, महसांपतिः, मृडानीपतिः, यज्ञारिः, यक्षराजप्रियः, यायजूकः, यज्ञानां फलदायी, रुद्रपतिः,

देवादिदेव महादेव शिव

रमः, शाश्वतेशः, श्मशानावनिचारी, शिवाप्रियः, क्षान्तिरूपः, क्षेत्रज्ञः, क्षमाकरः, क्षमः, क्षितिहर्ता, क्षीरगौरः, आद्यन्तरहितः, इडाधारः, उपेन्द्रेन्द्रस्तुतः, एकरूपः, महदैश्वर्यरूपी, अनन्तकारी, वाच्यः, वाचकः, वाक्। (स्कन्द, काशी, उत्तर, 63/32-62)

शिव के निवास-स्थलों के प्रसङ्ग में उल्लेखनीय है कि अश्वत्थ, पलाश, तुलसी और बिल्व - इन चारों वृक्षों को भी उनका वासस्थान स्वीकारा जाता है। (वही, नागर, 251/33-34)

गण

शिव के गणों के संक्षिप्त परिचय के बिना शिव का परिचय अपूर्ण ही है। शिव के गण तथा गणाधिपतियों की संख्या एवं गणत्व प्राप्त करने का आधार कहीं स्पष्ट नहीं है। उनके अनेकानेक गणों में से नन्दी का परिचय अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है।

नन्दी शिव के सम्मुख द्वितीय शिव की भांति शूल लेकर खड़े रहते हैं। (महा, अनु, 14/144) वे सालङ्कायन के पौत्र तथा शिलाद ऋषि के शिवांश पुत्र हैं। (लिङ्ग, पूर्व, 43/5) शिव का सारूप्य प्राप्त करने वाले नन्दी जहां शिवरूप हैं, वहीं शिवप्रिय भी हैं। शिव की आज्ञा से ही वे कपर्दी (जटजूटधारी) शूल, माला, हाल, कुण्डल, वलय और गदा धारण करते हैं। वे शिव की भांति ही श्वेत वृष पर आरूढ़ होकर गमन करते हैं। शिव को देखकर शिवगण जिस भांति रोमाञ्चित होते हैं, नन्दी के दर्शन से भी उनकी वही अनुभूति होती है। देवता नन्दी की भी पूर्ण भक्ति करते हैं। (लिङ्ग, पूर्व, 71/154-160)

नन्दी के समान अति प्रख्यात तथा आराध्य न होने पर भी सभी शिवगण सर्वदा आदरणीय हैं एवं वे शिव के भक्त ही नहीं, उनके विश्वासपात्र भी हैं। अनेक कठिन परिस्थितियों में शिव अपने गणों को किसी कार्य को सम्पन्न करने का दायित्व भी सौंपते हैं। शिवगणों के नाम की तालिका कहीं उपलब्ध न होने पर भी विविध अवसरों पर परिगणित गणों के उल्लेख से ही अनेक शिवगणों के नाम ज्ञात हो जाते हैं। यथा—दिवोदास से काशी को मुक्त करवाने के लिए शिव ने शङ्खकर्ण, महाकाल, घण्टाकर्ण, महोदर, सोमनन्दी, नन्दीषेण, काल, पिङ्गल, कुक्कुट, कुण्डोदर, मयूराक्ष, वाण, गोकर्ण, तारक, तिलपर्ण, स्थूलकर्ण, दृमिचण्ड, प्रभामय, सुकेश, छाग, कपर्दी, पिङ्गलाक्षक, वीरभद्र, किरात, चतुर्मुख, निकुम्भक, पञ्चाक्ष, भारभूत, त्र्यक्ष, क्षेमक, लाङ्गली, विराध, सुमुख आदि गणों को काशी भेजा था जिन्होंने वहां अपने-अपने नाम से शिवलिङ्ग की स्थापना भी की थी। (स्कन्द, काशी, उत्तर, 53/सम्पूर्ण)

इसी भांति अन्धक के साथ शिव के भयानक युद्ध के समय नन्दीश्वर के अतिरिक्त घण्टाकर्ण, मेघनाद, चण्डेश, चण्डतापन, विनायक, मेघवाह, वैद्युत, सोमनन्दी

देवादिदेव महादेव शिव

आदि गणों ने भी युद्ध किया था। (कूर्म, पूर्व, 16/135-137)

शिवगणों की कुल संख्या स्पष्ट न होने पर भी यत्र-तत्र शिवगणों की संख्या का उल्लेख मिलता है यथा अनामन्त्रित सती जब पिता दक्ष के यज्ञ में सम्मिलित होने गई तो विचक्षण शिव ने अपने साठ सहस्र गणों के साथ सती को उनके पित्रालय भेजा था। (स्कन्द, माहे, केदार, 2/26-46) शिवपुराण के अनुसार शिव के विवाह में वर के अनुगामी शिवगणों की संख्या एकादश कोटि थी। उस यात्रा में चण्डी ने रुद्रगणों को अपने पृष्ठभाग पर रखा था जबकि देवता, यहां तक कि विष्णु भी शिवगणों के पीछे चल रहे थे। शिव यूँ तो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के ही स्वामी हैं किन्तु उनके प्रत्यक्ष परिवार में गणों के अतिरिक्त शाकिनी, यातुधान, वेताल, ब्रह्मराक्षस, भूत, प्रेत, पिशाच और अन्य प्रेमथ आदि भी परिगणित होते हैं जो शिव की वर-यात्रा में उनके अनुगामी थे। शिवगणों के अपने-अपने गण भी होते हैं तभी उस यात्रा में शङ्कुकर्ण एक कोटि, केकराक्ष दस कोटि, विकृत आठ कोटि, विशाख चार कोटि, पारिजात नौ कोटि, सर्वान्तक और विकृतानन साठ-साठ कोटि, दुन्दुभ आठ कोटि, कपाल पांच कोटि, सन्दारक छः कोटि, कन्दुक और कुण्डक एक-एक कोटि, विष्टम्भ आठ कोटि, पिपल एक सहस्रकोटि, सन्नादक भी एक सहस्रकोटि, आवेशन आठ कोटि, महाकेश सहस्र कोटि गणों के साथ आए थे। यह तालिका पर्याप्त दीर्घ है जिनमें कुण्ड, पर्वतक, चन्द्रतापन, कालकाल, महाकाल, अग्निक, अग्निमुख, आदित्यमूर्धा, घनावह, सन्नाह, कुमुद, कोकिल, सुमन्त्र, काकपादोदर, सन्तानक, महाबल, मधुपिङ्ग, कोकिल, नील, पूर्णभद्र, चतुर्वक्त्र, करण, रोमक, यज्वाक्ष, शतमन्यु, मेघमन्यु, काष्ठाङ्गुष्ठ, विरूपाक्ष, सुकेश, सनातन, तालकेतु, षण्मुख, चञ्चुमुख, सनातन, संवर्तक, चैत्र, लकुलीश, स्वयंप्रभु, लोकान्त, दीप्तात्मा, दैत्यान्तक, भृङ्गिरिटि, अशानि, भानुक आदि गणाधिप भी कोटि-कोटि गणों को लेकर उत्साहपूर्वक शिव के विवाहोत्सव में सम्मिलित होने हिमालय के घर की ओर चले थे। उल्लेखनीय है कि सभी गणेश्वर सहस्रहस्त, जटा-मुकुटधारी, चन्द्ररेखाभूषित, नीलकण्ठ, त्रिलोचन, रुद्राक्षधारी, भस्मलिप्त, हार, कुण्डल, केयूरधारी अर्थात् शिव के सारूप्य प्राप्त होते हैं। वे अणिमा आदि सिद्धियों से सम्पन्न होते हैं। (शिव, रुद्र, पार्वती, 40/1-30)

स्वयं शिव ने पार्वती को अपने गणेश्वरों का परिचय देते हुए एक बार बताया था, 'मेरे गण कोटिसंख्यक तथा अत्यधिक विख्यात और बलवान् हैं। उन भयङ्कर गणों से सिद्धक्षेत्र, रथ्या, जीर्ण उद्यान, दानवों के शरीर, बालक तथा उन्मत्त आदि व्याप्त रहते हैं। वे ऊष्णपायी, फेनपायी, मधुपायी, धूमपायी, मेद, रुधिर, आदि का सेवन करने वाले होते हैं। उन्हें नाना वाद्य प्रिय हैं।' (पद्म, सृष्टि, 43/467-472)

इसी प्रसङ्ग में उल्लेखनीय है कि अन्धक के साथ युद्ध से पूर्व नन्दी ने त्रिनेत्र तथा

देवादिदेव महादेव शिव

जटाधारी रुद्रों के अतिरिक्त स्कन्द नामक कुमार के षण्मुखी, शक्तिधारी, शिखीध्वजी, छयासठ करोड़ गण, विशाख और नैगमेय के छयासठ-छयासठ करोड़ गणों के अतिरिक्त शिव के उत्तम सात कोटि प्रमथ गण, जिनके प्रत्येक के साथ उतनी ही मातृकाएं, आदि थीं, का आवाहन किया था। शिवगणों का कुछ वर्गभेद भी है यथा भस्मलिप्त और शूलपाणि तो गणेश्वर हैं, भस्मलिप्त असंख्य पाशुपत हैं तो खट्वाङ्ग से युद्ध करने वाले महाव्रती, घण्टाधारी, दिगम्बर तथा मौनी निराश्रय नामक गण हैं; त्रिनेत्रधारी, पद्माक्ष, श्रीवत्स से शोभित वक्षस्थल वाले वृषभध्वजी गण हैं; चक्रशूलधारी महापाशुपत गण हैं। इनके अतिरिक्त भी गणों के और भी अनेक वर्ग हैं। वे सभी शिवभक्त तथा शिव की आज्ञा का पालन करने वाले हैं। वस्तुतः शिव के असंख्य गणों का परिगणन और वर्गविभाजन असम्भव है। (वामन, 67/5-20)

शिवरात्रि

शिव के परिचय में शिवरात्रि का अत्यधिक महत्त्व है। इसका प्रारम्भ देवताओं के माध्यम से तथा स्वयं शिव के अनुग्रह से हुआ था। हुआ यह कि लोकानुग्रह की इच्छा से देवों ने एक बार शिव से प्रार्थना की, 'हे भगवन्, इस पापयुक्त कलिकाल में लोगों की वर्षभर की पापशुद्धि के लिए आप कम से कम एक दिन प्रतिवर्ष पृथ्वी पर अवश्य गमन करें जिससे जनसामान्य आपकी पूजा करके शुद्धि को प्राप्त कर सके।' महादेव शिव ने उनकी प्रार्थना स्वीकार करते हुए आश्वस्त किया, 'मैं माघ मास की कृष्णा चतुर्दशी की रात्रि को पृथ्वी पर विराजित सभी लिङ्गों में सङ्क्रमण करूंगा। उस रात्रि में मेरी पूजा करने वाला पापहीन हो जाएगा। उस पूजा का मन्त्र है, 'ॐ सद्योजाताय नमः। ॐ वामदेवाय नमः। ॐ घोराय नमः। ॐ तत्पुरुषाय नमः। ॐ ईशानाय नमः। गन्ध-अनुलेपनों के द्वारा लिङ्ग के मुखभाग की पूजा करके दीप-नैवेद्य आदि का अर्घ्य प्रदान कर शिव का ध्यान करें। तब ब्राह्मण को दान देकर, उसकी पूजा करके लास्य और ताण्डव से पूजा करे।' (स्कन्द, नागर, 266/26-36)

शिवरात्रि के सम्बन्ध में अन्य मान्यता यह भी है - विष्णु तथा ब्रह्मा के गर्व को भंग करने के लिए शिव उन दोनों के मध्य में अग्निस्तम्भ के रूप में प्रकट हुए। शिव के ऐश्वर्य तथा उनकी महिमा को हृदयङ्गम करके गर्वरहित हो ब्रह्मा और विष्णु ने समस्त सामग्रियों के साथ शिव की पूजा की। उस समय उस भक्तिपूर्ण पूजा से प्रसन्न होकर आशुतोष शिव ने कहा, 'आज के इस महादिन में मैं तुम दोनों द्वारा की गई पूजा से सन्तुष्ट हुआ हूँ। अतः आज का दिन अत्यधिक पुण्यवाला होगा। यह तिथि मुझे अतीव प्रिय है अतः यह शिवरात्रि कहलाएगी। इस दिन जो लिङ्ग तथा बेर की पूजा करेगा। वह समस्त कृत्यों को सम्पन्न कर लेगा।' (शिव, विद्येश्वर, 9/8-11)

शिव पारिवारिक जीवन

शिव के पारिवारिक जीवन-वृत्त पर दृष्टिपात करने से पूर्व स्मरणीय है कि चिदानन्दस्वरूप सनातन ब्रह्म ने द्वितीय होने की इच्छा की तो वही सगुणरूप शिव कहलाये। वे स्त्री और पुरुष दो रूपों में विभक्त होकर शिव और शक्ति नाम से विख्यात हुए। (शिव, कोटि, 22/4) उस शक्ति के लिए कहा गया है कि उनकी आज्ञा से ही ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र अपने सृष्टि, स्थिति और लय के कार्यों में संलग्न हुए और उन्हें आज भी कर रहे हैं। (वही, रुद्र, सृष्टि, 14/16-17) यह भी माना जाता है कि प्रारम्भ में अर्धनारीश्वर शिव ने अपने नारी-पुरुष के सम्मिलित रूप में से नारी और पुरुष को स्वेच्छा से अलग-अलग कर लिया। स्त्रीरूप भाग विश्व का कल्याण करने वाली सती हुई। शिव ने उन सती को सृष्टि के प्रयोजन से स्वयं को श्वेत और श्याम - दो भागों में विभक्त करने का निर्देश दिया। सती ने उस निर्देश का पालन किया। जगत् के कल्याण के लिए दक्ष ने उन्हीं सती का आराधना की थी। (लिङ्ग, पूर्व, 70/325-339) अन्यत्र इन्हीं शक्ति को दुर्गा नाम से अभिहित किया जाता है। ब्रह्मा ने मानसी सृष्टि से पृथक् सृष्टि को आगे बढ़ाने के उद्देश्य से इन्हीं दुर्गा का स्तवन करके उनसे प्रार्थना की, 'पत्नीविहीन, निर्विकार, निर्विकल्प शिव कैलाश पर्वत पर कठोर तप कर रहे हैं। आपके अतिरिक्त कोई अन्य नारी उन्हें मोहित नहीं कर सकती है। अतः विश्वहित के लिए, सृष्टि चलाने के लिए आप दक्षपुत्री सती के रूप में जन्म लेकर उनके पत्नीपद को सुशोभित कीजिए।' दुर्गा ने यह सुनकर विचार किया और शिव का स्मरण किया। स्वयं को शिव की आज्ञाकारिणी दासी मानती हुई देवी ने शिव की आज्ञा प्राप्त कर ब्रह्मा की इच्छा पूर्ण करने का उन्हें आश्वासन दिया। (शिव, रुद्र, सती, 11/1-51)

तदुपरान्त ब्रह्मा की आज्ञा से उनके पुत्र दक्ष ने देवी को प्रसन्न किया तो देवी ने उन्हें आश्वस्त किया। (वही, रुद्र, सती, 12/1-37) इन्हीं शक्ति, दुर्गा अथवा सती को शिवा नाम से भी परिचित करवाया गया है जो शिव के अर्धाङ्गरूप में विराजित थी। ब्रह्मा की प्रार्थना पर शिव ने उन्हें ही स्वयं से विलग किया तो उन्होंने अपने भ्रूयुगल के मध्य भाग से अपने समान द्वितीया स्त्री को उत्पन्न किया जो दक्षकन्या के रूप में जन्म लेकर सती कहलाई। (वही, शत, 3/6-30) कूर्म पुराण ने इन्हीं को शाङ्करी ईशानी (कूर्म,

देवादिदेव महादेव शिव

पूर्व, 11/1-16) तो मत्स्य पुराण ने ललिता भी कहा है। (मत्स्य, 60/1-11)

सती एवं दक्षयज्ञ-विध्वंस

अस्तु! दक्षपुत्री सती बाल्यकाल से ही शिव की मूर्ति बनाकर उनका स्तवन, स्मरण आदि करती रहती थी। इस कृत्य के पीछे पितामह ब्रह्मा की प्रेरणा भी थी क्योंकि एक बार उन्होंने सती को आशीर्वाद दिया था, 'तुम जिनकी कामना करती हो और जो तुम्हारी इच्छा करते हैं, उन शिव को पतिरूप में प्राप्त करो। वे शिव त्रिकाल में अन्य किसी को पत्नीरूप में ग्रहण नहीं करेंगे।' दक्ष ने भी तभी से सती को शिव की वाग्दत्ता स्वीकार कर लिया। ब्रह्मा ने शिव को भी सती को स्वीकार करने के लिए सम्मत कर लिया। (शिव, रुद्र, सती, 14/10-59) यथासमय ब्रह्मा के उद्योग से ही शिव ने दक्ष के हाथों से सती को पत्नीरूप में ग्रहण किया। (वही, रुद्र, सती, 18/1-37) शिव के विवाह-संस्कार के मध्य सप्रयास ब्रह्मा ने सती का मुख देख लिया तो ब्रह्मा की कुटिलता और असदाचरण से क्रुद्ध शिव ने उन्हें मारना चाहा किन्तु ब्रह्मा ने स्तुति करके आशुतोष शिव को तुष्ट तो किया ही साथ ही विवाह वेदी में अपने सर्वदा उपस्थित रहने का वर भी मांग लिया। (वही, रुद्र, सती, 19/1-76, 20/1-61)

यह भी माना जाता है कि शुभ कर्म सम्पन्न होने के पश्चात् शिव ब्रह्मा को दक्षिणा देने लगे तो ब्रह्मा ने वर मांगा कि उस विशेष तिथि को शिव का दर्शन करने वाला पुण्यात्मा और नीरोगी होगा। (वही, रुद्र, सती, 20/38-39)

शिव का विवाह चैत्र मास की शुक्ला तृतीया तिथि को सम्पन्न हुआ था। इस माङ्गलिक दिन में शिव के साथ सती की पूजा का विधान है। (मत्स्य, 60/25-26)

विवाह के उपरान्त सती की इच्छा से शिव ने कैलाश पर्वत पर रहना प्रारम्भ किया। सती के क्षणिक वियोग को सहन करने में असमर्थ शिव ने कुछ समय उपरान्त सती की इच्छा से ही हिमालय पर रहना प्रारम्भ किया। (वही, रुद्र, सती, 22/1-70) शिव को सती के प्रति प्रीति थी। वाक् और अर्थ की भांति शिव और सती एक दूसरे के साथ सम्पृक्त होकर रहते थे। एक बार विचरण करते हुए वे दण्डकारण्य जा पहुंचे। उस समय सीता का अपहरण हो जाने से दुःख कातर राम लक्ष्मण के साथ सीता की खोज करते हुए इधर-उधर भटक रहे थे। शिव ने उन्हें देखकर सभक्ति प्रणाम किया तो सती ने उसका कारण जानना चाहा। राम को विष्णु का पूर्ण अवतार तथा लक्ष्मण को शेषनाग का पूर्ण अवतार बताकर शिव ने उन्हें परिचित करवाया। तब कौतूहलवश सती शिव की अनुमति लेकर सीता का रूप धारण कर राम की परीक्षा लेने गई। राम ने उन्हें देखते ही पहचान लिया। उन्होंने शिव का स्मरण किया तथा सती से प्रश्न

किया कि वे अकेली क्यों हैं। शिव उनके साथ क्यों नहीं है? इस पर लज्जित होती हुई सती ने उन्हें परीक्षा लेने की बात कह दी और साथ ही यह भी जानना चाहा कि वे शिव के प्रणम्य क्यों हैं? राम यह सुन आनन्दित होकर शिव का स्मरण करने लगे। (वही, रुद्र, सती, 24/1-61) इस घटना का परिणाम सती के लिये सुखद नहीं हुआ क्योंकि विष्णु के अवतार राम के प्रति सती के मन में आशङ्का का भाव आ गया तो शिव ने सती को बिना कुछ कहे अपने मन से उन्हें त्याग दिया क्योंकि पूर्व में शिव ने विष्णु के समक्ष प्रतिज्ञा की थी कि वे विष्णु से द्वेष करने वाले को दण्ड और विष्णुभक्त को निर्वाण पद प्रदान करेंगे। आत्मशक्ति से सती त्याग के विषय में जानकर दुःखी हो गई जबकि शिव ध्यानलीन हो गए। कुछ समय पश्चात् शिव ने समाधि भङ्ग की और पूर्व की भांति पुनः सती से आनन्दपूर्वक मिल गए। (वही, रुद्र, सती, 25/1-69) वस्तुतः सती के प्रति शिव का आदरभाव भी था तभी सती की सम्मति से ही शिव ने कालकूट विष को कण्ठ में धारण किया था। (भाग, 8/7/46-51)

सती जहां शिव के साथ एकात्म थीं वहीं उनके पिता दक्ष भी प्रारम्भ में शिवभक्त थे किन्तु कालान्तर में उनका शिव के प्रति द्वेष भाव पनप गया था। यह द्वेषभाव सकारण पनपा था। हुआ यह था कि एक बार दक्ष ने दुर्वासा ऋषि से जाम्बूनदेश्वरी देवी के प्रसाद रूप में प्राप्त देवी की कण्ठमाला मांग ली और असावधानी से उसे अपनी शय्या पर रख दी। माला की अलौकिक सुगन्ध से मुदित दक्ष ने रात्रि में उसी शय्या पर पत्नी असिकनी वीरणी के साथ रमण किया। इस दुष्कर्म के कारण ही उनमें दुर्बुद्धि ने प्रवेश किया था। (देवी, 7/30/1-23)

यह भी माना जाता है कि शिव के सती के साथ विवाह के कुछ काल उपरान्त ही किसी कारणवश शिव का दक्ष से मतभेद हो गया जो कलह में परिणत हो गया। शिव क्रुद्ध हो दक्ष के पास से लौट आए। (ब्रह्मवै, श्रीकृष्ण, पूर्व, 42/83-88)

उसी का परिणाम हुआ कि एक बार दक्ष ने अनेक यज्ञ किए परन्तु उनमें से किसी में भी शिव को आमन्त्रित नहीं किया। जब वे अन्तिम यज्ञ करने लगे तो उसमें देवगण के साथ गन्धर्व आदि को भी आमन्त्रित किया परन्तु तब भी शिव को आमन्त्रण नहीं दिया, न ही पुत्री सती को बुलाया। सती को जब यज्ञ का पता चला तो वे बिना आमन्त्रण वहां जाने को तत्पर हो गईं। शिव ने उन्हें बिना निमन्त्रण के वहां जाने से रोका और यह भी कहा कि स्वजनों द्वारा किया गया अपमान मृत्यु का कारण भी बन सकता है क्योंकि वह अपमान अत्यधिक पीड़ादायक होता है। (भाग, 4/3/5-25)

पति शिव की आशङ्का ही सत्य हुई। पितृगृह जाकर सती ने माना कि उसके पिता

देवादिदेव महादेव शिव

वास्तव में शिव को जानते ही नहीं। उनकी अपनी अज्ञानता ही शिव-अनादर का कारण है। उस प्रकार के शिव-विद्वेषी दक्ष की पुत्री होना भी सती को लज्जाकर लगने लगा था। (वही, 4/4/1-32) दक्ष का कहना था कि शिव क्योंकि उपसंहार (सृष्टि का संहार) करने वाले हैं अतः उन्हें यज्ञ में बुलाना अमङ्गलकारक है। पति के अपमान से तिलमिलाई सती ने योगस्थ होकर अपने शरीर से ही अग्नि उत्पन्न कर स्वयं को जला दिया। (मत्स्य, 13/12-61; वाराह, 22/1-5)

अपनी भगिनियों में ज्येष्ठा होने पर भी सती का पितृगृह में आदर नहीं था। यज्ञ के अवसर पर भी अपनी बहिनों की तुलना में स्वयं को उपेक्षित मानकर सती ने पिता से कहा तो पिता ने अन्य पुत्रियों के पतियों को श्रेष्ठ, पूज्य तथा सम्माननीय बताया जब कि शिव की निन्दा की। सती ने पिता की भर्त्सना कर कहा, 'मैं आपसे उत्पन्न शरीर को त्याग रही हूँ। अब मैं पुनः विवेकशील, धर्मात्मा और बुद्धिमान् शिव की ही पत्नी बनूँगी।' शिव ने जब दक्ष तथा सती के संवाद को सुना और पत्नी के जीवन अवसान का समाचार जाना तो क्रोध से दक्ष को शाप दिया कि द्वितीय वैवस्वत मन्वन्तर में दक्ष के अन्य जामाता वसिष्ठ, अत्रि आदि दक्ष के यज्ञ से उत्पन्न होंगे और दक्ष भी दक्ष नाम से ही चाक्षुष मन्वन्तर में प्राचीनबर्हिष के पौत्र प्रचेता का पुत्र बनकर उत्पन्न होंगे। दक्ष को मानवलोक में रहने तथा पूजा प्राप्त न करने का भी शाप दिया। (ब्रह्म, 34/9-35)

यह भी माना जाता है दक्ष ने सती को प्यार से समझाया, 'शिव का भस्म-लिप्त रहना और उनका वेष अत्यधिक लज्जाजनक है अतः उन्हें यज्ञ में बुलाया नहीं गया है।' सती किसी बात से भी सन्तुष्ट नहीं हुई और उन्होंने घोषणा की, 'यदि शिव मुझे प्रेम करते हैं तो इस यज्ञ को शीघ्र नष्ट कर दें।' सती के देह त्याग करने के उपरान्त शिव के गणों ने यज्ञ नष्ट कर दिया तो दक्ष शिव की शरण में जाकर उनकी स्तुति करने लगे।

दक्षकृत शिवस्तुति में प्रयुक्त शिव के नाम हैं - शङ्खाभदेवः, सगणः, सनन्दी, वृषासनः, सोमः, क्रतुकालान्तकः, दिक्चक्रवस्त्रः, तीव्रतेजाः, ब्रह्मा, ब्रह्मदेहः, ब्रह्मण्यः, अमितः, गिरीशः, सुरेशः, ईशानः, रुद्रः, प्रतिवज्रः, शिवः, क्रथनः, सुरासुराधिपतिः, यतीनां पतिः, धूम्रोगः, विरूपः, यज्वा, घोररूपी, विरूपाक्षः, अशुभाक्षः, सहस्राक्षः, मुण्डः, चण्डमुण्डः, वरखट्वाङ्गधारी, कव्यरूपः, आहव्यः, सर्वसंहारी, भक्तानुकम्पी, अत्यर्थरुद्रजाप्यः, स्तुतः, विरूपः, सुरूपः, रूपाणां शतकारी, पञ्चास्यः, चन्द्रास्यः, वरदः, वराहः, कूर्मः, मृगः, लीलालकशिखण्डः, कमण्डलुधरः, विश्वनामा, विश्वः, विश्वेशः, त्रिनेत्रः, त्रिपुरघ्नः। (पद्म, सृष्टि, 5/32-96)

देवादिदेव महादेव शिव

यह वृत्तान्त भी उपलब्ध है कि दक्ष पर क्रुद्ध होने पर भी सती ने दक्ष को शाप नहीं दिया तथा अपनी पूर्व घोषणा के अनुसार प्राण त्यागने का निश्चय किया। उन्होंने मन में सोचा, 'मेरे द्वारा एक ही प्रयोजन सिद्ध हुआ है कि शिव शङ्कर ने दारपरिग्रह किया है किन्तु वे अभी तक पुत्रवान् तो नहीं हुए हैं। मैं जानती हूँ कि अन्य किसी नारी में अनुराग न होने के कारण वे किसी को भी ग्रहण नहीं करेंगे। अतः जगत् के कल्याण के लिए मैं हिमालय के घर मेना से जन्म ग्रहण करूंगी।' इसके उपरान्त सती ने योग से शरीर के सभी नौ द्वारों को बन्द करके स्फोट ध्वनि के माध्यम से दशम द्वार के द्वारा शरीर का त्याग कर दिया। (कालिका, 16/38-49)

वायु पुराण के अनुसार शिव ने अत्रि आदि ऋषियों को पुनः जन्म लेने के लिए शापित किया तो दक्ष पुनः क्रुद्ध हो गए और शिव को चेतावनी देते हुए कहा 'मैं आगामी जन्म में भी तुम्हारे धर्मयुक्त कार्यों में बाधा सृष्टि करूंगा। ऋषियों को शाप देकर उनके प्रति क्रूरतापूर्ण आचरण करने के कारण द्विजगण यज्ञ में तुम्हारी पूजा नहीं करेंगे। वे आहुति देने के उपरान्त यज्ञकुण्ड में जल-निक्षेप करेंगे और तुम शिवलोक त्याग कर इसी भूलोक में युगक्षयपर्यन्त निवास करोगे।' (वायु, 30/57-64)

अनन्तर दक्ष को जब अपनी भूल का बोध हुआ तथा शिव के ऐश्वर्य को उसने हृदयङ्गम किया तब शिव को प्रसन्न करते हुए एवं उन्हें अपना शरणस्थल तथा अन्तिम गति मानते हुए निम्न अभिधानों से शिव की स्तुति की— देवारिबलसूदनः, अमरश्रेष्ठः, देवदानवपूजितः, यक्षाधिपप्रियः, सर्वतःश्रुतिमान्, शङ्कुकर्णः, महाकर्णः, कुम्भकर्णः, अर्णवालयः, गजेन्द्रकर्णः, गोकर्णः, पाणिकर्णः, शतोदरः, शतावर्तः, शतजिह्वः, शताननः, देवदानवगोप्ता, ब्रह्मा, शतक्रतुः, मूर्तीशः, महामूर्तिः, समुद्राम्बुधरः, अन्धकघाती, त्रिजटः, त्रिशिर्षः, त्रिशूलवरधारी, त्रिपुरघ्नः, प्रचण्डः, धरः, दण्डिमासक्तकर्णः, दण्डिमुण्डः, अर्धदण्डकेशः, निष्कः, विकृतः, विलोहितः, धूम्रः, नीलग्रीवः, अप्रतिरूपः, सूर्यः, सूर्यपतिः, सूर्यध्वजपताकी, प्रमथनाथः, वृषस्कन्धः, धन्वी, हिरण्यगर्भः, हिरण्यकवचः, हिरण्यकृतचूडः, हिरण्यपतिः, सत्रघातः, दण्डः, वर्णपानपुटः, सर्वः, अमक्ष्यभक्ष्यः, सर्वभूतान्तरात्मा, होता, मन्त्रः, शुक्लध्वजपताकी, नमः, नम्यः, किलकिलः, शयमानः, शयितः, उत्थितः, स्थितः, चलमानः, मुद्रः, कुटिलः, नर्तनशीलः, मुखवादित्रकारी, नाट्योपहारलुब्धः, गीतवाद्यरतः, ज्येष्ठः, श्रेष्ठः, बलप्रमथनः, कलनम्, कल्पः, क्षयः, उपक्षयः, भीमदुन्दुभिहासः, भीमसेनप्रियः, दशबाहुः, कपालहस्तः, चिताभस्मप्रियः, विभीषणः, भीष्मः, भीष्मव्रतधरः, विकृतवक्षः, खड्गजिह्वाग्रदंष्ट्री, पक्वाममांसलुब्धः, तुम्बवीणाप्रियः, वृषः, वृष्यः, वृष्णी, वृषणः, कटङ्कटः, सावयवः, वरकृष्णः, वरः, वरदः, वरगन्धमाल्यवस्त्रः, वरातिवरः, वर्षः, वातः, छाया, आतपः, रक्तविरक्तः, शोभनः, अक्षमाली,

देवादिदेव महादेव शिव

सम्भिन्नः, विभिन्नः, विविक्तः, विकटः, अघोररूपरूपः, घोरघोरतरः, शान्ततरः, एकपाद्, बहुनेत्रः, एकशीर्षः, वृद्धः, लुब्धः, संविभागप्रियः, पञ्चमालार्चिताङ्गः, पाशुपतः, घण्टः, घण्टया जग्धगृन्धीः, सहस्रशतघण्टः, घण्टामालाप्रियः, प्राणदण्डः, त्यागः, हिलहिलः, हुंहुंकारः, पारः, हुंहुंकारप्रियः, गिरिवृक्षफलः, गर्भमांसशृगालः, तारकः, तरः, यज्ञाधिपतिः, द्रुतः, उपद्रुतः, यज्ञवाहः, दानम्, तप्यम्, तपनः, तमस्तटः, भव्यः, तडितां पतिः, अन्नदः, अन्नपतिः, अन्नभवः, सहस्रशीर्षः, सहस्रचरणः, सहस्रोद्यतशूलः, सहस्रनयनः, बालरूपः, बालरूपधरः, बालानां गोप्ता, बालक्रीडनकः, शुद्धः, बुद्धः, क्षोभणः, अक्षतः, तरङ्गाङ्कितकेशः, मुक्तकेशः, षट्कर्मनिष्ठः, त्रिकर्मनिरतः, वर्णाश्रमाणां विधिवत्पृथक्कर्मप्रवर्ती, घोषः, घोष्यः, कलकलः, श्वेतपिङ्गलनेत्रः, कृष्णरक्तेक्षणः, धर्मार्थकाममोक्षः, क्रथः, क्रथनः, साङ्ख्यः, साङ्ख्यमुख्यः, योगाधिपतिः, रथ्यः, विरथ्यः, चतुष्पथरथः, कृष्णाजिनोत्तरीयः, व्यालयज्ञोपवीती, ईशानः, वज्रसंहः, हरिकेशः, अविवेकैकनाथः, व्यक्ताव्यक्तः, कामः, कामदः, कामघ्नः, घृष्टः, उद्दृप्तः, निषूदनः, सर्वः, सर्वदः, सर्वज्ञः, सन्ध्यारागः, महाबलः, महाबाहुः, महासत्त्वः, महाद्युतिः, महामेघवरप्रेक्षः, महाकालः, स्थूलः, जीर्णाङ्गजटी, वल्कलाजिनधारी, दीप्तसूर्याग्निजटी, वल्कलाजिनवासाः, सहस्रसूर्यप्रतिमः, तपोनित्यः, उन्मादनः, शतावर्तः, गङ्गतोयार्द्रमूर्धजः, चन्द्रावर्तः, युगावर्तः, मेघावर्तः, अन्नम्, अन्नकर्ता, अन्नदः, अन्नसष्ट, पक्ता, पक्वभुक्तपक्, जरायुजः, अण्डजः, स्वेदजः, उद्भिज्जः, देवदेवेशः, भूतग्रामचतुर्विधः, चराचरब्रह्मा, प्रतिहर्ता, ब्रह्मविदुषां वरः, ब्रह्मविदां वरः, सत्त्वस्य परमा योनिः, अप्, वायुः, ज्योतिषां निधिः, ऋक्, सामानि, ओङ्कारः, हविर्धानी, हवः, हावी, हुवां वाचाहुतिः, यजुर्मयः, ऋङ्मयः, सामाथर्वमयः, ब्राह्मणाः, क्षत्रियाः, वैश्याः, शूद्राः, वर्णवराः, मेघसंघाः, विश्वस्तनितगर्जितम्, संवत्सरः, ऋतवः, मासः, मासार्द्धम्, कला, काष्ठा, निमेषाः, नक्षत्राणि, युगाः, ग्रहाः, वृषककुदमः, गिरीणां शिखराणि, सिंहः, मृगाणाम्, पततां ताक्ष्यः, अनन्तः भोगिनाम्, क्षीरोदः उदधीनाम्, यन्त्राणां धनुः, प्रहरणानां वज्रम्, व्रतानां सत्यम्, इच्छा, द्वेषः, रागः, मोहः, क्षामः, दमः, शमः, व्यवसायः, धृतिः, लोभः, कामः, क्रोधः, जयः, अजयः, गदी, शरी, खट्वाङ्गी, भुर्भरी, छेत्ता, भेत्ता, प्रहर्ता, नेता, अन्तकः, धर्मः, अर्थः, कामः, इन्द्रः, समुद्राः, सरितः, पल्लवानि, संरासि, लतावली, तृणम्, औषध्यः, पशवः, मृगपक्षिणः, द्रव्यम्, कर्म, गुणः, आरम्भः, कालपुष्पफलप्रदः, आदिः, अन्तः, मध्यः, गायत्री, ओङ्कारः, हरितः, लोहितः, कृष्णः, नीलः, पीतः, अरुणः, कद्रुः, कपिलः, कपोतः, मेचकः, सुवर्णरेताः, विख्यातः सुवर्णः, सुवर्णनामा, सुवर्णप्रियः, इन्द्रः, यमः, वरुणः, धनदः, अनलः, उत्फुल्लः, चित्रभानुः, स्वर्भानुः, भानुः, होत्रम्, होता, होमः, हुतम्, प्रहुतम्, प्रभुः, सुपर्णः, ब्रह्म, यजूषां शतरुद्रियम्, पवित्राणां पवित्रम्, मङ्गलानां मङ्गलम्, गिरिः, स्तोकः, वृक्षः, जीवः, पुङ्गलः, सत्त्वम्, रजः, तमः, प्रजनम्, प्राणः,

देवादिदेव महादेव शिव

अपानः, समानः, उदानः, व्यानः, उन्मेषः, मेषः, जृम्भितम्, लोहिताङ्गः, गदी, दंष्ट्री, महावक्त्रः, महोदरः, शुचिरोमा, हरिच्छमश्रुः, ऊर्ध्वकेशः, त्रिलोचनः, गीतवादित्रनृत्याङ्गः, गीतवादनकप्रियः, मत्स्यः, जली, जलः, जल्यः, जवः, कालः, कली, कलः, निकालः, सुकालः, दुष्कालः, कालनाशनः, मृत्युः, क्षयः, अन्तः, क्षमापायकरः, हरः, संवर्तकः, अन्तकः, बलाहकः, वटः, घटीकः, घण्टीकः, चूडालोलबलः, बली, ब्रह्मकालः, अग्निवक्रः, दण्डी, मुण्डी, दण्डधृक्, चतुर्युगः, चतुर्वेदः, चतुर्होत्रः, चतुष्पथः, चतुराश्रमवेत्ता, चातुर्वर्ण्यकरः, क्षराक्षरप्रियः, धूर्तः, अगण्यः, अगण्यगणाधिपः, रक्तमाल्याम्बरधरः, गिरिशः, गिरिकप्रियः, शिल्पीशः, शिल्पिनां श्रेष्ठः, सर्वशिल्पप्रवर्तकः, मगनेत्रान्तकः, चन्द्रः, पूष्णो दन्तविनाशनः, स्वाहा, स्वधा, वषट्कारः, नमस्कारः, गूढावर्तः, गूढः, गूढप्रतिनिषेविता, तरणः, तारकः, सर्वभूतसुतारणः, धाता, विधाता, सत्त्वानां विधाता, धारणः, धरः, तपः, ब्रह्म, सत्यम्, ब्रह्मचर्यम्, आर्जवम्, भूतात्मा, भूतकृत्, भूतः, भव्यम्, भवः, उदभवः, भूः, भुवः, स्वः, इतिः, उत्पत्तिः, महेश्वरः, ईशानः, उदवीक्षणः, शान्तः, दुर्दान्तः, दन्तनाशनः, ब्रह्मावर्तः, सुरावर्तः, कामावर्तः, कामबिम्बनिहर्ता, कर्णिकाररजः प्रियः, मुखचन्द्रः, भीममुखः, सुमुखः, दुर्मुखः, मुखः, चतुर्मुखः, बहुमुखः, रणाभिमुखः, हिरण्यगर्भः, शकुनिः, महोदधि, परः, विराट्, अर्धमहा, महादण्डः, दण्डधारः, रणप्रियः, गौतमः, गोप्रतारः, गोवृषेश्वरवाहनः, धर्मकृत्, धर्मस्रष्टा, धर्मः, धर्मवित्, उत्तमः, त्रैलोक्यगोप्ता, गोविन्दः, मानदः, मानः, तिष्ठन्, स्थिरः, स्थाणुः, निष्कम्पः, कम्पः, दुर्वारणः, दुर्विषदः, दुः सहः, दुरतिक्रमः, दुर्धरः, दुष्प्रकम्पः, दुर्विदः, दुर्जयः, जयः, शशः, शशाङ्कः, शमनः, शीतोष्णम्, दुर्जरः, तृट्, आधयः, व्याधयः, व्याधिहा, व्याधिगः, सहायः, यज्ञः, मृगव्याधः, व्याधीनामाकरः, अकरः, शिखण्डी, पुण्डरीकाक्षः, पुण्डरीकावलोकनः, दण्डधारः, सदण्डः, दण्डमुण्डविभूषितः, विषपः, अमृतपः, सुरापः, क्षीरसोमपः, मधुपः, आज्यपः, सर्वपः, महाबलः, वृषाश्ववाह्यः, वृषभः, वृषभलोचनः, लोकानां विख्यातः, लोकसत्कृतः, अग्निः, आपः, देवः, धर्मकर्मप्रसाधितः, अनघः, भक्तानुकम्पी, दुर्वशः, योगात्मा, सर्वस्वम्, सर्वगः, सर्वभूतपतिः, सर्वभूतान्तरात्मा, देवेशः, शरणम्, गतिः, प्रतिष्ठा। इस स्तवन से आशुतोष शिव ने प्रसन्न होकर दक्ष को वर दिया, 'तुम हमारे प्रसाद से सहस्र अश्वमेध यज्ञ और सौ वाजपेय यज्ञों के फलभागी होओगे।' (वायु, 30/181-292)

दक्षयज्ञ-विध्वंस

एक वर्णन के अनुसार स्वयं शिव ने ही दक्ष-वध के लिए वीरभद्र का रूप धारण किया जिसके तीन नेत्र, तीन सिर थे। उनके आगमन-मात्र से देव, मुनि एवं पितृगण अत्यधिक पीड़ित होने लगे। यज्ञ पुरुष उनको देखकर भयभीत होकर मृगरूप धारण कर चारों ओर पलायन करने लगा तो शिव ने तुरन्त व्याध का रूप धारण कर लिया।

देवादिदेव महादेव शिव

अनन्तर व्याधरूपी शिव ने मृगरूपी यज्ञ के अङ्गों को छिन्न-भिन्न कर दिया। तब ब्रह्मा ने मधुरवाणी से उनका स्तवन कर शिव को शान्त किया। अन्ततः दक्ष का यज्ञ सुसम्पन्न हुआ। (भविष्य, प्रति, 4/10/73-76)

यह वर्णन भी उपलब्ध है— सती ने जब पति से उनके दक्ष-यज्ञ में सम्मिलित न होने का कारण पूछा तो शिव ने स्पष्ट रूप से बता दिया कि देवों ने यह परम्परा बनाई है कि शिव को किसी यज्ञ में भाग नहीं मिलेगा। सती के इस पर उद्विग्न हो जाने पर शिव ने उन्हें शान्त करते हुए समझाया, 'ब्राह्मण मुझे यज्ञपति मानकर मेरी स्तुति करते हैं। मेरे लिए रथन्तर सामगान करते हैं, वेद मन्त्रों से यज्ञ करते हैं और अध्वर्यु मुझे भाग देते हैं।' शिव के इस कथन को सती ने मात्र दम्भोक्ति कहकर उसे अनसुना कर दिया। पत्नी द्वारा की गई अवहेलना से शिव रुष्ट हो गए और सती से बोले, 'यह दम्भोक्ति नहीं है। अस्तु आज तुम्हारे मोह के कारण तीनों लोक नष्ट हो जाएंगे। मैं यज्ञ में अपने भाग के लिए यज्ञ नष्ट करूंगा।' यह कहकर शिव ने क्रोधाग्नि से अपने मुख से वीरभद्र को उत्पन्न किया जो सती के क्रोधभाव को जानकर दक्ष-यज्ञ नष्ट करने के लिए सती के साथ गया। क्रोधित भद्रकाली और महेश्वरी भी शिव-इच्छा से प्रेरित हो सती के साथ गई। (ब्रह्म, 39/36-39; शिव, रुद्र, सती, 25/9-22)

इन सभी से अभिनव एक अन्य उपाख्यान के अनुसार अत्यधिक कोमलहृदया तथा स्पर्शकातर सती ने जब सखी जया के मुख से इतना मात्र सुना कि 'दक्ष महान् यज्ञ कर रहे हैं जिसमें चौदह लोकों के सभी प्राणियों को आमन्त्रित करने पर भी शिव एवं सती को निमन्त्रित नहीं किया गया है' तो क्रोधाभिभूत होकर सती ने तत्क्षण प्राण त्याग दिए। यह जानकर शिव ने तत्काल अनेक गणों को उत्पन्न किया (वामन, 4/3-57)

जब उन सभी ने मिलकर दक्ष-यज्ञ का विध्वंस कर दिया, तब हताश एवं भयाक्रान्त दक्ष शिव की शरण में जाकर निम्न अभिधानों से शिव की स्तुति करने लगे — अकरः, अक्षयः, अक्षरः, अखण्डचन्द्राभिमुखः, अग्निः, अग्निष्टोमः, अघोरघोररूपः, अवलः, अजयः, अजय्यः, अण्डजः, अथर्वयुतः, अघर्महा, अनम्यः, अनलः, अन्तः, अन्धकघाती, अन्धकसूदनः, अन्नदः, अन्नदप्रभुः, अन्नदानकर्ता, अन्नपतिः, अन्नभुजः, अन्नभोक्ता, अपानः, अपारवान्, अप्यः, अप्रतिरूपः, अमुखः, अमृतपः, अम्बिकानाथः, अर्णवालयाः, अर्थः, अर्थपतिः, अर्धदण्डिकेशः, असत्, आकारः, आदिः, आदित्यः, आधयः, आपवः, आरम्भः, आर्जवम्, आश्रमसंघाः, इच्छा, इतः, इन्दुः, इन्द्रः, ईशानः, उग्रः, उत्करः, उत्थितः, उत्फुल्लश्चित्रमानुः, उदानः, उदभिज्जः, उन्मादनशतावर्तः, उन्मेषः, ऊर्ध्वकेशः, ऋक्, ऋण्यः, ऋतवः, ओङ्कारः, औषधिः, कदुः, कपालहस्तः,

देवादिदेव महादेव शिव

कपिलः, कपोतः, कर्णिकारस्रजप्रियः, कर्ता, कर्म, कलकलः, कला, कामः, कामघ्नः, कामदः, कामबिम्बविनिर्हन्ता, कामावर्तः, कारणम्, कारणकार्ये, कालः, कालक्रीडनकः, कालनाशनः, कालपुष्पप्रदः, कालफलप्रदः, कालाग्निवक्त्रः, काष्ठा, किलकिलः, कुटिलः, कुटिचरः, कुब्जः, कुम्भकर्णः, कृष्णः, कृष्णरक्तक्षेपणः, कृष्णाजिनोत्तरीयः, क्रथः, क्रथनः, क्रिया, क्रोधः, क्षणः, क्षत्रियः, क्षमा, क्षयः, क्षरः, क्षीरसोमपः, क्षीरोदह्युदधीनाम्, क्षुत्, क्षुत्तृषा, क्षोभणः, खट्वाङ्गी, खड्गहवोग्रदंष्ट्री, गङ्गातोयार्द्रमूर्धजः, गजेन्द्रकर्णः, गणाधिपः, गणैर्गण्यः, गदी, गायत्री, गिरिजाप्रियः, गिरिवृक्षप्रियः, गिरीशः, गिरिशिखराणि, गीतप्रियः, गीतवादित्रकारी, गीतवादित्रनुत्याङ्गः, गुणः, गूढः, गूढव्रतः, गूढव्रतनिषेवितः, गोकर्णः, गोगर्गः, गोनेता, गोप्ता, गोप्रचारः, गोविन्दः, गोवृषेश्वरवाहनः, घण्टाकी, घण्टकी, घण्टाजल्पः, घण्टामालाप्रियः, घण्टी, घोरघोरतरः, चक्रदण्डः, चक्षुषी, चण्डः, चण्डैकघण्टः, चतुर्मुखः, चतुर्युगः, चतुर्वेदः, चतुर्हन्त्रः, चतुष्पथः, चतुष्पथपथः, चन्द्रः, चन्द्रार्धसंयुगावर्तः, चराचरस्रष्टा, चलः, चतुराश्रम्यनेता, चातुर्वर्ण्यकरः, चापी, चूडालः, छेत्ता, जयः, जरा, जरायुजः, जलः, जलव्यालः, जालः, जृम्भा, ज्येष्ठः, ज्योतिषां निधिः, तक्षकः, तटः, तटिनीपति, तट्यः, तपः, तप्यः, तमः, तरङ्गाङ्कितकेशः, तरणः, तारणः, तिष्ठन्, तुम्बीवीणाप्रियः, तृड्, तृणः, त्रिकर्मनियतः, त्रिजटः, त्रिदण्डधृक्, त्रिनेत्रः, त्रिपुरघ्नः, त्रिशिर्षः, त्रिशूलवरधारी, त्रिसौपर्णः, त्रैलोक्यगोप्ता, त्र्यक्षः, त्र्यम्बकः, दंष्ट्री, दण्डधारः, दण्डधृक्, दण्डिदण्डः, दण्डी, दशबाहुः, दशलक्षणसंयुक्तः, दान्तः, दुर्मुखः, दुष्कालः, दुष्टोदधृत्तनिषूदनः, दुःसहः, दुरतिक्रमः, दुर्दुर्षः, दुर्वशः, दुर्धरः, दुर्वारणः, दुर्विषहः, देवदानवगोप्ता, देवदानवपूजितः, देवदेवेशः, देवेन्द्रः, देहः, द्रव्यम्, द्वेषः, धनदः, धरः, धर्मः, धर्मकर्मप्रसाधितः, धर्मकामार्थमोक्षः, धाता, धारणः, धावमानः, धूम्रः, धूर्तः, धृतिः, नक्षत्राणि, नमस्कारः, नम्यः, नर्तनशीलः, नानाविकृतवक्त्रः, नित्यः, निघाता, निमेषः, निष्कम्पः, नीलः, नीलग्रीवः, नेता, पक्षमासलवार्धः, पक्षी, पतङ्गः, पर्णसंघशयः, पल्वलानि, पवनः, पवित्रं पवित्राणाम्, पशवः, पशुपतिः, पितामहः, पीतः, पुण्डरीकः, पुण्डरीकावलोकनः, पूष्णः, दन्तविनाशनः, प्रतिहर्ता, प्रभवः, प्रभुः, प्रमथनाशः, प्रलयानलः, प्रस्तुतः, प्रहर्ता, प्राणः, प्राणदण्डः, प्रियः, बभ्रुः, बलप्रमथनः, बलश्रेष्ठः, बलाबलः, बलाहकः, बहुमुखः, बाधापट्टः, बालरूपधरः, बालार्करूपः, बालार्कवर्णः, बुद्धः, ब्रह्म, ब्रह्मचर्यम्, ब्रह्मा, ब्रह्मावर्तः, ब्राह्मणाः, भगः, भगनेत्रान्तकः, भगाकारप्रियः, भवः, भवोद्भवः, भव्यः, भानुः, भीमः, भीष्मव्रतधरः, भूः, भूतः, भूतकृत्, भूतग्रामचतुर्विधः, भूतात्मा, भेता, भोगिनामनन्तः, मङ्गलानां मङ्गलम्, मत्स्यः, मधुपः, मध्यः, मन्ता, मन्त्रः, मन्त्राणां प्रणवः, महाकर्णः, महादक्षः, महामूर्तिः, महावक्त्रः, महेश्वरः, महोदरः, मायाकरः, मासाः, मासार्धम्, मुखवादित्रकारी, मुण्डः, मुक्तकेशः, मुद्गरी, मूर्तिमान्, मृगः, मृगपतिसिंहः, मृत्युः, मेघावर्तः, मोहः, यक्षाधिपप्रियः, यजुर्मयः, यजुषां शतरुद्रियम्, यज्ञमृगव्याधः,

देवादिदेव महादेव शिव

यज्ञवाहः, यज्ञाधिपतिः, यमः, युगानि, योगाधिपतिः, रणप्रियः, रजः, रक्तमाल्याम्बरधरः, रथ्याधिरथ्यः, रागः, रुद्रः, रुद्रसंघातः, रौद्रभागविनाशनः, लता, लवणोदधिः, लुब्धः, लोकनाथः, लोकानां लोकसंस्कृतः, लोभः, लोहितः, लोहिताङ्गः, वज्रं प्रहरणानाम्, वरदः, वरुणः, वर्णाश्रम-विधिवत्पृथग्धर्मप्रवर्ती, वर्णाश्रमाः, वर्तकः, वल्लीः, वषट्कारः, वादनकप्रियः, विकालः, विकृतः, विजयः, विद्युत्, विधाता, विभीषणः, विराट्, विरूपः, विरूपाक्षः, विलोहितः, विश्वचण्डधरः, विश्वेशः, विषपः, वृषककुद्म्, वृषभः, वृषभलोचनः, वृषभविख्यातः, वृषस्कन्धः, वृषाङ्गारम्भः, वैश्याः, व्यक्ताव्यक्तः, व्यवसायः, व्याधयः, व्याधिनामाकरः, व्याधिपः, व्याधिहा, व्यानः, व्यालयज्ञोपवीती, व्रतानां सत्यम्, शकुनिः, शङ्कुकर्णः, शतकर्णः, शतक्रतुः, शतजिह्वः, शतावर्तः, शतोदरः, शत्रुघातः, शमः, शयमानः, शयितः, शरी, शर्वः, शशः, शशाङ्कनयनः, शान्तः, शान्तमयः, शिखण्डी, शिल्पिनां श्रेष्ठः, शिल्पीशः, शिवः, शीतोष्णम्, शुक्लध्वजपताकी, शुचिरोमा, शुद्धः, शुष्कः, शुद्धाः, श्वेतपिङ्गलनेत्रः, श्रेष्ठः, षट्कर्मनिष्ठः, संवर्तकः, संवत्सरः, संविभागप्रियः, संवर्तः, सत्, सत्यम्, सत्वयुतः, सदारणेष्वभिमुखः, सद्योजातः, सनातनः, सन्धाता, समानः, समुद्रः, सरांसि, सरितः, सर्वः, सर्वगर्हितसर्वघ्नः, सर्वतः श्रुतिमान्, सर्वतः पाणिपादः, सर्वतोक्षिशिरोमुखः, सर्वपः, सर्वभक्षः, सर्वभूतान्तरात्मा, सर्वभूतेषु तारणः, सर्वशिल्पप्रवर्तकः, सर्वस्य परमायोनिः, सहस्रचरणः, सहस्रनयनः, सहस्रशतघण्टः, सहस्रशीर्षः, सहस्राक्षः, सहस्रोद्धतशूलः, सह्यः, साङ्ख्यपरः, साङ्ख्यः, साङ्ख्यमुख्यः, सामः, सामयुतः, सुकालः, सुधांशु, सुनिश्चलः, सुमुखः, सुरापः, सुरावर्तः, सुवर्णः, सुवर्णनाभः, सुवर्णप्रियः, सुवर्णरिताः, सूर्यः, सूर्यध्वजपताकी, सूर्यपतिः, स्तनितम्, स्तुतः, स्तुतिः, स्तूयमानः, स्थितः, स्थिरः, स्थाणुः, स्वः, स्वधा, स्वर्मानुः, स्वाहा, स्वदेजः, हरिकेशः, हरिच्छमश्रुः, हरितः, हिरण्यकवचः, हिरण्यकृतचूडः, हिरण्यगर्भः, हिरण्यपतिः, हुतम्, हुंकारः, हृदयम्, होता, होत्रम्, होमः, होम्यम्। (ब्रह्म, 40/2-82)

उल्लेखनीय यह है कि जिस समय दक्ष के यज्ञ को विनष्ट किया जा रहा था उस समय स्वयं शिवभक्त तथा शिवप्रिय होने पर भी विष्णु ने स्वयं को दक्ष का आमन्त्रित मान दक्ष का पक्षधर और शिव का विपक्षी बन कर युद्ध करना प्रारम्भ कर दिया। वीरभद्र आदि के द्वारा देवों के अङ्ग-भङ्ग को किया जाता हुआ देखकर विष्णु ने अपने अमोघ चक्र को चला दिया किन्तु शिवमहिमा से उनका चक्र व्यर्थ हो गया तो यज्ञस्थली से विष्णु अपने लोक को चले गए। तब क्रुद्ध शिव को सन्तुष्ट करने के लिए दक्ष ने निम्न अभिधानों को परिगणित करते हुए शिव का स्तवन किया— शङ्करः, सोमेशः, सर्वज्ञः, शम्भुः, कल्याणभृत्, कालात्मा, आदिकर्ता, नीलकण्ठः, ब्रह्मप्रियः, ब्रह्मरूपः, त्रिमूर्तिः, त्रिधामः, परमेश्वरः, सर्वमूर्तिः, त्रैलोक्याधारः, कामदः, वेदान्तवेद्यः,

देवादिदेव महादेव शिव

परमात्मा, यज्ञरूपः, यज्ञधामः, यज्ञदानः, हव्यवाहः, यज्ञहर्ता, फलदः, जगन्नाथः, शरणवत्सलः, भक्तानामभक्तानां शरणम्। (ब्रह्म, 109/30-35)

इसी विध्वंस की अवधि में एक अन्य उल्लेखनीय घटना घटित हुई— शिव की जटा से उत्पन्न वीरभद्र ने जब शिव के प्रधान विरोधी प्रजापति दक्ष का सिर काट दिया तब पुत्रशोक से कातर होकर स्वयं लोकपितामह ब्रह्मा ने शिव की शरण ली, उनके चरणों का स्पर्श किया और निम्न नामों का उच्चारण करते हुए शिव की स्तुति की — धाता, विश्वबीजः, सर्वारम्भप्रवर्तकः, पितामहः, जगदानन्दहेतुः, यज्ञः, ब्रह्मा, यज्ञकर्म, यज्ञानां प्रवर्तकः, विश्वसृजां स्रष्टा, विश्वः, वषट्कारः, यज्ञकर्तृणां प्रतिपालकः। (स्कन्द, माहे, केदार, 5/16-19)

शिव को निमित्त बनाकर दक्ष के यज्ञ-विध्वंस का एक परिवर्तित चित्रण यह भी है— एक बार शिव द्वारा शोभित नैमिषारण्य में देवों, ऋषियों, असुरों आदि की सभा में प्रजापति दक्ष का आगमन हुआ तो उनके स्वागत, अभिवादन में सभी तत्पर हुए किन्तु शिव निर्लिप्त ही रहे। इस पर अपमानित दक्ष ने अपने जामाता शिव को यज्ञबाह्य होने का शाप दे दिया। शिव तो निर्विकार रहे किन्तु उनके गण नन्दी ने प्रतिशाप दिया तो शिव ने स्मित बिखेरते हुए कह दिया कि ब्राह्मण पर शाप प्रभावी नहीं होगा। (वही, माहे, केदार, 1/20-27, 39) शिव को इससे पूर्व भी यज्ञबाह्य होने का शाप प्राप्त हो चुका था। हुआ यह था कि भृगु ऋषि जब शिव का दर्शन करने आए तब शिव पत्नी के साथ एकान्त का सेवन कर रहे थे अतः नन्दी ने भृगु को द्वार पर ही रोक दिया। कई दिनों तक प्रतीक्षा करने पर भी जब उन्हें शिव का दर्शन नहीं हुआ तो क्रुद्ध ब्राह्मण ने शिव को शाप दिया, 'नारी सङ्गम के कारण मुझ ब्राह्मण की अवहेलना करने वाले शिव लिङ्ग रूप में ब्राह्मणों के अपूज्य होंगे, उन्हें प्रदान किये जाने वाले हवि, अन्न आदि असेव्य होंगे, भस्म, अस्थि आदि धारी शिवभक्त शिव के साथ वेदबाह्य होंगे।' (पद्म, उत्तर, 255/28-36)

एक चित्र यह भी उपलब्ध है — कुछ समय उपरान्त दक्ष ने यज्ञ किया तो शिव के अतिरिक्त अन्य सभी को आमन्त्रित किया। इस पर ऋषि दधीचि ने शिव के बिना यज्ञ को अशोभनीय कहा। दूसरी ओर अनामन्त्रित सती जब यज्ञ में जाने को उद्यत हुई तो विचक्षण शिव ने उन्हें इस प्रयास से निवृत्त करना चाहा किन्तु सती के हठ करने पर शिव ने अपने साठ सहस्र गणों के साथ सती को उनके पित्रालय भेज तो दिया किन्तु अपने मन में वे निश्चित थे कि अपमानित सती पुनः उनके निकट नहीं आएंगी।

शिव की आशङ्का के सत्य होने पर शिव ने कोपानल में दग्ध होकर अपनी एक

देवादिदेव महादेव शिव

जटा उखाड़ी और उसे पर्वत पर दे मारी। उसी से वीरभद्र और कोटि-कोटि भूतों से आवृत्त देवी काली उत्पन्न हुई। दक्षयज्ञ नष्ट करने की शिव की आज्ञा प्राप्त कर वे सभी यज्ञस्थल पर जाकर सभी कुछ विध्वंस करने लगे। तब भयभीत दक्ष ने विष्णु से रक्षा की प्रार्थना की किन्तु शिवभक्त विष्णु ने स्पष्ट कह दिया, 'सदाशिव स्वयं यज्ञरूप हैं। उनको ही यज्ञबाह्य करने वाले तुम्हारी कोई रक्षा नहीं कर सकता है' और तब यज्ञ का पूर्ण विध्वंस हो गया। (स्कन्द, माहे, केदार, 2/26-78) यह भी माना जाता है कि स्वयं विष्णु ने ही मध्यस्थता करते हुए शिव को शान्त किया तथा उनसे अनुरोध करके यज्ञ को पूर्ववत् स्थिति में लाकर असमाप्त यज्ञ को सम्पन्न करवाया। शिव ने दक्ष को बकरे का सिर लगाकर जीवित किया। (वही, रुद्र, सती, 41/48-52, 42/6-42)

शान्त हुए शिव ने दक्ष को समझाया, 'तुम केवल कर्म के आधार पर संसार-अर्णव से पार उतरना चाहते हो अतः मैंने रुष्ट होकर तुम्हारे यज्ञ को विनष्ट किया था। अब से मेरे प्रति परमेश्वर भाव रखकर बुद्धि से ज्ञान में तत्पर होकर कर्म करो। ब्रह्मा की भक्ति के बिना विष्णु की और विष्णु की भक्ति के बिना मेरी भक्ति सार्थक नहीं होती है।' (वही, रुद्र, सती, 43/3-19)

लिङ्ग पुराण के अनुसार प्रपितामह ब्रह्मा की प्रार्थना से शिव शान्त हुए, अपने क्रोध का दमन किया और तब वीरभद्र आदि के द्वारा दक्षयज्ञ के विध्वंसन में मारे गए व्यक्तियों को जीवन-दान दिया। उन्होंने इन्द्र, विष्णु, दक्ष, मुनीन्द्रों आदि को उनके सिर आदि अङ्ग लौट दिए, सरस्वती को उनकी नासिका प्रदान की और उन सभी को विविध वर भी दिए। दक्ष की स्तुति से तुष्ट होकर शिव ने उसे गाणपत्य भी प्रदान किया। (लिङ्ग, पूर्व, 100/42-49)

यह भी मान्यता है कि यज्ञ-विध्वंसन से जब पृथ्वी भी कम्पायमान होने लगी तो ब्रह्मा ने शिव की भक्तिपूर्वक पूजा की और निवेदन किया, 'आपको सभी देव भाग देंगे। हे देवादिदेव, हे देवेश्वर, आप संहार को रोकने की कृपा कीजिए। आपके क्रोध के कारण देवता तथा मुनिगण कोई भी शान्ति प्राप्त नहीं कर रहा है।' तब शिव ने उनकी प्रार्थना को मान लिया और शरणागत दक्ष को भी क्षमा किया। (ब्रह्म, 39/83-90)

यह भी माना जाता है कि जब दिव्य एक सहस्र वर्ष पर्यन्त शिव और विष्णु के मध्य भयङ्कर युद्ध हुआ तो ब्रह्मा ने मध्यस्थता करते हुए उन दोनों को शान्त किया और दोनों को देवलोक में ख्याति प्राप्त करने का वर दिया। उन्होंने यज्ञ के पूर्ण होने का आश्वासन देते हुए पुत्र दक्ष को शिव को यज्ञभाग समर्पित करने का आदेश दिया

देवादिदेव महादेव शिव

और रुद्र शिव के सबसे बड़े भाग की घोषणा भी की। (वाराह, 21/44-50) एक वर्णन यह भी प्राप्त होता है कि यज्ञ में भाग प्राप्त न होने पर शिव ने यज्ञपशु को ही अपना भाग कहकर उसका हरण कर लिया। तब देवताओं ने नाना स्तोत्रों से शिव को सन्तुष्ट किया, यज्ञ से उनका तर्पण किया, उनको अत्यधिक सम्मान दिया और यह सङ्कल्प किया कि शिव को सभी भागों में से श्रेष्ठ भाग दिया जायेगा। (महा, आर, 114/7-11)

महाभारत के अनुसार दक्षयज्ञ विध्वंस के समय शिव के सक्रिय होने का चित्रण सर्वथा पृथक् है। तदनुसार देवों ने जब यज्ञ करने का सङ्कल्प किया तो शिव के सम्बन्ध में उचित ज्ञान न होने के कारण उन्होंने उस यज्ञ में शिव का भाग निर्धारित नहीं किया। तब शिव ने भाग प्राप्त करने के लिए सर्वप्रथम धनुष का निर्माण किया। वह धनुष पांच हाथ प्रमाण का था। तब उस धनुष पर बाण चढ़ाकर यज्ञ के हृदय पर प्रहार किया। यज्ञ भयभीत हो मृग का रूप धारण कर अग्नि के साथ पलायन करने लगा। शिव ने क्रुद्ध होकर अपने धनुष से सविता के बाहु, भग के नेत्र और पूषा के दांत तोड़ दिए। तब यज्ञ के साथ देवगण भी यत्र-तत्र पलायन करने लगे। कुछ तो निष्प्राण हो वहीं गिर गए। देवों के अनुरोध पर वादेवी ने शिव के धनुष की प्रत्यश्चा तोड़ दी। ऐसी भयानक स्थिति में भयाक्रान्त देवता शिव की शरण में गए तो दयासिन्धु शिव ने अपना क्रोध सागर में निक्षिप्त कर दिया जो आज भी वडवाग्नि के रूप में धधक रहा है। इसके उपरान्त शिव ने देवों के भग्न अङ्गों को स्वस्थ कर सभी को जीवनदान दिया। (वही, सौप्तिक, 18/3-22)

यह वर्णन भी मिलता है कि यज्ञ के विध्वंस हो जाने के उपरान्त ब्रह्मा ने शिव की प्रशंसा करते हुए कहा, 'दक्ष के याजकों ने आपको यज्ञ भाग नहीं दिया, यह उनका मूर्खतापूर्ण कार्य है। आप अब इस यज्ञ का उद्धार करें, अपूर्ण यज्ञ को पूर्ण करने के लिए दक्ष तथा अन्य सभी को जीवनदान दें। भङ्ग अङ्गवालों को पुनः पूर्ववत् बना दें। यज्ञपूर्ण होने पर आपका भाग भी निश्चित होगा।' तब शिव ने दक्ष जैसे अज्ञानी के अपराध की चर्चा को भी अनावश्यक कहा और दक्ष के जले सिर के स्थान पर छाग सिर लगाया, भगदेव को मित्र देव के नेत्रों से देखने का निर्देश दिया। दन्तहीन पूषा देव को पीसा अन्न खाने वाले कहकर यजमान के दांतों से खाने का आदेश दिया। शेष सभी कुछ उन्होंने पूर्ववत् कर दिया। (भाग, 4/6/50-53, 4/7/3-4)

दक्ष-यज्ञ-विध्वंस के उपरान्त शिव के शान्त हो जाने पर देवगण ने निम्न अभिधानों से उनकी स्तुति की - अखिललोकर्ता, अखिललोकपाता, अखिललोकहर्ता, आत्ममूर्तिः, सर्वमूर्तिः, विश्वभावनः, विश्वपावनः, अमूर्तिः, सौख्यदः, गृहीताकृतिः, घृणानिधिः, सर्वगर्वापहारी, सर्वतेजोविलासकः, सर्वविद्यादिगूढः, सर्वानुग्रहकारकः,

देवादिदेव महादेव शिव

गिरीश्वरः, प्रणतार्तिविभञ्जनः, जगन्नाथः, लोकानुग्रहकारकः। (शिव, वाय, पूर्व, 23/20-40)

विधुर शिव

दक्ष-यज्ञ के पुनः सम्पन्न हो जाने पर और अन्यत्र शान्ति विराजित होने पर भी शिव अत्यधिक शोकाकुल और उद्वेलित रहे। प्रिया सती के दग्ध शरीर को अपने स्कन्ध पर उठाकर विचरण करते हुए शिव जब शतशृङ्ग गिरि के समीप निर्जन प्रदेश में अज्ञयवट के निम्न भाग में गङ्गातट पर पहुँचे तो वे अपने को सुस्थिर न रख पाए और मुक्तकण्ठ से रोदन करने लगे। शिव के नेत्रजल से वहाँ एक सरोवर का निर्माण हो गया। महायोगी शङ्कर इस भाँति एक वर्ष तक विरहाकुल होकर भ्रमण करते रहे। देवी सती के मृतदेह के अङ्ग-प्रत्यङ्ग जिस जिस स्थान पर भूषित हुए वह वह स्थान सिद्धपीठ बन गया। अनन्तर सती के अवशिष्ट अङ्गों का संस्कार करके उनकी अस्थियों की माला बनाकर उन्होंने कण्ठ में धारण किया और प्रतिदिन सती के देहभस्म का लेप करने लगे। उस मानसिक अस्थिरता में विरही शिव ने अपने आराध्य परमात्मा को भी विस्मृत कर दिया था। वे हाथ जोड़कर प्रकृतिरूपिणी अपनी प्रिया को सम्बोधित करते तथा आत्मरक्षा की प्रार्थना करते। शिव की उस प्रार्थना का ही परिणाम था कि शिव ने आकाश में स्थित रत्नमय रथ पर विराजित देवी सती को देखा। तब ब्रह्मा, विष्णु, धर्म, शेष आदि देवों ने भी देवी सती से शिव की रक्षा करने की प्रार्थना की। देवी तब प्रसन्न हो गई और शिव से कहा, 'आप धैर्य धारण कीजिए। आप मुझे मेरे प्राणों से भी अधिक प्रिय हैं। आप ही मेरे जन्म जन्मान्तर के स्वामी हैं। मेरी आत्मा हैं। मैं शीघ्र ही हिमालय पर्वत की पत्नी मेना से जन्म लेकर आपकी पत्नी बनूँगी।' इस आश्वासन वाणी से पुनरुज्जीवित की भाँति प्रसन्न हो शिव प्रशान्त मन से कैलाश पर्वत पर चले गए। (ब्रह्मवै, श्रीकृष्ण, पूर्व, 43/25-106) उल्लेखनीय है कि शिव जब अक्षयवट के समीप पहुँचे तब शैलराज हिमालय ने धर्म द्वारा प्रदत्त स्तोत्र से शिव का जो स्तवन किया उसमें प्रयुक्त नाम हैं - ब्रह्मा सृष्टिकर्ता, विष्णुः परिपालकः, शिवः शिवदः, अनन्तः सर्वसंहारकः, ज्योतीरूपः, प्रकृतीशः, प्राकृतः, प्रकृतेः परः, नानारूपविधाता, सूर्यः सृष्टिजनकः, आधारः सर्वतेजसाम्, सोमः सस्यपाता, देवराजः, यमः, मृत्युमृत्युः, वेदकर्ता, वेदवेदाङ्गपारगः, विदुषां जनकः, विद्वान्, विदुषां गुरुः, मन्त्रः, जपः, तपः, तपः फलप्रदः, वाक्, वाग्धिदेवी, वाक्कर्ता, वाग्गुरुः। (ब्रह्मवै, श्रीकृष्ण, पूर्व, 38/63-72)

इसी घटना का एक चित्रण यह भी है- सर्वात्मा होने पर भी शिव सतीदाह से अत्यधिक कातर होकर एक वर्ष तक सती के निष्प्राण देह को उठाये हुए अनिश्चित

देवादिदेव महादेव शिव

भाव से घूमते रहे और रोदन करते रहे। इसी मध्य सती की देह का आलिङ्गन करके वे सिद्ध क्षेत्र में मूर्च्छित होकर गिर पड़े। उस समय स्वयं विष्णु वहां पहुंचे और शिव को अपने अङ्ग में धारण करके उन्हें नाना भांति से प्रबोधित किया और शोक-विनाशक परम तत्त्व प्रदान किया। इसके उपरान्त शिव शान्त हुए और अपनी दूसरी मूर्ति काल के द्वारा सती को प्राप्त किया। (वही, श्रीकृष्ण, पूर्व, 36/95-97)

यह चित्रण भी उपलब्ध है - सती के शरीर-त्याग के उपरान्त शोकविमूढ विलापरत शिव सती के शव को कन्धे पर रखकर पूर्व देशों की ओर गए। देवों ने सोचा कि शिव के शरीर-स्पर्श से सती का शव सड़ेगा नहीं अतः गिरेगा भी नहीं। तब सोच-विचारकर ब्रह्मा, विष्णु तथा शनि ने उस शरीर में सूक्ष्म रूप से प्रवेश किया तथा शरीर के अङ्गों को काट-काटकर भूमि पर गिराने लगे। जहां जहां सती के अङ्ग गिरे उनके प्रति स्नेहवश शिव वहां वहां लिङ्गरूप में आविर्भूत होने लगे। (कालिका, 18/36-46)

यह भी माना जाता है कि दक्ष-यज्ञ में सती के देह-त्यागने के उपरान्त शिव के क्रोध से विपदा आ गई। अन्त में महादेव ने देवों को अभय दिया और बकरे के मुख के साथ दक्ष के पुनर्जीवित होने की व्यवस्था कर दी। शिव जब यज्ञस्थल पहुंचे तो सती के वियोग में दुःखी होकर रुदन करने लगे। सती की भस्मप्रायः देह को अपने कन्धे पर रखकर भ्रान्तचित्त होकर 'हा सती, हा सती' कहकर विलाप करते हुए सर्वत्र विचरण करने लगे। शिव को इस दयनीय स्थिति में देखकर ब्रह्मा आदि चिन्तित हो गए। तब वे विष्णु की शरण में गए। विष्णु ने अपना धनुष उठाकर बाणों से सती के अङ्गों को काटना प्रारम्भ किया। सती के अङ्ग जिस जिस स्थान पर गिरे, वहां पर नाना मूर्ति धारण करने वाले शिव प्रकट हो गए। उन्होंने कहा, 'इन स्थानों पर जो व्यक्ति भक्तिपूर्वक शिवा सती का ध्यान करेगा, उनका अर्चन-वन्दन करेगा, उसके लिए कुछ भी दुर्लभ नहीं होगा।' स्वयं शिव ने सती के विरह में उन-उन स्थानों पर जप, ध्यान और समाधि के द्वारा काल व्यतीत किया था। उक्त स्थल संख्या में एक सौ आठ हैं और तदनुरूप प्रत्येक स्थल पर नूतन नामों से देवी के विराजित होने से उनके नाम भी एक सौ आठ ही हैं जो सभी पवित्र तीर्थ हैं। (देवी, 7/30/56-79)

स्वयं ईश्वर देवादिदेव महादेव शिव का इस भांति पत्नी से वियुक्त होना और उसके लिए शोकाकुल होना कोई सामान्य घटना तो थी नहीं। वस्तुतः इसकी पृष्ठभूमि में एक अन्य साध्वी का शाप ही बली था। हुआ यह कि ब्रह्मा जब हाटकेश्वर क्षेत्र में तप करने के लिए दीक्षित हुए तो उनकी पत्नी सावित्री ने आने में विलम्ब कर दिया। इससे कुपित ब्रह्मा ने गायत्री से विवाह कर लिया। यज्ञभूमि में पहुंचकर और वस्तुस्थिति जानकर रुष्टा सावित्री ने ब्रह्मा को तो शापित किया ही, साथ ही ब्रह्मा के समीप

देवादिदेव महादेव शिव

उपस्थित होकर मात्र मौन द्रष्टा बनकर जिन्होंने ब्रह्मा के इस अनाचार का समर्थन अथवा अनुमोदन किया था, उन्हें भी सावित्री के शाप का भाजन बनना पड़ा था। तभी शिव को सावित्री ने प्रिया की मृत्यु तथा उसके विरह-दुःख में शिव के दग्ध होने का शाप दिया था। (स्कन्द, नागर, 192/69-72)

दारुवन में शिव

इसी अवधि में एक बार शिव दारुवन में दिगम्बर होकर भिक्षाटन करने लगे। सती के विरह में उन्हें अन्य कोई नारी प्रलुब्ध नहीं करती थी किन्तु इसके विपरीत दारुवन में उनको देखकर ऋषिपत्नियां उनके प्रति प्रलुब्ध हो गईं और उन्हीं की अनुगामिनी बनीं। ऋषियों को जब इस घटना का ज्ञान हुआ तो उन्होंने विक्षुब्ध होकर शिव को शाप दिया, 'हमारी पत्नियों का अपहरण करने वाले तुम शीघ्र ही नपुंसक हो जाओ।' शापित होते ही शिव का लिङ्ग भूपतित हो गया और वह बढ़ने लगा। वह लिङ्ग सप्त पाताल, सम्पूर्ण पृथ्वी, अन्तरिक्ष, स्वर्ग-सभी को आवृत कर बढ़ता ही रहा। उसी में दिशाएं, आकाश सभी कुछ लीन होने लगी। सब कुछ को अपने में लीन करने के कारण ही वह लिङ्ग कहलाया। उस लिङ्ग के इस विस्तार से विस्मित देवताओं और ऋषियों ने उसका मूल जानने के लिए विष्णु से और उसका अन्त जानने के लिए ब्रह्मा से अनुरोध किया। (वही, माहे, केदार, 6/2-33)

इस कथानक का रूपान्तर इस प्रकार है- कापालिक वेष में विरही शिव भिक्षा के लिए जब आनर्त देश में मुनियों के आश्रम में प्रविष्ट हुए तो तापसियां उन्हें देखकर काममोहित हुईं। तब मुनियों द्वारा शापित शिव के लिङ्गपतन हो जाने से लज्जित शिव एक गह्वर में भ्रूणरूप धारण कर प्रविष्ट हो गए। उनके लिङ्गपतन से सर्वत्र उत्पात होने लगे। इस कारण ब्रह्मा और विष्णु सहित सभी देवगण गह्वर में शिव के समीप गए तथा उनसे भ्रूणतित लिङ्ग को पुनः धारण करने का अनुरोध किया। तब शिव ने स्पष्ट किया कि उन्होंने सती के विरह में निष्प्रयोजन जानकर ब्राह्मणों के शाप के बहाने से स्वयं ही लिङ्ग को गिरा दिया है, अन्यथा किसी अन्य में उनके लिङ्गपात करने की सामर्थ्य नहीं है। (वही, नागर, 1/5-52)

स्कन्द पुराण में ही अन्यत्र एक सम्पूर्ण विपरीत विवरण उपलब्ध है। तदनुसार शिव की प्राणप्रिया पार्वती ने ही एक बार हठ किया कि दारुवनवासी ब्राह्मण-पत्नियों, जिनकी सभी व्यक्ति साध्वी और पतिसेवापरायणा कहकर प्रशंसा करते हैं, को शिव कामासक्त कर दें। शिव प्रारम्भ में इस कृत्य के अनौचित्य को भांपकर मना करते रहे किन्तु स्त्रीहठ के समक्ष उन्हें समर्पण करना पड़ा और वे कापालिक के रूप में डमरु

देवादिदेव महादेव शिव

बजाते हुए उस आश्रम में गए, अपने दर्शनमात्र से उन साधवियों को कामातुर बनाया और अपने स्थान पर लौट आए। आश्रम में लौटकर पत्नियों की इस लज्जाजनक स्थिति को देखकर तथा तपोशक्ति से शिव के कृत्य को जानकर उन ब्राह्मणों ने क्रुद्ध होकर शिव को लिङ्गपतन का शाप दिया। भूमि पर लिङ्ग के गिरते ही भयानक शब्द के साथ उल्कापात हुआ। इससे ब्रह्मा ने वस्तुस्थिति जान ली और प्रतीकार बताया कि तपस्वी ब्राह्मणों को सन्तुष्ट करके ही उन्हें शाप से मुक्ति मिलेगी।

इसके उपरान्त विश्वामित्र, वसिष्ठ, जाबालि आदि मुनियों ने शिव को समझाया, 'ब्राह्मणों का ब्रह्मतेज प्रबल होता है अतः आप ही क्षमाशील होकर तपस्या के द्वारा पापहीन हो जाएं। लिङ्गपूजन से जितना और जैसा पुण्य प्राप्त होता है उतना और वैसा पुण्य अग्निष्टोम आदि से नहीं मिलता है। अतः आपके पापमुक्त होते ही यह लिङ्ग भी पूज्य हो जाएगा।' तब शिव ने नर्मदा के तट पर जाकर गुहावासी होकर सहस्रों वर्षों तक कठोर तप किया। नियम के पूर्ण होने पर वहां लिङ्ग स्थापित कर वे कैलास लौट आए। शिव द्वारा स्थापित वह लिङ्ग ही नर्मदेश्वर नाम से प्रख्यात हुआ। (वही, आव, रेवा, 38/15-68)

वामन पुराण के अनुसार दिगम्बर शिव के प्रति पत्नियों को कामासक्त होते देखकर क्रुद्ध (मुनियों) ने अपने हाथों में लकड़ी, पत्थर आदि लेकर शिव पर आघात कर उनके लिङ्ग को ही उखाड़ कर फेंक दिया। लिङ्ग गिराये जाने पर शिव अन्तर्धान हो गए। शिव के लिङ्गपात से चराचर नष्ट होने लगा। इससे आत्मज्ञानी मुनिजन व्याकुल होकर ब्रह्मा की शरण में गए तो ब्रह्मा ने सर्वस्वत्यागी होकर भी उनके क्रोध तथा कामासक्त होने को अनुचित मानकर उन मुनियों का तिरस्कार किया। ब्रह्मा के अनुसार क्रोधी का तप, जप सब व्यर्थ होता है। (वामन, 43/49-86) अन्ततः ब्रह्मा उन मुनियों को साथ लेकर कैलाश में शिव के निकट गए और निम्न अभिधानों से शिव-स्तुति की— भुवनेशः, तारकः, ज्ञानदायकः, घोरशान्तिस्वरूपः, चण्डक्रोधः, विश्वेशः, सुरनायकः, विश्वभावन, पद्मेशः, पुरुषोत्तमः। (वही, 44/5-8) तब शिव ने उनको लौट जाने और लिङ्ग को सन्निहित अथवा सन्निहित सरोवर में स्थाप्य नाम से स्थापित करने का आदेश दिया। ऋषियों ने आकर शिव-लिङ्ग को उठाने का प्रयास किया किन्तु असफल रहे। तब वे पुनः शिव की शरण में गए। वहां जाकर उन्हें शिव के दर्शन नहीं हुए तो चिन्ताकुल वे सभी देवी की शरण में गए। जगदम्बा ने उन्हें अमृतपान करवाया। तब उन्होंने सरोवर के मध्य में गजरूपी शिव को देखा और उनसे लिङ्ग को उठाने में अपनी असफलता की बात बताई। गजरूपी शिव ने देवदारुवन में जाकर अनायास उस लिङ्ग को अपनी सूंड से उठाकर रख दिया।

देवादिदेव महादेव शिव

शिव ने जब हाथी का रूप धारण करके भूपतित लिङ्ग को लाकर कुरुक्षेत्र में सन्निहति सर के समीप स्थापित कर दिया तब देवताओं तथा तपस्वियों ने जिन नामों से उनकी स्तुति की उनमें से कतिपय नाम हैं - परमात्मा, अनन्तयोनिः, लोकसाक्षी, परमेष्ठी, क्षेत्रज्ञः, परावरज्ञः, महाविरिञ्चः, महाविभूतिः, महाक्षेत्रज्ञः, महापुरुषः, सर्वभूतावासः, मनोनिवासः, आदिदेवः, महादेवः, दुर्विज्ञेयः, दुराराध्यः, महाभूतेश्वरः, महायोगेश्वरः, ब्रह्मविदुत्तमः, स्वधाकारः, परमकारणः, सर्वगतः, सर्वदर्शी, सर्वशक्तिः, सर्वदेवः, सहस्रार्चिः, पृषार्चिः, सुधामा, हरधाम, अनन्तधाम, सम्बर्तः, सङ्कर्षणः, वडवानलः, अग्नीषोमात्मकः, महापवित्रः, महामेघः, महामायाधरः, महाकामः, कामघ्नः, हंसः, परमहंसः, महाराजिकः, महाकामुकः, महाहंसः, भवक्षयकरः, सुरसिद्धार्चितः, हिरण्यवाहः, हिरण्यरेता, हिरण्यनाभः, हिरण्याग्रकेशः, मुअकेशी, सर्वलोकवरप्रदः, सर्वानुग्रहकरः, कमलेशयः, कुशेशयः, हृदयेशयः, ज्ञानोदधिः, विभुः, महायज्ञः, महायाज्ञिकः, सर्वयज्ञमयः, सर्वयज्ञहृदयः, सर्वयज्ञसंस्तुतः, निराश्रयः, समुद्रेशयः, अत्रिसम्भवः, भक्तानुकम्पी, अभग्नयोगः, योगधरः, वासुकिमहामणिः, विद्योतितविग्रहः, हरितनयनः, चन्द्रार्धधरः, उमाशरीरार्धहरः, गजचर्मधरः, दुस्तरसंसारमहासंहारकरः। (वामन, 44/1-35)

एक विवरण के अनुसार शिव ने वालखिल्य मुनियों के आश्रम में जाकर उनकी पत्नियों को कामपीडित किया था जिससे वालखिल्यों ने क्रुद्ध होकर शिव को लिङ्गपात का शाप दिया था। उल्लेखनीय है कि शिव वालखिल्यों को इस शाप के कारण दण्डित भी कर सकते थे किन्तु ब्राह्मण के सदैव मान्य होने के कारण शिव ने उनके शाप को चुपचाप स्वीकार कर लिया था। (स्कन्द, प्रभा, अर्बुद, 38/30-31)

उक्त समस्त आख्यानों-उपाख्यानों के सर्वथा पृथक् विवरण कूर्म पुराण का है। तदनुसार दारुवन के ऋषि-मुनि गृहस्थ जीवन का सुख भोगते हुए तप आदि करते थे। उनकी वासनावृत्ति को अवदमित करने के लिए शिव ने मनोहारी युवक का वेष बनाया और विष्णु ने उनकी मनोरमा युवती पत्नी का। नग्न शिव पत्नी सहित देवदारु वन में यत्र-तत्र विचरण करके मुनियों को नारीरूपिणी विष्णु के प्रति तथा साध्वी मुनि-पत्नियों को अपने प्रति कामासक्त करते रहे। परिणामतः ज्येष्ठ तपस्वी ब्राह्मणों ने शिव की निन्दा की तो शिव ने उनके साथ तप करने की इच्छा व्यक्त की। उन मुनियों ने उनकी कृत्रिम पत्नी को व्यभिचारिणी कहकर उसका त्याग करने का आदेश दिया किन्तु शिव उन्हें साध्वी कहते रहे। वाग्वितण्डा पर ऋषियों ने शिव को मार-पीट कर उनके लिङ्ग को उखाड़ने का निश्चय किया तो शिव ने स्वयं ही लिङ्ग को उखाड़ दिया और तभी शिव, विष्णु और वह लिङ्ग वहां से अदृश्य हो गए। सर्वत्र उपद्रव होने लगे। विस्मित ब्राह्मणों को अत्रि मुनि की पत्नी अनसूया ने उन भिक्षुक युवक के शिव होने

की सूचना दी तो अपने दुर्व्यवहार से लज्जित और भीत ब्राह्मण ब्रह्मा की शरण में गए। ब्रह्मा ने ध्यान लगाकर उस भिक्षुक के शिव होने की बात जान ली और उन तापसियों के दुर्भाग्य पर शोक किया क्योंकि उन्होंने योगियों और संन्यासियों के अभिलषणीय शिव को अपने द्वार पर प्राप्त करके भी उनका तिरस्कार कर दिया था। शिव-तत्त्व का विवेचन करते हुए ब्रह्मा ने बताया कि शिव त्रिगुणात्मक हैं जिनका तमोगुण प्रधान रूप अग्नि है, रजोगुण प्रधान स्वयं ब्रह्मा और सत्त्वगुण प्रधान विष्णु हैं। उन्हीं का भङ्गलमय दिगम्बर रूप है जिसमें परम ब्रह्म का ही अवस्थान होता है। ब्रह्मा ने उन मुनियों को शिव की पत्नी को विष्णु रूप में परिचित करवाया। तब मरीचि आदि उन ऋषियों को पुनः शिव दर्शन का उपाय बताते हुए ब्रह्मा ने उन्हें एक लिङ्ग की स्थापना करके सपरिवार उसकी पूजा करने का आदेश दिया और शतरुद्रिय का पाठ करने को कहा। इस भांति शिव के अनुग्रह से वे ऋषि-मुनि वासना, कामना, द्वेष आदि का त्याग करके आत्मसंयम तथा निष्ठासम्पन्न होकर शिव-आराधना में निमग्न हो गए। भक्तवत्सल शिव तब भस्मलिप्त होकर जलते अङ्गार को हाथ में धारण कर भिक्षुक बनकर पहले की ही वेशभूषा में विष्णु के स्थान पर साक्षात् देवी पार्वती को साथ लेकर पुनः उस देवदारुवन में उपस्थित हुए किन्तु इस बार ऋषियों को उन्हें पहचानने में विलम्ब नहीं हुआ अतः भूषित होकर उन्होंने शिव-पार्वती को प्रणाम किया और उनकी महिमा को प्रतिपादित करते हुए उनकी स्तुति की। तब उनकी प्रार्थना पर शिव ने उन भक्तों को अपने चन्द्र-आभूषण शोभित मनोरम रूप के दर्शन करवाए। इस भांति भृगु, अङ्गिरा, वसिष्ठ, विश्वामित्र, गौतम, अत्रि, सुकेश, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, मरीचि, कश्यप संवर्तक आदि ने शिव से शिव-पूजा का विधान पूछा। शिव ने स्पष्ट किया कि केवल योग का आश्रय लेना अपर्याप्त है। सांख्य और योग अर्थात् ज्ञानयोग और कर्मयोग के मिश्रित रूप से उपासना करना ही मुक्तिप्रद होता है। शिव ने पाशुपत धर्म का भी विस्तार से विवेचन किया। शिव ने वेदविरुद्ध, मोह को उत्पन्न करने वाले वाम, पाशुपत, सोम, लाकुर, भैरव आदि मार्गों को असेवनीय बताया। शिव के समस्त कथन का सार था महेश्वर शिव की पूजा से परमज्ञान मिलता है और भक्तिपूर्वक शिव का ध्यान करने से ही शिव का सान्निध्य प्राप्त होता है। (कूर्म, उत्तर, 38/सम्पूर्ण, 39/सम्पूर्ण)

उस समय दारुवन में प्रवृत्तिमार्ग के अनुयायी उन मुनियों की शिक्षा हेतु उपस्थित शिव की मुनिगण द्वारा की गई स्तुति में से कुछ नाम हैं - त्रिशूलवरधारी, दिग्वासाः, विकृतः, सर्वप्रणतदेवः, स्वयंप्रणतात्मा, सर्वसंहरणः, नृत्यशीलः, भैरवरूपी, नरनारीशरीरः, योगिनां गुरुः, तापसः, लेलिहानः, अघोरघोररूपः, कनकमालः, प्रियकरः, गङ्गसलिलधरः, योगाधिपतिः, भूताधिपतिः, प्राणः, भस्माङ्गधारी, हव्यवाहः, हव्यरेताः,

देवादिदेव महादेव शिव

ब्रह्मणः शिरोहर्ता, कालरूपी, प्रमथनाथः, दाता शुभसम्पदाम्, कपालपाणिः, जुष्टतमः, कनकपिङ्गः, वारिलिङ्गः, वह्न्यर्कलिङ्गः, ज्ञानलिङ्गः, भुजङ्गहारः, कर्णिकारप्रियः, कुण्डली। (वही, उत्तर, 39/21-33)

अस्तु, शिव के लिङ्ग-पतन के प्रसङ्ग से पुनः शिव-भार्या सती के सन्दर्भ में लौटा जाए। मान्यता है कि शिव के विरही रूप से कातर हो शिवा सती ने कहा, 'मेरी अस्थियों की माला धारण कर सर्वत्र विचरण करते हुए भी शिव को शान्ति नहीं मिलती है। वे योग्य-अयोग्य के ज्ञान से रहित हो गए हैं। उनके सन्तोष के निमित्त मैं अवतार ग्रहण करूंगी। हिमालयपत्नी मेना में लौकिक गति दिखाकर उसी से उत्पन्न होऊंगी।' (शिव, रुद्र, पार्वती, 4/37-43) उस समय शिव हिमालय पर्वत पर जाकर तप करने लगे थे। उसी मध्य उनके ललाट से कतिपय स्वेदबिन्दु भूपतित हुए और उसमें से एक बालक प्रकट हुआ। वह भौम नाम धारण कर तत्काल युवा हो गया। शिव की चिरकाल तक सेवा करके उसने ग्रह के पद को प्राप्त किया। (वही, रुद्र, पार्वती, 10/4, 26-27)

पार्वती

दक्ष-यज्ञ विध्वंस तथा सती के देहत्याग की समस्त घटना गङ्गाद्वार तीर्थ में हुई थी। (नारद, उत्तर, 66/5-14) सती ने दक्ष यज्ञ में देह-त्याग करते हुए ब्रह्मा से प्रार्थना की थी, 'अगले जन्म में भी मैं शिव की पत्नी बनूँ।' (ब्रह्म, 34/23) जो भी हो, विष्णु और अन्य देवताओं ने देवकार्य की सिद्धि के लिए भगवती से पुनः अवतरित होने के लिए प्रार्थना की। इस पर देवी ने कहा, 'अदीन परमेश्वर परिपूर्ण होने पर भी मेरा पाणिग्रहण करना चाहते हैं। इसलिए इस समय मेरा जन्म लेना आवश्यक है।' (शिव, रुद्र, पार्वती, 4/1-43) सती का पुनः जन्म लेना इसलिए भी आवश्यक था क्योंकि ब्रह्मा ने विचार किया कि पार्वतीरूपिणी सती और शिव के समागम से उत्पन्न पुत्र ही तारक का वध करेगा। (स्कन्द, माहे, कौमा, 22/37-42)

पार्वती के रूप में देवी के आविर्भाव के सम्बन्ध में ब्रह्माण्ड पुराण की मान्यता पूर्णतया नूतन है। तदनुसार त्रिपुरा आदि शक्तियां ललिता देवी की ही अवतार हैं और वे ही महालक्ष्मी हैं। प्राचीनकाल में उन्होंने तीन अण्डों का सृजन किया था। उनमें से एक अण्डे में से अम्बिका (पार्वती) तथा पुरुषोत्तम विष्णु, दूसरे से लक्ष्मी तथा ब्रह्मा और तीसरे से सरस्वती एवं शिव उत्पन्न हुए। ललिता देवी ने पार्वती को शिव को अर्पित किया और शिव को संहार कार्य में नियुक्त किया। महादेवी का ध्यान करते हुए शिव पार्वती सहित तभी से कैलास पर्वत पर रहने लगे। (ब्रह्माण्ड, मध्य, उप, 40/3-12) अन्यत्र माना गया है कि पार्वती जब मेना के गर्भ में थी तभी ब्रह्मा की आज्ञा से रात्रि

देवादिदेव महादेव शिव

ने मेना के गर्भस्थल में प्रवेश कर उन्हें कृष्णवर्ण का कर दिया था जिससे वे भविष्य में गौर वर्ण प्राप्त करने के लिए कठोर तप करें। इसी कारण वे कृष्णकाया उत्पन्न हुई और उनका नाम काली हुआ। (वही, माहे, कौमा, 22/46) उनके अनेक अभिधान होने पर भी उनके बन्धुजन कुलोचित (पर्वत पिता की पुत्री होने के कारण) उन्हें पार्वती नाम से पुकारने लगे। (शिव, रुद्र, पार्वती, 7/16)

एक बार देवर्षि नारद ने भविष्यवाणी की कि पार्वती के भावी पति नग्न, योगी स्वयम्भू, अशिव-वेषा होंगे। इस बात से हिमालय और मेना दुःखी हो गए किन्तु पार्वती समझ गई कि ये शिव के ही लक्षण हैं और तभी मन ही मन शिव का ध्यान करने लगीं। नारद ने हिमालय को समझाया कि उनकी पुत्री ही शिवा हैं जो प्रत्येक जन्म में शिव की ही पत्नी बनती हैं। (शिव, रुद्र, पार्वती, 8/1-33)

हिमालय के घर पर जब पार्वती आठ वर्ष की हो गई तब सती के विरह से कातर शिव उसके जन्मवृत्तान्त को जानकर अन्तर्मन में प्रसन्न होकर लौकिक गति का आश्रय लेकर हिमालय पर तप करने आए। शिव के औषधिप्रस्थ में आने पर हिमालय ने उनके समक्ष जाकर जो स्तुति की उसमें से कतिपय नाम हैं - योगिरूपधरः, विहारी, सर्वलोकाटनः, लीलाकारः, परिपूर्णगुणाधानविकाररहितः, अनीहः, अबहिर्भोगकारः, जनवत्सलः, त्रिगुणाधीशः, विष्णुब्रह्मादिसेव्यः, विष्णुब्रह्मास्वरूपी, विष्णुब्रह्मकदाता, तपोरतः, तपः स्थानसुतपःफलदायी, तपःप्रियः, व्यवहारकरः, लोकाचारकरः। (शिव, रुद्र, पार्वती, 11/1-21)

हिमालय पार्वती को भी लेकर शिव के समीप गए तथा पार्वती की शिवसेवा की अभिलाषा का उल्लेख किया। शिव ने नारी को तपस्या में बाधक कहते हुए उनकी सेवा लेने से मना कर दिया। इस पर पार्वती ने शिव से तर्क किया, 'आप तपस्या की जिस शक्ति को प्राप्त करने के लिए तप कर रहे हैं वह प्रकृति कहलाती है। प्रकृति के बिना लिङ्गरूपी महेश्वर की क्या स्थिति है? मैं प्रकृति हूँ और आप पुरुष हैं, यही परम सत्य है। प्रकृति के बिना पुरुष कुछ भी करने में समर्थ नहीं है और यदि आप मुझ से श्रेष्ठ हैं तो भी मुझसे भयभीत होना व्यर्थ है।' अन्ततः शिव ने पार्वती को सेवा करने की अनुमति प्रदान कर दी और स्वयं तपस्या करने लगे। शिव तब सोचने लगे 'यदि पार्वती गर्वरहित होकर तप करेगी तभी मैं उसे ग्रहण करूँगा।' दूसरी ओर देवी ने उन दोनों का संयोग कराने के उद्देश्य से शिव की तपस्या भङ्ग करने और पार्वती के प्रति कामवासना जागृत करने के लिए कामदेव को उनके समीप भेजा। (वही, रुद्र, पार्वती, 12/3-36, 13/1-60)

देवादिदेव महादेव शिव

कामदेहन

कामदेव मनोज है किन्तु वह शिव के चित्त के बाहर ही स्थित रहा। उसने शिव के चित्त में कोई छिद्र ही नहीं पाया जिसके द्वारा भीतर प्रवेश कर सके। उसी समय पार्वती वहां उपस्थित हुई और शिव भी समाधि से क्षणभर के लिए जागृत हुए। उचित अवसर जानकर कामदेव ने शङ्कर के ऊपर पुष्पबाण चला दिया। इसी का प्रभाव था कि शिव के चित्त में पार्वती के प्रति कामभावना पुष्ट होने लगी। अपने ही मनोविकार से विस्मित शिव ने उसका कारण खोजा तो उनके दृष्टिपथ पर कामदेव आया। परिणाम अत्यधिक भयावह हुआ क्योंकि इन्द्र आदि देवों की स्तुति को नकार कर शिव के तृतीय नेत्र से अग्निपुत्र प्रकट हो गया। देवताओं के त्राहि-त्राहि कहने पर भी उस अग्नि ने काम को भस्म कर दिया। (वही, रुद्र, पार्वती, 18/18-43, 19/7-14)

ब्रह्मपुराण के अनुसार ब्रह्मा से यह जानकर कि शिव-पार्वती का शक्तिशाली पुत्र ही तारक का वध करेगा, देवता पार्वती के निकट गए और उनसे शिव को प्राप्त करने के लिए तप करने को कहा। पार्वती ने तप किया तो देवों ने शिव को पार्वती के प्रति आकृष्ट करने के लिए परस्पर मन्त्रणा की। उस समय देवगुरु बृहस्पति ने ही कामदेव को नियुक्त करने का परामर्श दिया। वसन्त के साथ शिव के निकट जाकर उन्हें अपने पुष्पबाण का लक्ष्य बनाने पर कामदेव विचार कर ही रहा था कि शिव के नेत्राग्नि ने उसे भस्म कर दिया। देव इससे भयभीत हो शिव की स्तुति करने लगे और तारक से उद्धार के लिए पार्वती को ग्रहण करने की प्रार्थना भी करने लगे। शिव ने उनकी प्रार्थना को स्वीकार कर लिया। (ब्रह्म, 71/17-42)

काम के भ्रमरध्वनि के व्याज से शिव के चित्त में प्रवेश करने का भी उल्लेख है। काम को भस्म करने के उपरान्त शिव की क्रोधाग्नि जब विश्व को दग्ध करने लगी तो शिव ने उस अग्नि को अहङ्कारी व्यक्ति, चन्द्र, पुष्प, भ्रमर, कोकिल आदि में विभाजित कर दिया। (स्कन्द, ब्राह्म, सेतु, 24/33-40)

यह भी मान्यता है कि तारकासुर से पीड़ित देवता ब्रह्मा की शरण में गए तो ब्रह्मा ने उन्हें सूचित किया कि सती के विरह में तीनों लोकों को शून्य मानते हुए शिव हिमालय की कन्दराओं में उनके साथ पुनर्मिलन की प्रतीक्षा में रत हैं। तब इन्द्र आदि की प्रेरणा से कामदेव ने शिव के शुद्ध हृदय पर शक्तिशाली विमोहन अस्त्र बाण चलाया जिससे शिव का हृदय व्याकुल हो गया। इस विकृति को कामदेव का कृत्य जानकर शिव ने कोपानल से काम को भस्म कर दिया। वही अग्नि जब सम्पूर्ण जगत् को भस्म करने लगी तो शिव ने उसे विभाजित कर आम्रवृक्ष, मद, चन्द्रमा, पुष्प, भ्रमर

देवादिदेव महादेव शिव

और कोकिलों में स्थापित कर दिया और स्वयं पुनः ध्यानस्थ हो गए। (पद्म, सृष्टि, 43/59-61, 237-247)

कामदहन के उपरान्त अनन्योपाय रति शिव की शरणापन्न होकर उनका स्तवन करने लगी। उसी स्तुति में प्रयुक्त शिव के नाम हैं — शिवः, मनोमयः, जगन्मयः, अद्भुतवर्त्मा, सुरार्चितः, सदाभक्तकृपापरः, भवः, भवोद्भवः, ध्वस्तमनोभवः, मायाश्रयः, मदनाश्रयः, निसर्गामलभूषितः, अमेयः, गुणायनः, सिद्धः, पुरातनः, शरण्यः, गुणः, भीमगणानुगः, नानाभुवनर्द्धिकर्ता, भक्ताभिमतप्रदः, कर्मप्रसवी, अनन्तरूपः, असह्यकोपः, शशाङ्कचिह्नः, असीमलीलापरमस्तुतः, वृषेन्द्रः, पुरान्तकः, प्रसिद्धः, महौषधः, नानाविधरूपकः, कालः, कलः, कालकलातिगः, चराचराचार्यविचार्यवर्यः, आचार्यः, उत्प्रेक्षितभूतसर्गः, इन्दुमौलिः, पुरुषेशः, परन्तपः, नाथः, भुवनस्य गोप्ता, दयालुः, उन्मूलितभक्तभीतिः। (पद्म, सृष्टि, 43/250-260)

शिव द्वारा कामदहन के विवरण का रूपान्तरण इस भांति प्राप्त है — नाग के यज्ञोपवीत तथा भूषण धारण किये हुए, शुद्ध स्फटिक के समान उज्ज्वल, व्याघ्रचर्म से आवृत, अस्थियों की माला से शोभित, विभूति से लिप्तदेह, पञ्चमुख, त्रिनेत्र, कोटि सूर्यों के समान तेजस्वी अपने एकादश रुद्रों से परिवेष्टित शिव, जिनके वामभाग में महाकाल और दाहिने भाग में नन्दिकेश्वर खड़े थे, के समक्ष हिमालय अपनी पुत्री पार्वती को लेकर उपस्थित हुए। पार्वती ने भक्तिभाव से शिव की सात परिक्रमा की। शिव ने उन्हें गुणवान्, समृद्ध, ज्ञानी, शोभनदर्शन पति प्राप्त करने का वर दिया। इसी को उपयुक्त अवसर मानकर देवराज ने कामदेव को वहां भेजा। कामदेव का अन्यथा अमोघ बाण भी निर्विकार शिव पर निष्फल हो गया। इससे काम अत्यधिक भयभीत हुआ किन्तु जो होना था वही हुआ— शिव की क्रोधाग्नि आकाश में ऊपर उठकर, गोलाकार घूमकर नीचे आ कामदेव पर गिर पड़ी जिससे काम तत्क्षण भस्मीभूत हो गया। काम-पत्नी रति विलाप करती रही और शिव उस स्थान को त्याग कर अन्यत्र चले गए। इस घटना से पार्वती के रूप-यौवन का गर्व तिरोहित हो गया। स्वयं को अपमानित मान लज्जित वे पितृगृह लौट गईं। (ब्रह्मवै, श्रीकृष्ण, पूर्व, 38/55-62, 39/26-64)

मत्स्य पुराण के अनुसार व्याघ्रचर्मावृत तथा वासुकि नाग को वलयरूप में धारण किये हुए, करबद्ध अवस्था में आसीन शिव के वक्षस्थल पर मकरध्वज कामदेव ने जब प्रमोहन बाण चलाया तो शिव का तृतीय नेत्र क्रोधाग्नि से दीपित हो उठा जिससे उनका शरीर जगत् का प्रलय करने को उन्मुख सा प्रतीत होने लगा। शिव ने समीप उपस्थित कामदेव की ओर अपने तृतीय नेत्र को घुमाया। तब महादेव शिव के डुङ्कार की ज्वाला से भस्मीभूत काम की पत्नी रति ने शिव की शरण में जाकर उनकी जो

देवादिदेव महादेव शिव

स्तुति की उसमें परिगणित शिवनाम हैं — निरामयः, मनोमयः, सुरार्चितः, भक्तकृपापरः, भवोद्भवः, ध्वस्तमनोभवः, गूढमहाव्रतः, मायागहनाश्रयः, सिद्धः, पुरातनः, कालः, ज्ञानवरप्रदः, कालकलातिगः, निसर्गमलभूषणः, अन्धकमर्दकः, अगुणः, भीमगणानुगः, नानाभुवनादिकर्त्ता, नानाजगतां विधाता, चित्रफलप्रयोक्ता, भक्ताभिमतप्रदाता, भवसङ्गहर्ता, अनन्तरूपः, सर्वावसाने अविनाशनेता, चित्राध्वरभागभोक्ता, असह्यकोपः, शशाङ्कचिह्नः, अमेयमानः, वृषेन्द्रयानः, पुरान्तकः, प्रसिद्धः, महौषधः, भक्ताभिमतप्रदः, सर्वार्तिहरः, चराचरविचारवर्यः, आचार्यः, उत्प्रेक्षितभूतसर्गः, प्रियाप्रमेयः, महतां महेशः, प्रभुः प्रियायाः, प्रसवः प्रियाणाम्, प्रणीतपर्यायपरापराधः, एकः, भुवनस्य नाथः, दयालुः, उन्मूलितभक्तभीतिः। (मत्स्य, 154/260-270)

उस समय पार्वती ने तप करके शिव को प्राप्त करने का निर्णय किया और हिमालय की सुन्दरतम चोटी पर जाकर तपस्या करने लगी। (वही, 154/271-406)

ऐसा वर्णन भी उपलब्ध है कि शिव कामबाण से पीड़ित होकर अर्चना करती पार्वती के प्रति आकृष्ट हुए किन्तु तभी उन्होंने काम को भस्म कर दिया। (शिव, रुद्र, पार्वती, 21/1-4) उस समय श्रीपुर की अधिष्ठात्री देवी ललिता ने काम को जीवित कर दिया और उनकी आज्ञा से काम ने शिव और पार्वती को कामविह्वल किया। तब स्वयं हिमालय के आदेश से तपस्या करके ही पार्वती का शिव के साथ मिलन सम्भव हुआ। (ब्रह्माण्ड, मध्य, उप, 30/71-101)

यह भी माना जाता है कि कामदहन के उपरान्त उसकी पत्नियाँ—रति और प्रीति के विलाप करने पर पार्वती के काम को प्राणदान देने की प्रार्थना पर शिव ने यह आश्वासन दिया कि वसन्त ऋतु के शुक्लपक्ष की त्रयोदशी तिथि को काम शरीरवान् होगा। (भविष्य, उत्तर, 135/2-15)

एक अन्य विवरण के अनुसार काम-दहन के उपरान्त देवगण ने हाहाकार करते हुए शिव से काम को पुनर्जीवित करने की प्रार्थना की तो शिव ने क्रोधित होकर कहा, 'काम के वशीभूत होकर ही समस्त देवता पदभ्रष्ट होकर दुःखी होते हैं। काम ही समस्त प्राणियों के नरक-प्राप्ति का कारण है। दुःखरूपी यह काम अनङ्ग ही रहे। आज से दुराचारी तारक भी निष्काम हो जाएगा। इस पापी तथा दुःख के मूल काम को मैं जीवित नहीं करूँगा।' इस भांति दृढ़तापूर्वक अपना मत व्यक्त करके शिव वहां से अन्तर्धान हो गए। (स्कन्द, माहे, केदार, 21/76-99)

इस सन्दर्भ में एक सर्वथा अभिनव चित्रण भी द्रष्टव्य है — सतीदाह के उपरान्त रौद्रव्रत का पालन करते हुए इधर-उधर परिभ्रमण करते हुए शिव हिमालय पर्वत

देवादिदेव महादेव शिव

पहुँचे तो हिमालय ने उनका स्वागत किया। शिव के वहाँ रात्रिवास करने पर हिमालय ने उनसे वहीं वास करने का आग्रह किया। तब अपने निराश्रय भाव का त्याग करके शिव वहीं आश्रम में रहने लगे। वहाँ एक दिन पार्वती के समक्ष आने पर अपनी प्रिया सती को ही पुनर्जन्म लेकर पार्वती के रूप में उत्पन्न हुई जानकर भी शिव ने अपनी तपस्या में बाधक मानकर पार्वती के वहाँ आगमन को अनुचित कहा और गणों के साथ अन्तर्धान हो गए। इसी से व्यथित तथा स्वयं को अवहेलित मानने वाली पार्वती ने तपस्या करने के अपने निश्चय को पिता को बता दिया। (वामन, 51/32-40)

इसके पश्चात् पार्वती ने गङ्गावतरण स्थल पर शृङ्गतीर्थ में कठोर तप प्रारम्भ किया। इससे पूर्व शिव ने बता दिया था कि कामदेव अतनु बनकर ही जीवित रहेगा। कामदहन के लिए शिव के मस्तक से निकली अग्नि को लोककल्याण हेतु ब्रह्मा ने समुद्र में निक्षिप्त कर दिया जिसने वडवानल का रूप धारण कर लिया। (शिव, रुद्र, पार्वती, 19/38-39, 20/8-17)

पार्वती परीक्षा एवं विवाह

इसी मध्य तारकासुर का अत्याचार बढ़ गया जिस कारण देवताओं ने शिव को स्मरण कराया कि शिव का औरस पुत्र ही तारक का वध कर सकेगा अतः शिव पार्वती से विवाह कर शीघ्र पुत्र उत्पन्न करें। इस पर शिव ने उन्हें आश्वस्त किया, 'मैंने भक्तों के निमित्त पूर्व में भी अनेक कष्ट उठाये हैं जैसे गृहपति होकर मैंने विश्वानर मुनि के दुःख दूर किए हैं। मुझे विवाह करना रुचिकर न होने पर भी तारक-वध के लिए मैं पार्वती से विवाह कर पुत्र उत्पन्न करूँगा।' इसके उपरान्त शिव ने सप्तर्षियों को हिमालय के निकट विवाह प्रस्ताव देने के लिए प्रेषित किया। तदनन्तर शिव ने स्वयं पार्वती की निष्ठा की परीक्षा लेने का निर्णय लिया। (वही, रुद्र, पार्वती, 24/70-75, 25/15-16, 26/1-2)

तब शिव ब्रह्मचारी बनकर पार्वती के समीप गए और उनकी कठोर तपस्या का कारण पूछा। शिव को अपना ध्येय बताकर पार्वती ने कठिन तपस्या करके भी शिवप्राप्ति में असफल होने के कारण अपने अग्नि प्रवेश का निश्चय सुना दिया। ब्रह्मचारी के बारम्बार निषेध करने पर भी पार्वती ने अग्नि-प्रवेश किया किन्तु शिव के प्रभाव से अग्नि शीतल हो गई। शिव ने तब शिव-निन्दा कर पार्वती को निवृत्त करना चाहा। (वही, रुद्र, पार्वती, 26/1-22, 27/38)

उस समय पार्वती ने अपने मन के भाव व्यक्त करते हुए कहा, 'जो जगत् के कर्ता, पोषक और संहारक हैं, निर्गुण होकर भी शिव हैं, उनको कोई कैसे जान सकता

देवादिदेव महादेव शिव

है?’ पार्वती की निष्ठा से सन्तुष्ट शिव स्वरूप में आ गए और कहा, ‘तुम्हारे लिए मेरा कुछ भी अदेय नहीं है। आज से मैं तुम्हारा क्रीत हूँ।’ (वही, रुद्र, पार्वती, 28/22-23, 43-44)

यह विवरण भी उपलब्ध है कि शिव विकट वेश धारण कर पार्वती के समीप गए तब भी पार्वती ने उन्हें पहचान लिया। विवाह के लिए दोनों के सम्मत होने पर पार्वती के परामर्श से शिव हिमालय के निकट पहुंचे। उन विकट वेशधारी के हाथों पुत्री को सौंपने की अनिच्छा होने पर भी शाप के भय से हिमालय ने कह दिया कि पार्वती स्वयंवर में जिसका वरण करेगी, वह ही उसका पति होगा। लीलापुरुष शिव ने तब पार्वती से कहा कि पार्वती स्वयंवर में उन जैसे कुरुप का कदापि वरण नहीं करेगी। इस पर पार्वती ने शिव के कन्धे पर अशोकमञ्जरी रखकर उसी समय उनका वरण कर लिया। शिव की लीला इतने पर भी समाप्त नहीं हुई अतः वे एक ब्राह्मण बालक बनकर और ग्राह से ग्रसित होकर पार्वती के आश्रम के निकट आर्तनाद करने लगे जिसे सुनकर पार्वती वहां आई और ग्राह से बालक को मुक्त करने का अनुरोध करने लगी। ग्राह की मांग करने पर पार्वती ने अपनी समस्त तपस्या के प्रतिदान में बालक को मुक्त करवा लिया और शिव को लक्ष्य करके पुनः तपोलीन हो गई। तब शिव पुनः वहां प्रकट हुए और पार्वती की प्रशंसा करते हुए कहने लगे, ‘मुझे अपना तप समर्पित करने के कारण तुम्हारा तप अक्षय हो गया है।’ स्वयंवर के समय भी शिव ने अपनी लीला दिखाई और पञ्चशिखाधारी शिशु बन गए। पार्वती ने उन्हें पहचान कर उनके चरणों में माला समर्पित कर दी। ब्रह्मा ने भी उन्हें पहचान लिया और उनकी स्तुति की। तब शिव स्वरूप में आ गए और हिमालय के अनुरोध पर ब्रह्मा उनके विवाह की प्रस्तुति करने लगे। इससे पूर्व जब पार्वती ने उस शिशु को अङ्ग में धारण कर लिया तो उन्हें वज्र से मारने को उद्यत इन्द्र तथा अस्त्रधारी भग को शिव ने स्तम्भित कर दिया था। उस समय ब्रह्मा ने उन्हें शिव का परिचय दिया था। शिव भी त्रिनेत्रधारी बन गए थे। तब सभी ने उनको प्रणाम किया था। (ब्रह्म, 35/1-63, 36/27-53)

पार्वती की स्वयंवर सभा में बालक रूपधारी शिव को पहचान कर ब्रह्मा ने उनका जिन गुह्य नामों से स्तवन किया, वे हैं—अजः, अजरः, देवः, स्रष्टा, विभुः, परापरः, प्रधानम्, पुरुषः, ब्रह्म, ध्येयः, अक्षरः, अमृतः, परमात्मा, ईश्वरः, कारणम्, महत्, ब्रह्मसृक्, प्रकृतेः स्रष्टा, सर्वकृत्। (ब्रह्म, 36/39-41)

एक अन्य चित्रण के अनुसार पार्वती की परीक्षा लेने शिव ब्रह्मचारी का वेश धारण कर आए। सुदीर्घ काल के उपरान्त भी पार्वती कठोरता से तप के नियमों का पालन करती थी अतः ब्रह्मचारी को उनकी प्रतीक्षा करनी पड़ी। उसी समय ब्रह्मचारी वहां के

देवादिदेव महादेव शिव

सरोवर में गिर गए और रक्षा के लिए पुकारने लगे। विजया आदि पार्वती की सखियों की सहायता लेना ब्रह्मचारी ने अस्वीकार कर दिया क्योंकि वे किसी असंसिद्ध नारी का हस्त-अवलम्बन करने से मृत्यु को श्रेयस्कर मानते थे। वे ब्रह्मचारी जब अधिक गहरे जल में डूबने लगे तब तक पार्वती अपना नियम पूर्ण कर आ गई और उन्हें बचाने के लिए अपना बायाँ हाथ आगे बढ़ा दिया। ब्रह्मचारी ने वामहस्त को अशुचि कहकर पकड़ने से मना कर दिया। इस पर पार्वती ने कहा, 'मैं अपना दक्षिण हस्त देवेश्वर शिव के अतिरिक्त किसी और को नहीं दूंगी।' तब ब्रह्मचारी ने कहा, 'यदि तुम्हारी ऐसी प्रतिज्ञा है तो मुझे डूबने से कौन बचा सकता है? तुम्हारे समान मेरी प्रतिज्ञा भी अटल है। हम रुद्र के भी पूज्य हैं। तुम बताओ तुम्हारी प्रतिज्ञा कैसी है जो तुम एक भ्रियमाण विप्र की भी रक्षा नहीं कर सकती।' पार्वती ने कुछ देर सोचा फिर दाहिना हाथ बढ़ाकर उन ब्रह्मचारी को डूबने से बचा लिया। इसके पश्चात् सुस्थिर होकर बैठने पर ब्रह्मचारी ने शिव की निन्दा करनी प्रारम्भ कर दी। पार्वती प्रियनिन्दा अधिक सहन करने में असमर्थ होकर वह स्थान छोड़कर जाने लगी तो शिव अपने रूप में आ गए तथा उन्होंने कहा, 'आज से मैं तुम्हारा तप से क्रीत दास हूँ।' पार्वती के स्वयंवर में पार्वती को ग्रहण करने का आश्वासन देकर शिव ने वहाँ से प्रस्थान किया। (स्कन्द, माहे, कौमा, 25/15-87)

शिव के अत्यन्त बौने वामन के रूप में पार्वती के समीप आने, उनकी इच्छा पूछने, पार्वती के अग्नि में प्रवेश करने, अग्नि के शीतल होने और तत्पश्चात् वामन के पार्वती को आश्वस्त करते हुए यह कहकर, 'तुम अपने घर चली जाओ। मेरे आशीर्वाद तथा तप के फल से तुम्हें शिव का दुर्लभ दर्शन अवश्य प्राप्त होगा' अन्तर्धान होने का वर्णन भी मिलता है। (ब्रह्मवे, श्रीकृष्ण, पूर्व, 40/18-57)

यह भी माना जाता है कि शिव ने पार्वती के समीप ब्रह्मचारी के रूप में जाकर मन खोलकर शिवनिन्दा की। पार्वती के यह कहने पर कि महात्माओं की निन्दा करने वाला ही नहीं, सुनने वाला भी पाप का भागी होता है, शिव ने प्रकट होकर पार्वती को सङ्कोच में डाल दिया। अनन्तर शिव की इच्छा से स्वयंवर का आयोजन किया जाना, उसमें शिव का शिशुरूप में प्रकट होना, इन्द्र आदि को स्तम्भित करना और अन्त में शिवरूप में समक्ष आकर देवगण को भी अपने समक्ष विनत करने का भी वर्णन मिलता है। उस समय देवताओं ने शिव की स्तुति करते हुए कहा, 'हम सब पशु हैं और आप पशुपति हैं। आप अपनी माया से अखिल विश्व को परिभ्रमित करते हैं। उसी से भ्रमित होकर हम मूढ़गण इस स्वयंवर में उपस्थित हो गए हैं। पशुपति आपको हमारा प्रणाम इत्यादि।' (स्कन्द, माहे, कौमा, 25/80-121)

देवादिदेव महादेव शिव

सभी के द्वारा शिव को वररूप में सानन्द स्वीकार कर लेने पर भी लीलाधर शिव नाना लीला करने लगे। जिस समय हिमालय और मेना पुत्री-विवाह सम्पन्न करने के लिए व्यस्त थे उसी मध्य शिव वाम भुजा में सींग और दक्षिण में डमरु धारण कर, भस्म लिप्त हो, जराजीर्ण वृद्ध ब्राह्मण भिक्षुक बनकर उनके सम्मुख प्रकट हुए। उन्होंने पार्वती को अभीष्ट वर का आशीष दिया। उसी मध्य मेना भिक्षापात्र भरकर लाई तो उस भिक्षुक ने केवल पार्वती की ही भिक्षारूप में याचना की। इस पर क्रुद्ध हिमालय उस भिक्षुक को बाहर निकालने लगे किन्तु मुक्त आकाश की भांति वे किसी की पकड़ में नहीं आए। शिव तेज से इतने दीपित होने लगे कि उनको पकड़ना तो दूर, उनके निकट जाना भी कठिन हो गया था। हिमालय उन्हें कभी चतुर्भुजी तो कभी द्विभुजी रूप में देखने लगे तो कभी मुरली और मुकुटधारी के रूप में। तब हिमालय ने उन्हें पहचाना और रोमाञ्चित देह, सजल नयन होकर वे बारम्बार शिव को प्रणाम करने लगे। (ब्रह्मवै, श्रीकृष्ण, पूर्व, 40/65-105)

उस समय हिमालय के मोक्ष की याचना करने और शिव के वह वर देने के लिए उद्यत होने पर देवताओं ने शिव को निरस्त करते हुए कहा, 'आपकी सृष्टि में हिमालय रत्नों के आगार हैं। उनके मुक्त हो जाने से पृथ्वी रत्नगर्मा कैसे कहलाएगी? वे शूलधारी आपको कन्यादान करके विष्णु के सारूप्य मोक्ष को प्राप्त करेंगे।' (वही, श्रीकृष्ण, पूर्व, 41/1-3)

इसके उपरान्त भी शिव सुस्थिर नहीं बैठे। वे पुनः ब्राह्मण अतिथि बनकर हिमालय के समीप आए और समस्त पर्वतों के अधीश्वर हिमालय के लिए दिगम्बर, अकिञ्चन, विभूतिलिप्त, सर्पभूषण शिव के साथ अपनी कन्या के विवाह को हास्यास्पद बताकर हिमालय को पुनः विमूढ करने लगे। तब वसिष्ठ की पत्नी अरुन्धती ने ही स्थिति को सम्भाला। (वही, श्रीकृष्ण, पूर्व, 41/12-42)

इसी भांति वैष्णव साधु का बाना धारण कर शिव ने मेना के समक्ष अपनी ही ऐसी निन्दा कर डाली कि मेना ने स्पष्ट शब्दों में शिव के हाथों पार्वती को न सौंपने का निर्णय सुना दिया। जब सप्तर्षियों और अरुन्धती ने नाना प्रकार से मेना को समझाया और मनाया तभी मेना इस विवाह सम्बन्ध के लिए सम्मत हुई। (शिव, रुद्र, पार्वती, 30/2-54)

यह भी विवरण उपलब्ध है कि नट-नर्तक रूप में अपनी कला से हिमालय तथा मेना को मोहित करके उनसे शिव ने पार्वती को मांगा जबकि पार्वती अपने प्रिय को पहचान कर उन्हें प्रणाम कर मन ही मन उन्हें पतिरूप में मांगती रही। जब हिमालय ने बहुरूपी शिव को न पहचान कर उनके हाथों पुत्री सौंपने से मना कर दिया और

देवादिदेव महादेव शिव

शिव अन्तर्धान हो गए तब जाकर उस दम्पती ने शिव को पहचाना। (वही, रुद्र, पार्वती, 30/26-52)

इस भांति नाना विघ्न-बाधाओं के उपरान्त शिव और पार्वती के विवाह का शुभ मुहूर्त उपस्थित हुआ। अपने समस्त गणों, मुनियों, ब्रह्मा, विष्णु आदि देवों, दानवों आदि के साथ अपने धर्मवत्सल तथा स्फटिक मणि के समान शुभ्रवर्ण के वृषभ पर आरूढ़ होकर शिव पार्वती का पाणिग्रहण करने के लिए हिमालय के आवास पर आए। (स्कन्द, माहे, केदार, 23/85-86) इससे पूर्व स्वयं ब्रह्मा ने मध्यस्थता करते हुए हिमालय को आदेश दिया था कि शिव की पत्नीरूप में निर्धारित पार्वती को शिव के हाथों सौंप दिया जाए। उन्होंने शिव के पत्नीसहित वास के लिए कैलास पर्वत भी प्रदान कर दिया था। (वाराह, 21/68-72) तब हिमालय ने शिव के समीप मङ्गलपत्रिका भिजवायी। हिमालय ने विवाह का सुप्रबन्ध किया। वाक्पटु पर्वतों तथा सम्मानित ब्राह्मणों को वरपक्ष के स्वागत का दायित्व सौंपा। शिव के सहयात्री देवगण अपने-अपने वाहन पर आए। वे वाद्य-ध्वनि के साथ आए। शिव के रूप-सौन्दर्य ने दर्शकों का मन मोहित कर लिया। शिव का चित्त भी उस समय पार्वती में ही संसक्त हो गया जिस कारण उनके नेत्र आर्द्र हो उठे। आवास पर पहुँचे पुरोहितों को साथ लेकर हिमालय ने वस्त्र तथा आभूषणों के साथ शिव का वरण किया। (ब्रह्मवै, श्रीकृष्ण, पूर्व, 44/5-51) हिमालय ने तब मेना के साथ मिलकर शिव के पाद प्रक्षालन किए, उन्होंने जल के साथ पार्वती को शिव को प्रदान किया ही, स्वयं को भी उन्हें समर्पित कर दिया। वह विवाह संस्कार वास्तव में अभूतपूर्व था जिसमें दाता पर्वतराज, होता ब्रह्मा, वर पशुपति शिव, वधू विश्वमाता पार्वती थी। (स्कन्द, माहे, कौमा, 26/68-69, 78-81) हिमालय ने पार्वती शिव को सौंपकर अपार आनन्द का अनुभव किया। शिव ने भी तब गोदान तथा अन्य महादान किए। उनके साथ देवपत्नियों ने नानाविध हास-परिहास किया। उचित अवसर देखकर कामपत्नी रति ने काम के भस्म की पोटली शिव के समक्ष रखकर प्रार्थना की, 'आज जब आपके विवाहोत्सव में सभी स्त्रियाँ अपने पति के साहचर्य में सुखी हैं तो केवल मैं ही पति के वियोग में दुःखी हूँ। कृपया मेरे दुःख को दूर कर दें।' दयालु शिव ने काम के भस्म पर ज्यों अमृतमयी दृष्टि डाली तभी मूर्तिमान् काम आविर्भूत हो गया। (शिव, रुद्र, पार्वती, 48/40-42, 50/8, 42-43, 51/4-14; ब्रह्मवै, श्रीकृष्ण, पूर्व, 45/18-24)

शैलराज ने विवाह के अवसर पर अनेक द्रव्य तथा एक लाख गौ यौतुक के रूप में प्रदान की। औपचारिक विधि-विधान से कन्यादान करके हिमालय ने परिहार स्तवन की माध्यन्दिन शाखा में वर्णित स्तोत्र को पढ़ते हुए जो शिव-स्तुति की उसमें

देवादिदेव महादेव शिव

परिगणित शिव के नाम हैं—दक्षयज्ञघ्नः, नरकार्णवतारकः, सर्वात्मरूपः, सर्वेशः, परमानन्दविग्रहः, गुणार्णवः, गुणातीतः, गुणयुक्तः, गुणेश्वरः, गुणबीजः, महाभागः, गुणिनां वरः, योगाधारः, योगरूपः, योगज्ञः, योगकारणः, योगीशः, योगिनां बीजः, योगिनां गुरुः, प्रलयः, प्रलयाद्यैकः, प्रलयाकारणः, प्रलयान्ते सृष्टिबीजः, परिपालकः, सृष्टिसंहारकारणः, दुर्निवार्यः, दुराराध्यः, आशुतोषः, कालस्वरूपः, कालेशः, काले फलदायकः, कालबीजैकः, कालघ्नः, कालपालकः, शिवस्वरूपः, शिवदः, शिवबीजः, शिवाश्रयः, शिवभूतः, शिवप्राणः, परमाश्रयः। (वही, श्रीकृष्ण, पूर्व, 44/63-71)

विवाह संस्कार के मध्य एक उल्लेखनीय घटना घटित हुई—संस्कार सम्पन्न करवाते हुए ब्रह्मा की दृष्टि पार्वती के पद—नख पर पड़ते ही कामोत्तेजना से ब्रह्मा का वीर्यपात हो गया जिससे देवगण हाहाकार करने लगे। लज्जित ब्रह्मा बाहर चले गए किन्तु महादेव शिव ने कहा, 'विषय वासनाएं ज्ञानी व्यक्ति को भी वशीभूत कर लेती हैं। सन्त व्यक्ति ऐसे अपराधी पर भी दया करते हैं।' तब ब्रह्मा को भीतर बुलाकर शिव ने पृथ्वी को कमण्डलु बनाकर उसमें वीर्य जल को संरक्षित कर दिया और तब वैदिक मन्त्रों से उसे अभिमन्त्रित करके घोषणा की, 'मेरे द्वारा अभिमन्त्रित यह अमृत है। ब्रह्मा, तुम इस कमण्डलु को ग्रहण करो।' तब से ब्रह्मा ने उस कमण्डलु को धारण कर लिया। वस्तुतः सभी के पिता शिव ने क्षमाशील होकर गङ्गा को ही कमण्डलु में रखकर ब्रह्मा को दिया था। (ब्रह्म, 72/20-40)

इस सन्दर्भ में यह भी माना जाता है कि शिव ने ब्रह्मा की इस दुर्बलता के कारण उनकी भर्त्सना की तथा अपने सिर का स्पर्श करने को कहा। ब्रह्मा के आश्चर्य की सीमा न रही जब उन्होंने अपने सिर पर वृषवाहन शिव को विराजमान पाया। शिव ने ब्रह्मा को उन्हीं शिव की अर्चना करने को कहा तथा उन्हें नया नाम प्रदान किया 'रुद्रशिर'। (शिव, रुद्र, सती, 20/7-16)

समस्त ब्रह्माण्ड के सृष्टिकर्ता, पालनकर्ता और संहारक देवादिदेव महादेव ने हिमालयसुता का पाणिग्रहण करते हुए विनम्रता के साथ कहा, 'न मेरी माता है, न पिता! न मेरा कोई ज्ञाति है और न ही कोई बान्धव। मैं निराश्रय तथा पर्वत की गुफा का वासी हूँ। इस भाँति का अकिञ्चन मैं आपकी पुत्री को ग्रहण करता हूँ।' यह पृथक् वृत्तान्त है कि विवाह के उपरान्त मन्दरगिरि पर रहते हुए शिव ने विश्वकर्मा को अपने लिए गृह-निर्माण का आदेश दिया जिस कारण विश्वकर्मा ने शिव के लिए चौंसठ योजन में व्याप्त और स्वस्तिक चिह्नयुक्त घर बनाया था। (वामन, 53/43-44, 54/1-2)

जो भी हो, शिव का पार्वती के साथ विवाह सुसम्पन्न हुआ। समस्त प्राणी अपने

देवादिदेव महादेव शिव

पशुपति के आनन्द से आनन्दित हुए तभी देवताओं ने अपनी प्रसन्नता की अभिव्यक्ति—स्वरूप शिवस्तुति की। उस समय देवराज इन्द्र को अग्रगामी बनाकर देवगण ने निम्न अभिधानों से उनका स्तवन किया था — पर्वतलिङ्गः, पर्वतेशः, पवनवेगः, विरूपः, अजितः, क्लेशविनाशः, दाता, नीलशिखण्डः, अम्बिकापतिः, पवनरूपः, शतरूपः, भैरवरूपः, विरूपनयनः, सहस्रनेत्रः, सहस्रचरणः, देववयस्यः, वेदाङ्गः, विष्टम्भनः शक्रस्य बाह्वोः, वेदाङ्कुरः, चराचराधिपतिः, शमनः, सलिलाशयलिङ्गः, युगान्तः, कपालमालः, कपालसूत्रधारी, कपालहस्तः, दण्डी, गदी, त्रैलोक्यनाथः, पशुलोकरतः, खट्वाङ्गहस्तः, प्रमथार्तिहरः, यज्ञशिरोहन्ता, कृष्णकेशापहारी, भगनेत्रनिपातः, पूष्णः, दन्तहरः, पिनाकशूलासिखङ्गमुद्गरधारी, कालकालः, तृतीयनयनः, अन्तकान्तकृत्, पर्वतवासी, सुवर्णरेताः, कुण्डलधारी, दैत्यानां योगनाशः, योगिनां गुरुः, शशाङ्कादित्यनेत्रः, ललाटनयनः, श्मशानरतः, श्मशानवरदः, दैवतनाथः, त्र्यम्बकः, गृहस्थसाधुः, जटिली, ब्रह्मचारी, मुण्डार्धमुण्डः, पशूनां पतिः, सलिले तप्यमानः, योगैश्वर्यप्रदः, शान्तः, दान्तः, प्रलयोत्पत्तिकारी, अनुग्रहकर्ता, स्थितिकर्ता, रुद्रः, वसुः, आदित्यः, अश्विन, पिता, साङ्ख्यः, विश्वेदेवः, शर्वः, उग्रः, शिवः, वरदः, भीमः, सेनानी, शुचिः, वैरिघ्नः, सद्योजातः, महादेवः, चित्रः, विचित्रः, प्रधानः, अप्रमेयः, कार्यः, कारणः, पुरुषः, पुरुषेच्छाकरः, पुरुषसंयोगप्रधानगुणकारी, प्रवर्तकः प्रकृतेः पुरुषस्य च, कृताकृतस्य सत्कर्ता, फलसंयोगदः, कालज्ञः, नियमकारी, वैषम्यकर्ता, गुणानां वृत्तिदः, देवदेवेशः, भूतभावनः, शिवः, सौम्यमुखः, सौम्यः। (ब्रह्म, 37/1-23)

शिव-पार्वती के वैवाहिक संस्कार सम्पन्न होने के उपरान्त उस रात्रि में हिमालय पर रहकर प्रातः श्वसुर की अनुमति से शिव नववधू के साथ मन्दराचल पर चले गए। (मत्स्य, 154/430-500) तीनों लोकों के प्राणियों का महोत्सव सम्पन्न होने पर नन्दिनी के तट पर वनराजियों में जाकर शिव ने स्वच्छन्दतापूर्वक दिव्यसहस्र वर्षों तक पार्वती के साथ रमण किया। (स्कन्द, वैष्णव, वैशाख, 9/52-55) एक मान्यता यह भी है कि श्रीहरि विष्णु ने शिव की क्रीड़ा हेतु अवन्ति नगरी की सृष्टि की थी। शिव वहां सहस्रों गणों के साथ निवास करने लगे। (स्कन्द, आव, अव, 40/29-30)

काशीवास

शिव पार्वती को प्रसन्न करने के लिए विवाह के उपरान्त श्वसुरालय हिमालय पर्वत पर ही रहे। पार्षदगण विविध रूप धारण कर पार्वती का मनोविनोद करते थे। इसी समय एक दिन माता मेना ने शिव को लम्पट, व्यर्थ नृत्यगीत में समय व्यतीत करने वाला, श्वसुरालय में रहने वाला आदि कहकर पार्वती को क्षुब्ध कर दिया तो

देवादिदेव महादेव शिव

पार्वती ने तत्काल शिव से अपने पित्रालय में न रहने का निर्णय सुनाया। तब शिव ने निकुम्भ नामक गणेश्वर को काशी जाकर राजा दिवोदास से उसे मुक्त करवाने का निर्देश दिया। निकुम्भ के प्रयास से वाराणसी में निकुम्भ की मूर्ति की पूजा होने लगी तो दिवोदास ने उसे नष्ट करवा दिया। इस पर निकुम्भ ने काशी को उजड़ने का शाप दे डाला जिस कारण दिवोदास को काशी का त्याग करना पड़ा। तब निकुम्भ ने शिव-पार्वती को वहां बुला लिया। कुछ समय उपरान्त पार्वती ने वहां से अन्यत्र चलने का आग्रह किया तो शिव ने काशी को अपनी प्रिय नगरी तथा शिव से उसके मुक्त न होने के कारण उसे अविमुक्त कहा। तभी से वाराणसी का नाम अविमुक्त भी प्रसिद्ध हुआ। (वायु, 92/29-59)

माना जाता है कि काशी शिव को प्रिय थी तो वह पार्वती को भी प्रिय लगने लगी तभी वहां रहते हुए उन्होंने कभी अपने पित्रालय को भी स्मरण नहीं किया। (वही, वैष्णव, पुरुषोत्तम, 12/43-44) वस्तुतः शिव के साथ वहां आनन्द-कानन में जाकर पार्वती स्वयं आनन्दरूपिणी हो गई थीं। (वही, काशी, उत्तर, 90/2-7)

अविमुक्त नगरी में रहते उनके जीवन की एक महत्त्वपूर्ण घटना को वर्णित करना उचित ही होगा। प्रथमतः प्रचेतापुत्र के रूप में जन्म लेकर भी दक्ष ने शिव-विरोधिता का त्याग नहीं किया तभी उसके शिव-रहित यज्ञ का विध्वंस हो जाने पर वीरभद्र द्वारा सिर काटकर उसे जला देने पर शिव की आज्ञा से वीरभद्र ने दक्ष को जब बकरे का सिर लगा दिया था तब वे ब्रह्मा की आज्ञा से काशी आकर शिवलिङ्ग की स्थापना करके बारह सहस्र वर्षों से निष्ठापूर्वक शिव की उपासना कर रहे थे। अत्यधिक क्रुश हुए दक्ष को पार्वती की प्रेरणा से ही शिव ने दक्ष के अभीष्ट दो वर दिए-शिव के चरणों में अविचल भक्ति और दक्ष द्वारा स्थापित लिङ्ग में शिव का अवस्थान। वह लिङ्ग तभी से दक्षेश्वर लिङ्ग के नाम पर प्रसिद्ध हो गया। (वही, काशी, उत्तर, 89/112-125)

दक्ष का प्रसङ्ग उपस्थित होने पर इस सन्दर्भ के परिवर्तित चित्रण का भी उल्लेख करना समीचीन ही होगा। द्वितीय जन्म में भी शिव-निन्दा करते हुए दक्ष ने गङ्गाद्वार में यज्ञ किया तथा पूर्व की भांति शिव को आमन्त्रित नहीं किया। तब पार्वती ने ही वीरभद्र के द्वारा दक्ष के यज्ञ को विनष्ट करवाया। तभी ब्रह्मा ने शिव की स्तुति करके उन्हें प्रसन्न किया जिससे सन्तुष्ट शिव ने दक्ष को कल्प के अन्त में गणेश्वर होने का वर दिया। उस समय दक्ष को विष्णु और शिव के ऐक्य का अनुभव हुआ और तब उन्होंने शिव की शरण ली। (कूर्म, पूर्व, 15/4-93½)

शिव और दक्ष के प्रस्तुत आख्यान का एक चित्रण यह भी है- दक्ष प्रजापति के

अश्वमेध यज्ञ करने पर पार्वती ने जब उसके विषय में जानना चाहा तो शिव ने स्पष्ट कह दिया कि पूर्व निर्धारित नियम से शिव को यज्ञभाग नहीं दिया जाता है। पार्वती के इस पर कुपित होने पर शिव ने योगबल से अपने गणों की सहायता से उस यज्ञ को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। उस समय क्रुद्ध शिव के स्वेद बिन्दु से लाल नेत्रों वाला, पिङ्गलवर्णी एक भयानक पुरुष उत्पन्न हुआ। शिव की आज्ञा से उसने यज्ञ को नष्ट कर दिया। जब स्वयं प्रजापति ब्रह्मा ने समस्त देवताओं के पक्ष से शिव को यज्ञभाग दिलवाने का आश्वासन दिया तभी शिव शान्त हुए। (मह, शान्ति, 274/23-43)

कूर्म पुराण के अनुसार देवी पार्वती ने ही शिव से अनुरोध किया, 'पूर्वजन्म के मेरे पिता अब पुनः दक्ष आपके भाव की निन्दा करके यज्ञ कर रहे हैं जिसमें देवता, महर्षि आदि सभी उनकी सहायता कर रहे हैं। आप शीघ्र उस यज्ञ को नष्ट कर दें।' तब शिव ने वीरभद्र को गङ्गाद्वार में यज्ञ नष्ट करने के लिए भेजा। शिव-निर्मित भद्रकाली के साथ वीरभद्र यज्ञस्थल गए। ब्रह्मा ने मध्यस्थता करके उस विनाश को रोका और दक्ष ने नानाविध स्तवनों से शिव को प्रसन्न किया। तब शिव ने दक्ष को समझाया, 'मैं सभी यज्ञों में पूज्य हूँ, मैं कदापि निन्दनीय नहीं हूँ। तुम लोकैषणा को विजित कर यत्नपूर्वक मेरी भक्ति करो। कल्प के अन्त में मेरी कृपा से तुम गणेश्वर होओगे।' (कूर्म, पूर्व, 15/34-78)

पुत्र कार्तिकेय

नवपरिणीता वधू पार्वती के साथ रमण करते हुए शिव के जब दिव्य शतवर्ष व्यतीत हो गए और उनका पुत्र उत्पन्न नहीं हुआ तो ब्रह्मा आदि देवों को यह चिन्ता हुई कि इतने दीर्घकाल के उपरान्त शिव के वीर्य से यदि भगवती ने पुत्र को उत्पन्न किया तो उस अतुलनीय तेज से सम्पन्न पुत्र को कोई भी सहन करने में समर्थ नहीं होगा। अतः ब्रह्मा आदि ने शिव से प्रार्थना की कि वे पुत्रोत्पत्ति न करें तथा देवी के साथ तप करें। इस पर शिव ने कहा, 'मैं देवी के साथ अपने तेज को धारण कर सकता हूँ किन्तु यदि मेरा वह सर्वोत्तम तेज किसी कारण से क्षुब्ध होकर अपने स्थान से स्खलित हो जाये तो उसे कौन धारण करेगा?' देवों ने पृथ्वी को इस कार्य के लिए उपयुक्त बताया तो शिव ने अपना वीर्य त्याग दिया जिससे सम्पूर्ण भूमण्डल व्याप्त हो गया। देवों ने विचार करके अग्नि देव को वायु के सहयोग से उस तेज को अपने भीतर रखने का निर्देश दिया। अग्नि से व्याप्त वह तेज श्वेत पर्वत के रूप में परिणत हो गया। वहीं दिव्य शरवन में भी प्रकट हुआ जो अग्नि एवं सूर्य के समान तेजस्वी था। उसी वन में कार्तिकेय प्रकट हुए। प्रसन्नचित्त देवों और ऋषियों ने भक्तिभाव से शिव-पार्वती का पूजन किया किन्तु रुष्ट होकर पार्वती ने स्वयं को पुत्रोत्पत्ति से विरक्त करने वाले देवों

देवादिदेव महादेव शिव

को निस्सन्तान रहने का शाप दिया। इसके उपरान्त शिव उमा के साथ तप करने लगे। (राम, बाल, 35/5-26) यह वर्णन भी मिलता है कि उस समय पार्वती ने असन्तुष्ट होकर सभी देवताओं को शाप देने के उपरान्त शिव को भी लिङ्गाकार प्रस्तररूप को प्राप्त करने का शाप दिया। (स्कन्द, नागर, 251/16)

देवताओं को यह भी आशङ्का थी कि यदि शिव के वीर्य को पार्वती ग्रहण कर पुत्र को जन्म देंगी तो समस्त देवों और राक्षसों का विनाशक पुत्र उत्पन्न होगा। (ब्रह्मवै, गण, 1/25-26)

यह भी माना जाता है कि शिव-पार्वती के पुत्र न होने पर देवताओं ने तारक का स्मरण करवाकर शिव से पुत्रोत्पत्ति की प्रार्थना की। पार्वती की अतृप्ति के भय से शिव ने वीर्य त्यागा नहीं था किन्तु देवताओं की उक्त प्रार्थना सुनकर शिव ने उसे भूमि पर गिरा दिया। देवताओं की आज्ञा से अग्नि देव ने कबूतर बनकर उसका पान कर लिया। उस वीर्य से सन्तप्त अग्नि ने गङ्गास्नान कर आई हुई सप्तर्षि-पत्नियों के रोम छिद्रों के द्वारा वह वीर्य उनमें सङ्क्रमित कर दिया। उन स्त्रियों ने उस गर्भ को हिमालय पर्वत पर त्याग दिया। हिमालय ने उसे गङ्गा में छोड़ा, गङ्गा ने शरवन में। वहां गिरते ही वह एक सुन्दर बालक बन गया। शिव-पार्वती उसके जन्म से अत्यधिक प्रसन्न हुए। (शिव, रुद्र, कुमार, 1/15, 2/सम्पूर्ण)

यह भी कथा है कि देवताओं ने जब अग्नि को शिव-पार्वती के समीप भेजा तो अग्नि ने शुक का रूप धारण कर उनके समीप गमन किया। शिव ने अग्नि को पहचानकर उससे कहा, 'मैं आधा वीर्य पार्वती में स्थापित कर चुका हूं। समागम स्थल पर तुम्हारे आ जाने से लज्जा के कारण उसका प्रवाह अवरुद्ध हो चुका है। अतः उस आधे वीर्य का तुम पान कर लो।' (पद्म, सृष्टि, 44/126-140)

इस कथा का परिवर्तित रूप यह है— शिव-पार्वती के सम्भोगरत होने पर वहां अग्नि ने सूक्ष्म रूप से प्रवेश किया और पार्वती से भिक्षा की याचना की। पार्वती भिक्षा देने के लिए उठी तो सम्भोग में बाधा उत्पन्न होने से कुपित शिव ने अग्नि का वध करने के उद्देश्य से त्रिशूल उठा लिया। पार्वती ने शिव को निरस्त किया और अग्नि को रेतस रूपी भिक्षा प्रदान की। अग्नि ने उसे खा लिया। अग्नि के मुख में वीर्य होने से उनके माध्यम से सभी देवता गर्भयुक्त हो गए। अनन्तर उस वीर्य के गङ्गा तथा वहां से शरवन में पहुंचने के उपरान्त शिवपुत्र कार्तिकेय का जन्म हुआ। प्रसन्नचित्त शिव पार्वती को लेकर उस स्थान पर गए। वहां पार्वती ने कार्तिकेय को अङ्क में धारण कर उसे दुग्धपान करवाया। (स्कन्द, माहे, केदार, 27/37-102)

देवादिदेव महादेव शिव

उक्त विवरण के अनुसार जब देवगण अग्नि के माध्यम से गर्भ धारण करने लगे तब उन्होंने आत्मत्राण के लिए शिव का जो स्तवन किया, उसमें प्रयुक्त उनके नाम हैं — त्रिवर्गः, त्रिमूर्तिः, त्रिशूली, लोकत्रितयधारी, मीढुषः, त्रिस्वरः, त्रिधाम, त्रिवेदः, त्रिमात्रः, त्रिपदः। (वही, माहे, केदार, 27/56-57)

ब्रह्माण्ड पुराण के अनुसार विवाह के उपरान्त शिव ने पार्वती में अपना उग्र वीर्य स्थापित किया जिसे सहन करने में असमर्थ होने के कारण पार्वती ने उसे पृथिवी पर त्याग दिया। पृथिवी से पूर्वोक्त क्रम से अग्नि, कृत्तिका, गङ्गा और शरवन होता हुआ वह वीर्य अन्ततः कार्तिकेय के रूप में परिणत हुआ। वही षडानन महासेन नामक पुत्र बना। (ब्रह्माण्ड, मध्य, उप, 30/91-101)

शिवपुत्र को पार्वती के कुक्षि को विदीर्ण करके उत्पन्न हुआ भी माना जाता है जो षडानन और शूलधारी था तथा कुमार नाम से विख्यात हुआ था। (मत्स्य, 158/20-41) कृत्तिकापुत्र कुमार ही कार्तिकेय कहलाया।

इस प्रसङ्ग में यह भी उल्लेखनीय है कि अग्नि के माध्यम से सभी देवताओं के गर्भ धारण करने पर ब्रह्मा के उपदेशानुसार वे सभी शिव की शरण में गए। तब शिव ने उन सभी को वीर्य का वमन करने को कहा जिससे अग्नि के अतिरिक्त शेष सभी पूर्ववत् सामान्य अतः सन्तुष्ट हो गए। कालान्तर में अग्नि से गङ्गा आदि के माध्यम से कार्तिकेय का जन्म हुआ। (स्कन्द, माहे, केदार, 27/37-102)

कार्तिकेय को जब पार्वती ने प्रथम बार अङ्क में धारण किया तो शिव ने देवगण, पर्वतगण, देवियों आदि के साथ ही उन्हें शुभाशीष दिया। (ब्रह्मवै, गण, 16/47-48)

शिव ने पुत्र को अस्त्र-सञ्चालन तथा उसके संहार करने का ज्ञान भी प्रदान किया। (वही, गण, 17/10) शिव के इन पुत्र का प्रबल प्रतापी होना स्वाभाविक ही था क्योंकि वे शिव के ऐसे अमोघ वीर्य से उत्पन्न हुए थे जिसके पृथ्वी पर गिरने पर पृथ्वी ने उसे वहन करने में असमर्थ होकर अग्नि में डाला, अग्नि ने अक्षम होकर उसे शरवन में डाला जो तुरन्त सुन्दर बालक बना। छः कृत्तिकाओं का पोष्य वही कार्तिकेय नाम से विख्यात हुआ। (वही, गण, 14/27-34)

शिवपुत्र कार्तिकेय ने जिस समय तारकासुर का वध किया तब उन्होंने शिवलिङ्ग की स्थापना करके शिव का निम्न अभिधानों से स्तवन किया था— निरामयः, मनोमयः, सुरार्चितः, भक्तकृपापरः, भवः, भवोद्भवः, ध्वस्तमनोभवः, गूढमहाव्रतः, मायागहनाश्रयः, सिद्धः, पुरातनः, कालः, कलः, कालकलातिगः, निसर्गात्मकभूतिकः, अमेयोक्षमहर्द्धिकः, शरण्यः, अगुणः, भीमगुणानुगः, नानाभुवनाधिकर्ता, भक्ताभिमतप्रदाता, कर्मप्रसवः, धाता,

सुकर्ता, अनन्तरूपः, असह्यकोपः, अमेयमानः, वृषेन्द्रयानः, प्रसिद्धः, महौषधः, व्याधिगणापहः, चराचरः, विचारदः, कुमारनाथः, भूतेशः, कामेशः, वागीशः, बलेशः, धीशः, क्रोधेशः, मोहेशः, परापरेशः, मोक्षेशः, गुहाशयेशः। (स्कन्द, माहे, कौमा, 34/40-47)

पुत्र गणेश

शिव-पुत्र कार्तिकेय के जन्म के समान गणेश का जन्म-वृत्तान्त भी विचित्र तथा विविध है। शिवपुराण के अनुसार शिव के भृङ्गी, नन्दी आदि गणों के समान पार्वती का कोई गण नहीं था। पार्वती को उनकी सखियाँ भी इस विषय में प्रेरणा देती रहती थीं। एक बार शिव पार्वती के स्नान के समय भीतर आ गए तो सखियों के समक्ष लज्जित पार्वती को अपने गण की आवश्यकता का अनुभव हुआ। इसी कारण अपने शरीर के मल से सर्वाङ्गसुन्दर तथा निर्दुष्ट महाकाय, पराक्रमशाली पुरुष का निर्माण कर उसे अपना पुत्र मानकर पार्वती ने उसे द्वार पर नियुक्त कर दिया। उसी समय शिव के आने पर उस बालक ने शिव को द्वार पर ही रोक दिया। इससे शिवगणों के साथ पार्वती-पुत्र का विवाद हुआ जिसने भयङ्कर युद्ध का रूप धारण कर लिया। जब शिव के गण गणेश से पराभूत होने लगे तो शिव ने उनका सिर काट दिया। पार्वती ने तब शिवगणों का विनाश करने और प्रलय मचाने की घोषणा कर दी और वास्तव में अपने में से शक्तियाँ उत्पन्न की जिन्होंने देवों के कटिभाग तक नष्ट कर दिए। पार्वती का निर्णय था कि उनके पुत्र के पुनरुज्जीवित होने और सर्वाध्यक्ष बनने पर ही प्रलय शान्त होगा, अन्यथा नहीं। तब शिव के आदेश से देवगण उत्तर दिशा में जाकर प्रथमदृष्ट हाथी का सिर काटकर लाये जिसे शिव ने अभिमन्त्रित कर गणेश के धड़ से जोड़ उन्हें पुनः जीवित कर दिया। (शिव, रुद्र, कुमार, 13/10-30, 14/1-62, 16/30-36, 17/2-59)

यह विवरण भी उपलब्ध है कि पुत्र-प्राप्ति के लिए आकुल पत्नी को शिव ने पुण्यक व्रत करने का निर्देश दिया। पुरोहित सनत्कुमार ने दक्षिणा में शिव को ही मांग लिया। पार्वती ने शिव को दान करके एक लाख गौओं के परिवर्तन में शिव को लौटाने की प्रार्थना की किन्तु सनत्कुमार ने उन्हें मना कर दिया। कृष्ण की मध्यस्थता से ही शिव पार्वती को पुनः प्राप्त हुए। इसके उपरान्त शिव-पार्वती के मिलन के अनन्तर वीर्यस्खलन के समय स्वयं विष्णु वृद्ध ब्राह्मण के रूप में द्वार पर पहुँचकर भोजन की याचना करने लगे। शिव उठे तो उनका वीर्य शय्या पर ही गिर गया। भिक्षुक ने पार्वती को वर दिया, 'श्रीकृष्ण प्रत्येक कल्प में गणेश रूप में तुम्हारे पुत्र होंगे।' उसी के अनुरूप कृष्ण शिव-वीर्य में मिलकर गणेश रूप में शय्या पर विराजमान हो गए।

देवादिदेव महादेव शिव

पार्वती ने प्रसन्न होकर उन्हें शिव के समान महायोगी, सिद्धि-दाता, ऐश्वर्यसम्पन्न और मृत्युञ्जय होने का वर दिया। (ब्रह्मवै, गण, 7/1-129, 8/2-84, 9/1-38, 10/32)

एक बार शिव गणेश को विश्व की उत्पत्ति के विषय में बता रहे थे कि तभी उनके शरीर से जगद्योनि शिवा शक्ति प्रकट हुई। वे ब्रह्मविद्या प्रकृति थीं जिनसे गणेश की उत्पत्ति हुई थी। वस्तुतः गणेश और शिव में पूर्ण साम्य है। केवल अज्ञानता के कारण शिव और गणेश का युद्ध हुआ था जिससे शिव के खड्ग से गणेश का सिर काटा गया था। तब परमेश्वरी पराशक्ति ने स्तुति करके शिव को प्रसन्न किया और शिव ने गजमुख लगाकर गणेश को पुनः स्वस्थ किया था। (स्कन्द, माहे, केदार, 10/24-34)

यह भी माना जाता है कि पार्वती गणेश का निर्माण तथा प्राणसञ्चालन करके शिव के समीप ले गई तो शिव ने उनका नाम विनायक रखा। (वही, प्रभा, अर्बुद, 32/3-16) शिव ने यह वर भी दिया कि गणेश शिव के समान ही बलशाली और गुणी होंगे। (वही, माहे, कौमा, 27/5-8)

एक पृथक् आख्यान के अनुसार पार्वती ने स्नान करते हुए देह से उतरे उबटन से एक मानवाकार बनाया और स्नान के स्थल पर ही रख दिया। शीघ्र ही शिव भी उसी स्थान पर बैठकर स्नान करने लगे। पार्वती के स्वेद से सक्त उस मूर्ति पर जब शिव का स्वेदजल गिरा तो उसके सम्पर्क से गजानन बालक सूंड से फुट्कार करने लगा। उसे अपना पुत्र जान शिव अत्यधिक प्रसन्न हुए और उसे पार्वती को सौंपते हुए कहा, 'तुम्हारा यह पुत्र बिना नायक के उत्पन्न हुआ अतः यह विनायक है जो समस्त देवी देवताओं का भी पूज्य होगा।' (वामन, 54/50-76)

यह विवरण भी उपलब्ध है कि शिव द्वारा काली कहे जाने पर पार्वती तपस्या करके जब गौरी बनकर लौट आई तो सन्तुष्ट शिव से गर्भ धारण करके उन्होंने हेरम्ब गजानन और षडानन स्कन्द को जन्म दिया। (स्कन्द, माहे, अरुणा, उत्तर, 17/22-24) यथासमय शिव ने सभी के समक्ष गणेश का पुष्टि के साथ विवाह संस्कार सम्पन्न करवाया। तदनन्तर पार्वती दोनों पुत्रों के साथ समस्त कामनाओं के प्रदाता शिव के चरणकमलों की सेवा करने लगीं। (ब्रह्मवै, गण, 17/23-24)

शिव-पार्वती के पुत्र गणेश की उत्पत्ति के विषय में एक सर्वथा नूतन उद्भावना यह है— शिव ने पार्वती के साथ जब काशी में रहना प्रारम्भ किया तो सभी दैत्य-दानव निश्शङ्क होकर यज्ञ करने एवं दान देने लगे। इससे देवताओं को अत्यधिक दुश्चिन्ता हुई अतः वे शिव की शरण में गए। तब देवगुरु बृहस्पति ने शिव से प्रार्थना की, 'हे महादेव, आप असुरों की प्रार्थना पर सर्वदा उनकी इच्छापूर्ति रूप वर प्रदान करते हैं।

देवादिदेव महादेव शिव

अब सुरों (देवों) के कल्याणकारी वर हमें प्रदान कीजिए।' तब सुरेश्वर शिव ने देवों की रक्षा के लिए गणेश्वर का रूप धारण किया (अर्थात् अपने ही अंश से गजानन गणेश के रूप में उत्पन्न हुए)। समस्त देवों ने गणेश की स्तुति की और पार्वती ने उस पुत्र का स्वागत किया। स्वयं शिव ने सद्योजात गणेश के जातकर्म आदि संस्कार सम्पन्न किए, हाथों से अवलम्बन दे स्नेहालिङ्गन किया, उनके सिर का घ्राण लेकर उनसे कहा, 'हे पुत्र, तुम्हारा अवतार दैत्यों के विनाश के लिए हुआ है। पृथिवी पर जो व्यक्ति भी दक्षिणाविहीन यज्ञ करे, स्वर्गपथ पर स्थित उसके लिए तुम विघ्न की सृष्टि करो। जो भी अन्याय रूप से अध्ययन- अध्यापन करता है, उसके प्राणों का हरण कर लो। सर्वदा देवों के उपकार में तत्पर रहो।' (लिङ्ग, पूर्व, 105/1-17)

दाम्पत्य जीवन

ऊपर शिव के द्वारा पार्वती को काली कहे जाने का उल्लेख आया था। उस प्रसङ्ग का किञ्चित् विस्तार अपेक्षित है। हुआ यह कि एक बार शिव ने परिहास में कह दिया, 'मेरे गौरवर्णी शरीर पर तुम्हारी कृष्णद्युति चन्दन वृक्ष पर लिपटे कृष्ण सर्प की भांति प्रतीत होती है।' इस पर पार्वती अत्यधिक कुपित होकर शिव को धूर्त आदि कहने लगी। तब शिव भी क्रुद्ध हो गये तथा उस दाम्पत्य कलह को पुष्ट करते हुए कह दिया, 'पिता हिमालय के शिखरों के समान तुम्हारा हृदय भी दुरवगाह्य तथा कठिन और पर्वतीय नदियों के समान कुटिल है।' इससे पार्वती का क्रोध और भी पुष्ट हो गया। उसी कारण पार्वती तप करके गौरी बनकर ही लौट कर आई। (स्कन्द, माहे, कौमा, 27/60-81, 29/77)

उस समय क्रुद्ध हुई पार्वती को शिव ने मनाने का अथक प्रयास किया था। एक साधारण पति के समान उन्होंने कहा था, 'एक सामान्य परिहास से यदि तुम इतनी क्रुद्ध हो सकती हो तो भविष्य में मैं कभी तुम्हारे साथ हास-परिहास नहीं करूंगा। मैं तुम्हारे समक्ष अञ्जलि बांधकर सिर झुकाकर खड़ा हूं। क्रोध त्याग दो' किन्तु पार्वती के स्वाभिमान को ऐसा तीव्र आघात लगा था जिससे वे कुछ भी सुनने को उद्यत नहीं हुई। (मत्स्य, 155/13-19)

पार्वती के तप करने पर्वत शिखर पर चले जाने पर शिव प्रिया-वियोग को सहन करने में असमर्थ होकर अन्तर्धान हो गए जिससे ब्रह्माण्ड में भयानक अन्धकार छा गया। उस समय देवता शिव की आराधना करने लगे। विष्णु ने दान को चिन्तामणि कहते हुए देवों से दीपदान को श्रेष्ठ दान कहा। शिव के सूर्य, चन्द्र तथा अग्नि रूपी तीनों नेत्रों के अभाव में ब्रह्माण्ड में व्याप्त उस प्रगाढ़ अन्धकार के प्रतीकार हेतु विष्णु

ने तभी उनसे दीपदान करने को कहा। अग्नि के अभाव में मानसिक अग्नि से शिव को उद्देश्य करके देवों ने दीप प्रज्वलित किया और तब उन्होंने पुनः महेश्वर के दर्शन किए। तभी समस्त अन्धकार तिरोहित हो गया। (स्कन्द, आव, अव, 30/9-56)

पार्वती की उस तपस्या की अवधि की एक अन्य उल्लेखनीय घटना है आदि राक्षस का वध। वह पार्वती का रूप धारण कर शिव के निकट आया किन्तु सर्वज्ञ शिव को उसे पहचानने में विलम्ब नहीं हुआ और उन्होंने उसे आलिङ्गन पाश में आबद्ध कर मार डाला। यह पृथक् विषय है कि वायु के माध्यम से पार्वती को यह सूचना प्राप्त हुई कि शिव के समीप एक नारी ने प्रवेश किया और तभी उन्होंने द्वारपाल बने अपने पुत्रसम वीरक नामक शिवगण को शापित कर दिया। (मत्स्य, 156/1-39)

जिस समय देवी पार्वती तपस्यारत थीं, उस समय शिव उनके विरहानल में दग्ध होने लगे। समस्त तीर्थजलों में अवगाहन करके भी उन्हें शान्ति प्राप्त नहीं होती थी। इस क्रम में एक दिन वे यमुना नदी में प्रविष्ट हुए तो उनके शरीर के सन्ताप से यमुना का जल कृष्ण वर्ण का हो गया और उन्हें शान्ति मिली। तब उन्होंने यमुना को वर दिया कि उनमें स्नान करने से सहस्र पापों से भी मुक्ति प्राप्त होगी और वह तीर्थ उनके नाम से हरतीर्थ कहलाएगा। (स्कन्द, नागर, 258/1-18)

यह भी माना जाता है कि उस विरह की अवस्था में शिव एकाग्रक वृक्ष के नीचे बैठकर पार्वती को प्राप्त करने के लिए कामाक्षी देवी का ध्यान करने लगे। तब उन देवी ने शिव से तपस्या का त्याग करने और उसी स्थान पर पीठ स्थान पर रहने को कहा। तब तटवासिनी तपस्यारता पार्वती से शिव का मिलन हुआ और शिव उन्हें वृषभारूढ करके कैलास ले आए। (ब्रह्माण्ड, ललिता, 40/4-9, 37-45)

इसी भांति शिव और पार्वती के लौकिक दम्पती के समान हास-परिहास, मान-मनौवल आदि के अन्य भी अनेक आख्यान उपलब्ध हैं। अर्धनारीश्वर शिव की अर्धाङ्गिनी पार्वती साधारण पत्नी के समान पति पर एकाधिकार की भावना और तज्जन्य सन्देह के कीट से दंष्ट भी होती रहती हैं। उसी का परिणाम हुआ कि एक बार शिव नेत्र निमीलित करके सन्ध्या देवी का ध्यान कर रहे थे। पार्वती के मन में विचार कौंधा, 'शिव अवश्य अन्य किसी भाग्यशालिनी नारी का ध्यान कर रहे हैं। मेरे प्रति उनका प्रेम छलना मात्र है।' इस विचार से उद्वेलित होकर पार्वती गौतम ऋषि के आश्रम के निकट जाकर तप करने लगीं। (स्कन्द, माहे, अरुणा, उत्तर, 18/1-75)

इसी प्रकार गङ्गा के प्रति भी उनकी सपत्नी भाव से ईर्ष्या पनप गई। पार्वती के साथ ही सुरसरिता गङ्गा भी शिव की पत्नी बनी और उनकी जटाओं में रहने लगी।

देवादिदेव महादेव शिव

गङ्गा के प्रति असहिष्णु पार्वती ने पुत्र गणेश और सखियों जया और विजया के साथ योजनाबद्ध रूप से गौतम ऋषि पर मिथ्या गोहत्या का आरोप लगाया जिससे मुक्त होने के लिए महेश्वर के जटाजूट में विराजित गङ्गा के जल को लाकर मृतक गौ पर छिड़कना था। कठोर तपस्या करके गौतम ऋषि गङ्गा को शिव से दूर ले जाने में सफल हुए तभी शिवपत्नी का ईर्ष्याकषायित चित्त भी शान्त हुआ। (ब्रह्म, 75/1-48, 76/5-15)

माना जाता है कि शिव ने गङ्गा तथा सन्ध्या दोनों के सम्बन्ध में अपना पक्ष स्पष्ट करने का प्रयास किया था। गङ्गा के विषय में शिव का कहना था कि गङ्गा के प्रति प्रीति के कारण नहीं अपितु दिव्य सौ वर्षों तक कठोर तप करने वाले राजा भगीरथ से गङ्गा को धारण करने की अपनी प्रतिज्ञा के कारण ही वे गङ्गा को जटाओं में धारण करते हैं। (स्कन्द, नागर, 130/37-53)

इस सम्बन्ध में यह वर्णन भी मिलता है कि गङ्गा से मिलने के लिए शिव ने नन्दी, भृङ्गी आदि को एक उत्तम कुण्ड बनाने का आदेश दिया जिससे वे उस कुण्ड के मध्य में वास कर सकें। जल से भरे हुए उस कुण्ड में गङ्गा की सङ्गति के लिए लालायित शिव ने प्रवेश किया। शिव ने व्रत का बहाना बनाकर उसमें प्रवेश किया और गङ्गा का ध्यान किया जिससे वह तत्क्षण वहां आकर शिव से मिलित हुई। (स्कन्द, प्रभा, अर्बुद, 38/12-16) कुछ समय पश्चात् नारद के द्वारा सूचित किये जाने पर पार्वती वहां आई किन्तु उनके शाप के भय से शिव ने उससे पूर्व ही गङ्गा को वहां से भेज दिया था। गङ्गा ने चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन उस कुण्ड में शिव से अपने समागम की अनुमति पार्वती से प्राप्त कर ली और तभी से वहां पर वह शिवगङ्गा नाम से प्रसिद्ध हुई। (वही, प्रभा, अर्बुद, 38/23-35½)

सन्ध्या के सम्बन्ध में शिव का स्पष्टीकरण था— सन्ध्याकाल में दस सहस्र दानव कुन्त और प्रास लेकर सूर्य को पीड़ित करते हैं। सावित्र मन्त्र के द्वारा सूर्य को उद्देश्य करके जो जल अर्घ्यरूप में अर्पित किया जाता है उस वज्रतुल्य जल से वे दानव नष्ट हो जाते हैं जिससे सूर्य उनके प्रकोप से मुक्त हो जाते हैं। शिव का कहना था कि वे दोनों सन्ध्याओं में सूर्य का ध्यान करते हैं, सन्ध्या का नहीं। शिव के इस स्पष्टीकरण से भी शिवप्रिया पार्वती ने अपना हठ नहीं छोड़ा। (वही, नागर, 131/4-14)

पार्वती के प्रति निष्ठावान् होने पर भी शिव के अन्य नारी के प्रति आकृष्ट होने के दृष्टान्त दुर्लभ नहीं हैं। तिलोत्तमा को देखने की व्यग्रता में उनका चतुर्मुख होने का वर्णन पहले किया जा चुका है। ब्रह्मा की सृष्टि मोहिनी जब मन्दराचल के शिखर पर वृष लिङ्ग के समीप गाना गा रही थी तब उसकी सङ्गीत लहरी और रूप माधुरी से आकृष्ट शिव आकुल होकर उसकी ओर जाने को उद्यत हुए ही थे कि निकट आसीना

देवादिदेव महादेव शिव

पार्वती पर दृष्टि पड़ते ही शिव लज्जित हो अपने स्थान पर स्थिर हो गए। (नारद, उत्तर, 8/24)

इसी क्रम में उल्लेखनीय यह है कि समुद्र-मन्थन से उद्भूत अमृत का वितरण करने के लिए विष्णु ने जिस समय मोहिनी का रूप धारण किया था, उस समय शिव वहां उपस्थित नहीं थे। कालान्तर में शिव और पार्वती के अनुरोध पर विष्णु ने पुनः मोहिनी रूप को धारण किया। उस रूप की माधुरी से शिव इतने अधिक विस्मित तथा उद्वेलित हुए कि वे सभी कुछ विस्मृत हो गए, यहां तक कि पार्वती की उपस्थिति को भी नकार कर उन्होंने मोहिनी को आलिङ्गन में आबद्ध करना चाहा किन्तु विष्णु वहां से तिरोहित हो गए। उस कामावेश में शिव का वीर्य जहां-जहां स्खलित हुआ उस उस स्थान पर सोने और चांदी की खानें बन गईं। (भाग, 8/12/18-37) शिव के मोहिनी के प्रति उत्पन्न उस कामुकता से पार्वती लज्जित हो गईं। यह भी माना जाता है कि शिव के वीर्य से उस समय दैत्यों के बल से अधिक बलशाली देव उत्पन्न हुआ। (ब्रह्माण्ड, मध्य, उप, 10/46-47)

इसी सन्दर्भ में स्मरणीय है कि एक बार शिव गन्धर्वियों, किन्नरियों तथा मानवियों, जो युवती तथा सुन्दरियां थीं, को देखकर अत्यधिक मोहित हो गए। इस कारण तपस्या का बहाना बनाकर मन्त्रों से आकृष्ट कर शिव उन्हें आकाश में ले गए और वहीं एक रमणीय कुटिया बनाकर उन सभी के साथ क्रीड़ा करते हुए समय यापन करने लगे। सुदूर रहकर भी पार्वती का चित्त उस समय उद्भ्रान्त हो गया अतः वे ध्यान योग के द्वारा शिव के अवस्थान के विषय में जानकर वहीं उपस्थित हो गईं। पार्वती ने उस समय क्षेमङ्करी का रूप धारण किया हुआ था। वहां परमेश्वर शिव को गुप्त रूप से क्रीड़ा करते देखकर वे अत्यधिक कुपित हुईं जबकि शिव लज्जित हो गए। पार्वती ने उन सभी स्त्रियों को भूमि पर गिरा दिया जिससे उनका मुख विकृत हो गया। पार्वती के शाप से वे सभी स्त्रियां चाण्डाल कुल में उत्पन्न हुईं और आज भी उन्हीं के कुल में रहती हैं। (पद्म, सृष्टि, 56/1-12)

शिव पार्वती के दाम्पत्य कलह का एक अन्य चित्रण भी द्रष्टव्य है - एक बार पार्वती ने शिव को व्यङ्ग्य बाणों से विद्ध कर दिया तो अत्यधिक क्रुद्ध शिव पार्वती को तृतीय नेत्र से देखने लगे। इस पर निर्भीक पार्वती ने कह दिया, 'न मैं काल हूं और न काम, न दक्ष-यज्ञ और न ही त्रिपुर अथवा अन्धक जो विरूपाक्ष की नेत्राग्नि से दग्ध हो जाए।' पार्वती के कटाक्षों से क्षुब्ध शिव गृह त्यागकर सिद्धाटवी में चले गए और वहीं तप करने लगे। शिव पद्मासन लगाकर, नेत्र निमीलित करके ध्यानस्थ हो गए। लीलामयी पार्वती एकाकिनी रह न पाई अतः शबरी का रूप धारण कर शिव के समीप

देवादिदेव महादेव शिव

उपस्थित हो गई। शिव का क्रोध शबरी रूपिणी पार्वती को देखते ही तिरोभूत हो गया। अतः उन्होंने लीला करते हुए शबरी से विवाह का प्रस्ताव रखा। उनके बारम्बार आग्रह करने पर पार्वती शिव को हिमालय के ओषधिप्रस्थ आवास पर ले आई। शिव-पार्वती को देखकर पर्वत के समस्त स्थावर तथा जङ्गम प्राणी और वनस्पति आदि बड़ी संख्या में उनका अभिनन्दन करने वहाँ एकत्रित हुए। इस भांति शिव के मन में पत्नी के प्रति किसी भांति का कालुष्य अवशिष्ट नहीं रहा। (स्कन्द, माहे, केदार, 34/131-151, 35/17-45)

एक बार पार्वती ने प्रिय शिव पर कुपित होकर उन्हें शाप दिया तो प्रिया को प्रसन्न करने के लिए शिव ने ताण्डव नृत्य किया। उस चातुर्मास्य में ब्रह्मचर्यपरायण शिव ने देवों और इन्द्र को आदेश दिया कि वे शिव के नृत्यकाल में उनके सहायक बने। आषाढ शुक्ला चतुर्दशी को भवानी को सन्तुष्ट करने के लिए मन्दर पर्वत पर शिव ने नृत्य प्रारम्भ किया। सभी ने शिव का जयकार किया। (वही, नागर, 254/8-22) ब्रह्मा ने मृदङ्ग बजाया और विष्णु ने तालक्रिया से साथ दिया। साध्यों, देवों और सिद्धों ने भेरी, झड़री आदि के साथ शृङ्गनाद किया। विश्वावसु, नारद, तुम्बुरु आदि गन्धर्व गायक बने। अप्सराओं ने सहयोग किया। पर्वत पर नृत्यरत शिव के पादतल के आघात से महानाद होने लगा। उनके ललाट फलक के स्वेद से सूत, मागध, बन्दी तथा हृदय से विश्वगायक गन्धर्व उत्पन्न हुए। चार मास तक शिव का नृत्य चलता रहा। इसी मध्य शरत्काल आ गया। कार्तिक शुक्ला चतुर्दशी को पार्वती प्रसन्न हो गई। शिव पर उनका जो क्रोध था वह तिरोहित हो गया और तभी शिव से क्षमा-याचना के साथ उन्होंने शिव की स्तुति की। शिव ने भी प्रसन्न होकर उन्हें वर दिया कि पार्वतीकृत स्तुति का पाठ करने वाले को कभी इष्ट-वियोग नहीं होगा और तीन जन्मों तक सुख भोगकर वह शिवलोक को प्राप्त करेगा।

प्रसन्न पार्वती ने निम्न नामों से शिव की स्तुति की थी - देवदेवः, संहसाक्षः सद्योजातः, मृडी, महादेवः, शुभ्रः, वामदेवः, भवानीप्रियकारी, मौली, कृत्तिवासाः, ईशानः, जगदानन्ददाता, जगद्धाता, अन्धकासुरमोक्षः, पञ्चास्यः, ब्रह्मरूपः, सविता, पशूनां पतिः, कपाली, गुणातीतः, शङ्करः, विप्रवह्नि, मुखाग्रः, विरूपाक्षः, गुणी, सूक्ष्मः, शिवः, हरः, भावः, गुरुः, कपर्दी, भवः, भगनेत्रनिपाती, महास्वरूपः, अदः, महेशः, पूषदन्तनिपातः, भस्मनोजन्मकारी, ब्रह्मगर्भः, ईश्वरः, महायज्ञनिपाती, वैराग्यरूपी, हिरण्यरेताः, अमूर्तब्रह्मरूपः, मृगव्याधः, योगाचार्यः, नीलग्रीवः, मूर्त्तानां भावनः, धर्मः, स्मरसंहारकारकः, ब्रह्मण्यदेवः, कृष्णः, कालचक्रः, सितभूतिधरः, शर्वः, चक्री, पञ्चवक्त्रः, त्रिपुरान्तकहारी, महापुरुषपूज्यः, रूपः, अघोरः, गणानां पतिः, नीरूपः, पुरुषः, गङ्गाधरः। (वही, नागर, 254/40-78)

देवादिदेव महादेव शिव

उसी प्रसन्नता के आवेश में शिव ने अपनी प्रिया को अपना आधा शरीर ही समर्पित कर दिया। इससे अर्धनारीश रूप शिव एक ओर से स्वर्णाभरण युक्त और दूसरी ओर भुजङ्गशोभित, एक ओर कोमल वस्त्रावृता और दूसरी ओर कृत्तिवासा, एक ओर मत्स्यवाहन और दूसरी ओर वृषभाङ्कित, एक ओर सखियों से परिवृता तो अन्य ओर पार्षदों से सेवित हो गए। (वही, नागर, 254/83-93)

शिव के नृत्य के प्रसङ्ग में उल्लेखनीय है कि नृत्यविचक्षण तथा सङ्गीतप्रिय शिव ने अपने में से छः अमूर्त रागों को उत्पन्न किया था। महादेव शिव के चिन्तन करने से ही उनके विविध अङ्गों से उन रागों का प्रादुर्भाव हुआ था। विमोहित करने वाला ज्येष्ठ पुत्र था श्रीराग। शिव के कटिभाग से द्वितीय पुत्र वसन्त राग, शिव के हृदय से विश्व के विभूषण के रूप में तृतीय पुत्र पञ्चम उत्पन्न हुआ। स्वयं भैरव ही भैरव राग के नाम से शिव की नासिका से प्रकट हुआ था। नटनारायण आधार भाग से और महेश का प्रिय पुत्र मेघराग शिव के सिर से उत्पन्न हुआ।

इन छः रागों की छः-छः रागिणी रूपिणी पत्नियां हुईं जो शिव भगवान् के सिर से प्रकट हुईं। श्रीराग की प्रिय पत्नियां हैं— गौरी, कोलाहली, धीरा, द्राविडी, मालकौशिकी और देवगान्धारी। वसन्त राग की पत्नियों के नाम हैं— आन्दोला, कौशिकी, चरमञ्जरी, गण्डगिरी, देवशाखा और रामगिरी। पञ्चम राग की पत्नियां हैं— त्रिगुणा, स्तम्भतीर्था, अहिरी, कुङ्कुमा, वैराटी एवं सामवेरी। भैरवी, गुर्जरी, भाषा, वेलागुली, कर्णाटकी और रक्तहंसा भैरवभार्याएं हैं। मेघराग की पत्नियों के अभिधान हैं— बङ्गाली, मधुरा, कामोदा, अक्षिनारिका, देवगिरी, देवाली। नटनारायण की पत्नियों के नाम हैं— त्रोटकी, मोडकी, नर, दुम्बी, मल्हारी और सिन्धुमल्हारी। इन सभी रागिनियों ने उत्पन्न होते ही शिव को नमन किया और अपने-अपने पति के साथ स्थित हो गईं। (वही, नागर, 254/27-46)

पार्वती के दाम्पत्य कलह के प्रसङ्ग पर लौटा जाए। उन के इसी भांति पुनः एक बार क्रुद्ध हो जाने पर शिव ने उनकी कृष्णभक्तिदा, नित्या, निराकारा, निर्गुणा आदि अभिधानों से स्तुति करके उन्हें प्रसन्न भी किया था। शिव-पठित उस स्तुति का पाठ करने वाला भय से मुक्त रहता है, उसका मित्रभेद दूर होता है और पारस्परिक सम्प्रीति बढ़ती है। (ब्रह्मवै, श्रीकृष्ण, पूर्व, 37/3-50)

आध्यात्मिक सम्पर्क

शिव और पार्वती की इन मानवीय संवेदनाओं से सञ्चालित आचरण से विपरीत उनका एक दार्शनिक तथा आध्यात्मिक सम्पर्क भी है। उसको रेखाङ्कित करने के लिए कतिपय उद्धरण द्रष्टव्य हैं।

देवादिदेव महादेव शिव

एक बार पार्वती ने विष्णुमाया से मोहित होकर चिन्तन किया कि एक ही ब्रह्म के मूर्तिभेद ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर में से सत्त्वप्रधान विष्णु तीनों में श्रेष्ठ हैं। सर्वज्ञ शिव ने पार्वती के मनोभावों का अनुधावन करते हुए पार्वती से कहा, 'देवता भेदरहित होता है। मैं, विष्णु और ब्रह्मा एक सनातन ब्रह्म हैं। तुम ही सरस्वती, लक्ष्मी और दुर्गा हो। अतः तुम श्रीहरि को रति प्रदान करो।' अपने हृदयेश्वर स्वामी की ऐसी आज्ञा से कातर हो पार्वती ने निवेदन किया, 'आप तो कृपासिन्धु हैं तो मुझ पर ऐसी अकृपा क्यों। चिरकाल की तपस्या से मैंने आपको प्राप्त किया है अतः इस दासी का त्याग मत कीजिए। मैं आगामी जन्म में आपकी आज्ञा का पालन करूंगी।' उसी कारण पार्वती कृष्ण अवतार के समय उनकी पत्नी जाम्बवती हुई थी। (वही, श्रीकृष्ण, पूर्व, 6/149-172)

वस्तुतः शिव रहस्यात्मक हैं। उनके तत्त्व को जानना अत्यधिक कठिन है। पार्वती देवी का मानना है कि शिव के अर्ध शरीर में अर्धनारीश्वररूप में कोटि-कोटि जन्मों से वास करने पर भी रहस्यों के भी रहस्य शिव को वे जान नहीं पाई हैं, सामान्य जनों का तो कहना ही क्या। शिव की महिमा का गान करती पार्वती ने निम्न अभिधानों से उनकी स्तुति की - अनन्तरूपी, वेदरहस्यः, श्मशानरतिनित्यः, गगनचारी, ज्येष्ठसामरहस्यः, शतरुद्रप्रियः, वृषकृताङ्कः, यजुर्वेदधरः, ब्रह्माण्डकोटिसंलग्नमाली, गगनात्मा, मणिचित्रितकण्ठः, सर्वार्थसिद्धिः, वेदस्वरूपः, द्विजसिद्धिप्रियः, पुंस्त्रीविकाररूपः, चन्द्रार्द्धधारी, अग्निः, स होमः, आदित्यवरुणः, पृथिवी, अन्तरिक्षः, वायुः, दीक्षितः, संयोगः, वियोगः, धाता, कर्ता, अपहारी, प्रदीप्तशूलहस्तः, ब्रह्मदण्डधरः, पतीनां पतिः, महतां पतिः, कालाग्निरुद्रः, सप्तलोकनिवासी, सर्वभूतानां गतिः, भूतानां पतिः, भगवन् रुद्रः, भगवञ्छिवः, परतः श्रेष्ठः, परतः परः। (स्कन्द, प्रभा, प्रभा, 3/39-50)

अर्धनारीश्वर

अर्धनारीश्वर देवादिदेव महादेव शिव का एक नाम मात्र नहीं अपितु उनका एक रूप— आध्यात्मिक तथा दार्शनिक मान्यता भी है। शिव तथा शक्ति पार्वती का ऐक्यरूप ही अर्धनारीश्वर है। शिव की अङ्गशायिनी होने मात्र से पार्वती अर्धाङ्गिनी नहीं हैं अपितु शिव और शक्ति के रूप में वे दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। वास्तविक अर्थ में शिव अर्धनारीश्वर हैं, पार्वती उनकी अर्धाङ्गिनी हैं। इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय है कि अपने श्यामवर्ण के स्थान पर गौरवर्ण की प्राप्ति के लिए जब पार्वती कठोर तप कर रही थीं तब ब्रह्मा से वर रूप में उन्होंने अपने लिए गौरवर्ण के साथ यह वर भी मांगा था, 'मैं अपने भूतपति शिव के अङ्ग का एक भागरूप हो जाऊँ।' ब्रह्मा ने तभी उन्हें शिव की देहार्धधारिणी बनने का वर दिया था। (स्कन्द, माहे, कौमा, 29/42-44)

देवादिदेव महादेव शिव

इसी अर्धनारीश्वर की भावना के चलते शिव सर्वदा पार्वती को अपने से अभिन्न बताते हैं। लीलारूप में दो रूप धारण किये हुए वे एक दूसरे से अविच्छिन्न हैं, अभिन्न हैं। इसी भावना का प्रतिपादन प्रस्तुत घटना से होता है— एक बार पार्वती ने काम के वशीभूत हो शिव के दोनों नेत्र अपनी हथेलियों से मूंद दिये जिससे जगत् के अन्धकारमय हो जाने से समस्त धार्मिक क्रियाएं भी स्थगित हो गई। अकाल-प्रलय की कारण बनी पार्वती जब अपने इस कृत्य का प्रतीकार करने को व्यग्र हुई तो स्वयं शिव ने उन्हें प्रबोधित करते हुए स्पष्ट किया, 'तुम मुझसे अभिन्न हो। मैं स्वयं ही तुम्हारी आत्मा में स्थित होकर इसके प्रतीकार-स्वरूप तप करूंगा। तुम्हारे उस तप से यह धरती शस्यश्यामला हो जाएगी।' (वही, माहे, अरुणा, पूर्व, 3/23-30)

शिव-पार्वती के अर्धनारीश्वररूप के सम्बन्ध में यह वृत्तान्त भी स्मरणीय है— अपनी कठोर तपस्या के उपरान्त पार्वती जब शिव से मिलित हुई तो रात्रि में दीर्घ समय तक शिव के साथ संसक्त रहकर उनकी विरहज्वाला उपशमित हो गई। तब शिव ने उन्हें समझाया, 'तुम्हें किसी कारण और किसी प्रकार व्याकुल होना शोभा नहीं देता है। मेरा और तुम्हारा ऐक्य चन्द्रमा और ज्योत्स्ना के समान है। वस्तुतः हम दोनों पूर्णतया एक हैं।' इसी बात को नाना प्रकार से समझाते हुए शिव ने पार्वती को अपने निकट बैठा लिया। लज्जा से अङ्गों को सिमटाती हुई पार्वती को शिव ने अपने अङ्गों में लीन कर लिया। उसी समय प्रेमपूर्ण हुए उन दोनों के अङ्ग परस्पर मिलित हो गए और शिव के अर्धनारीश्वर रूप का निर्माण हुआ। वस्तुतः वामदेव शिव ने उमा को निवास के लिए अपनी देह समर्पित की। (वही, माहे, अरुणा, पूर्व, 21/1-35)

ब्रह्मा के कठोर तप से सन्तुष्ट उसी अर्धनारीश्वररूप में जब शिव तथा शिवा उनके समक्ष प्रकट हुए तब ब्रह्मा ने निम्न नामों से उनका स्तवन किया — सर्वगुणश्रेष्ठः, सर्वसुराधिपः, अमोघमहामायः, अमोघमनोरथः, अमोघमहालीलः, मोघमहाबलः, शाश्वतिकैश्वर्यः, शाश्वतिकालयः, शाश्वतिकाकारः, शाश्वतिकानुगः, अवलोकनायत्तजगत्कारणबृंहणः, उपेक्षाकटाक्षोत्थहुतभुक् भुक्तभौतिकः, नामैकविन्यस्तविश्वतत्त्वसमुच्चयः, असुरशिरोनिष्ठश्रेष्ठानुगकदम्बकः, प्रादेशिकैश्वर्यवीर्यशौर्यविजृम्भणः, विश्वबहिर्भूतः, निरस्तपरवैभवः, प्रणीतपञ्चार्थयोगपरमामृतः, घोरसंसारमहोरगभिषग्वरः, त्रिपुरकालाग्निः, प्रथमः, सर्वज्ञः, सर्वप्रबोधकः, प्रचुरदिव्याङ्गः। (शिव, वाय, पूर्व, 15/15-31)

वस्तुतः शिव और पार्वती का सम्बन्ध जितना प्रतीकात्मक है, उतना ही रहस्यात्मक। स्वयं शिव का वक्तव्य है, 'तुम प्रात्यायिक विद्या हो तो मैं वेद्य (ज्ञेय) हूं। मैं तुम्हारी ही आज्ञा से विश्व की रचना तथा पुनर्रचना करता हूं। तुम्हारे बिना मैं ऐश्वर्यहीन हूं— मेरा

देवादिदेव महादेव शिव

ईश्वरत्व तुम्हारे कारण से ही है। हम दोनों कभी वियुक्त नहीं हो सकते हैं क्योंकि तुम वागमृत हो तथा मैं अर्थामृत हूँ।' (शिव, वाय, पूर्व, 27/9-35)

उनके उसी रहस्यात्मक सम्बन्ध का एक और दृष्टान्त प्रस्तुत है - दारुवन में ऋषिपत्नियों को अपनी चेष्टाओं से शिव ने कामासक्त कर दिया तो उन ब्राह्मणों के शाप से शिव का लिङ्ग भूपतित हो गया। भूमि पर गिरते ही वह लिङ्ग अग्निपुत्र बनकर पृथ्वी, अन्तरिक्ष, पाताल- सर्वत्र सभी को भस्म करता हुआ विचरण करने लगा। तब ब्रह्मा ने विपन्न देवों और ऋषियों को पार्वती की स्तुति करने के लिए कहा जिससे पार्वती योनि का आकार लेकर शिवलिङ्ग को धारण कर उसे स्थिर कर सके। शिव ने भी ब्रह्मा की बात का समर्थन करते हुए बताया कि पार्वती के अतिरिक्त अन्य कोई भी उस लिङ्ग को धारण नहीं कर पाएगा। अन्ततः अनेक विधानपूर्वक पार्वती ने उसे धारण कर संसार का कल्याण किया। यह प्रकृति और पुरुष के प्रतीक का ही आख्यान है। कुम्भरूपा योनि में बाणरूपी लिङ्ग को धारण करने के कारण पार्वती बाणरूपा भी कहलाती हैं। वह लिङ्ग हारकेश नाम से विख्यात हुआ। (शिव, कोटि, 12/6-53)

शिव और नदियाँ

शिव का पार्वती के साहचर्य में अनेकधा तप करने का वर्णन भी उपलब्ध होता है। उसी भांति एक बार वे ऋक्ष पर्वत पर तप करने लगे तो शिव के शरीर से स्वेद की धारा निकली जो उस पर्वत को प्लावित कर एक नदी बन गई। उस नदी ने स्त्रीरूपिणी होकर शिव की आराधना की। दस सहस्र वर्षों के उपरान्त प्रसन्नचित्त से शिव के वरदाता के रूप में समक्ष प्रकट होने पर उस नदी ने प्रलय काल में भी अक्षय रहने का वर मांग लिया। नदी की प्रार्थना थी, 'उत्तर भाग में जाह्नवी गङ्गा के समान दक्षिण मार्ग में मैं सर्वपूजिता होकर दक्षिण गङ्गा के रूप में प्रसिद्धि को प्राप्त करूँ।' तभी से शिव के अङ्ग से उद्भूत शोण, महानदी, नर्मदा, सुरसा, मन्दाकिनी, दशार्णा, चित्रकूटा, तमसा, करभा, यमुना, चित्रोत्पला, रजना, वालुवाहिनी आदि के समान वह भी पापविनाशिनी बन गई। (स्कन्द, आव, रेवा, 4/14-48)

शिव के साथ नदियों का उल्लेख हो और कलाधरप्रिया गङ्गा को विस्मृत कर दें, यह नहीं हो सकता। पृथिवीतल पर गङ्गा के अवतरण में तो भगीरथ के साथ ही शिव का नाम भी अविच्छेद्य रूप से जुड़ा है। भगीरथ ने शिव की उपासना करके अपने सिर पर ऊपर से गिरती गङ्गा को धारण करने के लिए शिव को सम्मत करवाया और तभी दुःसह वेग के साथ गङ्गा आकाश से सीधे शिव के सिर पर गिरी और उनके जटामण्डल में भ्रमित होकर वहीं विचरण करने लगी। भगीरथ की प्रार्थना पर ही शिव

देवादिदेव महादेव शिव

ने तब उसे बिन्दुसर में छोड़ा और भगीरथ की अनुगामिनी बन वह मर्त्यलोक में प्रवाहित होने लगी। (राम, बाल, 42/1-24)

माना जाता है कि स्वयं गङ्गा ने ही मांग की थी कि आकाश से नीचे गिरने पर उसके प्रवाह को धारण करने वाला कोई समर्थ व्यक्ति होना चाहिए अन्यथा वह वेग के कारण पृथ्वी तल को फोड़कर रसातल में चली जाएगी। तभी भगीरथी ने ब्रह्माण्ड में सर्वाधिक समर्थ व्यक्ति शिव को ही गङ्गा के धारण हेतु प्रसन्न किया और उसी के उपरान्त शिव ने उसे अपने मस्तक पर धारण किया। (महा, आर, 107/14-25; भाग, 9/9/1-11) स्वभाव से ही पावनी गङ्गा शिव के सिर पर वास करने के कारण अधिक पवित्र हो गई। (ब्रह्मवै, प्रकृति, 6/86-87)

शिव ने लोकोपकार की दृष्टि से कलियुग के अष्टादशवें वैवस्वत मन्वन्तर तक गङ्गा को पृथ्वी पर रहने के लिए कहा। इस पर गङ्गा ने शिव से भी वहीं विराजित होने की प्रार्थना की। तभी से बृहस्पति के सिंह राशि में प्रवेश करने पर शिव तथा गङ्गा के सान्निध्य में समस्त देवी-देवता, ऋषि आदि और तीर्थ आदि का भी आगमन होता है। वहां पर शिव त्र्यम्बक नाम से पूजित होते हैं जबकि गङ्गा गौतमी गङ्गा कहलाती है। (शिव, कोटि, 3/34-38)

एक मान्यता के अनुसार करुणा के पारावार गङ्गाधर शिव ने प्राणियों पर कल्याण करने की इच्छा से श्रुतियों के अक्षरों को निचोड़ कर उस जल से समस्त योग एवं उपनिषदों के सार को निकालकर इस पावनतमा नदी गङ्गा का निर्माण किया था। (स्कन्द, काशी, पूर्व, 28/87-89) देवकार्य की सिद्धि हेतु देवताओं के याचना करने पर शिव ने गङ्गा को हिमालय को प्रदान किया था। (राम, बाल, 34/11-17)

गङ्गा शिववत्सला तो है ही साथ ही शिव-पुत्र स्कन्द की माता भी है। शिव के वीर्य को धारण करने वाले अग्नि ने तारकासुर के वध के लिए शिव-पुत्र को उत्पन्न करने के लिए गङ्गा से समागम किया था। उसी से गर्भ धारण करने वाली गङ्गा जब उसे सम्भालने में असमर्थ हो गई थी तब उसने उसे मेरुपर्वत पर छोड़ दिया था। वह ही शरवन में बढ़कर और कृतिकाओं से पालित होकर कार्तिकेय नाम से प्रसिद्ध हुआ। (महा, अनु, 84/52-72)

गङ्गा के सम्बन्ध में शिव के उद्गार के साथ ही इस प्रसङ्ग को समाप्त किया जा रहा है, 'गङ्गा मेरी (शिव की) ही अपरमूर्ति, तोयरूपा तथा शिवात्मिका है। वह अनेक ब्रह्माण्डों की आधार पराप्रकृति है।' (स्कन्द, काशी, पूर्व, 27/7-10)

देववृन्द के अधीश्वर शिव

शिव आदिदेव हैं, महादेव हैं, देवों के अधीश्वर हैं। परमात्मा परमेश्वर वे ही मूलतः अन्य सभी रूपों में अभिव्यक्त हैं तथापि अन्य देवों के साथ उनका सम्बन्ध भी विवेच्य है।

ब्रह्मा, विष्णु एवं सुदर्शन चक्र

शिव के ही दो अन्य रूप विष्णु और ब्रह्मा के साथ शिव के सम्बन्ध, उनके पारस्परिक भक्ति-भाव, आदर, सम्मान, प्रीति, विरोध, दम्भपूर्ण आचरण, दम्भखण्डन, संघर्ष आदि का विवरण प्रस्तुत करना प्रासङ्गिक ही होगा।

शिव के स्वरूप से सुपरिचित होने पर भी ब्रह्मा तथा विष्णु में कभी-कभी गर्व उत्पन्न हो जाता है। इसी भांति एक बार ब्रह्मा ने विष्णु से कहा, 'मैं धाता, विधाता हूँ। मुझमें ही सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड अवस्थित है।' तब विनम्र विष्णु ने ब्रह्मा की आज्ञा से उनके उदर में प्रवेश किया और वहां समस्त चराचर ब्रह्माण्ड को देखकर वे विस्मित हुए। तदुपरान्त ब्रह्मा ने विष्णु के उदर में प्रवेश कर वैसा ही ब्रह्माण्ड देखा। गर्वोन्मत्त ब्रह्मा ने विष्णु से कहा, 'हम दोनों ही परमेश्वर हैं। हम एक हैं— नारायण और पितामह। कोई अन्य महेश्वर नहीं है।' ब्रह्मा की बात को काटते हुए विष्णु ने समझाया, 'मैं परमेश्वर शिव को जानता हूँ। आप भी आदि-अन्तहीन उन परमेश्वर की शरण में जाइए।' तब अनुग्रहपूर्वक शिवशङ्कर वहाँ प्रत्यक्ष हुए। वे त्रिनयन, जटमण्डलमण्डित, त्रिशूलपाणि और तेजपुञ्जरूप में आविर्भूत हुए थे। मोहान्ध होने के कारण ब्रह्मा उन्हें पहचान नहीं पाए तो विष्णु ने शिव की स्तुति करते हुए ब्रह्मा को शिव का परिचय दिया और दिव्य चक्षु प्रदान किया जिससे ब्रह्मा को भी शिवज्ञान प्राप्त हुआ। उस समय विष्णु ने शिव के वैशिष्ट्यों को प्रतिपादित करते हुए जिन नामों को परिगणित किया था वे हैं — स्वयंज्योतिः, लोकानामीश्वरः, सर्वात्मा, भूतानामधिपः, योगी, विमलः, प्रधानः, प्रभुः, अव्ययः, निष्कलः। (कूर्म, पूर्व, 9/56-60)

क्रुद्ध शिव को सन्तुष्ट करने के लिए ब्रह्मा को समक्ष रखकर विष्णु ने जो

शार्वस्तुति की उसकी नामावलि है— भगवान्, सुव्रतः, अनन्ततेजाः, क्षेत्राधिपतिः, बीजी, शूली, अमेद्रः, ऊर्ध्वमेद्रः, वैकुण्ठरेताः, ज्येष्ठः, श्रेष्ठः, अपूर्वप्रथमः, हव्यः, पूज्यः, सद्योजातः, गह्वरः, धनेशः, हैमचीराम्बरः, अस्मंदादीनां प्रभवः, भूतानां प्रभवः, अवदातानां द्रव्याणां प्रभवः, ग्रहाणां प्रभवः, ताराणां प्रभवः, योगस्य प्रभवः, साङ्ख्यस्य प्रभवः, ध्रुवनिशीथानामृषीणां पतिः, विद्युदशनिमेघानां गर्जितप्रभवः, उदधीनां प्रभवः, द्वीपानां प्रभवः, अद्रीणां प्रभवः, वर्षाणां प्रभवः, नदानां प्रभवः, नदीनां प्रभवः, औषधिप्रभवः, वृक्षाणां प्रभवः, धर्माध्यक्षः, धर्मः, स्थितीनां प्रभवः, रसानां प्रभवः, रत्नानां प्रभवः, क्षणाणां प्रभवः, कलानां प्रभवः, निमेषप्रभवः, काष्ठानां प्रभवः, अहोरात्रार्धमासानां प्रभवः, मासानां प्रभवः, ऋतूनां प्रभवः, सङ्ख्यायाः प्रभवः, परार्धस्य प्रभवः, परस्य प्रभवः, पुराणप्रभवः, युगस्य प्रभवः, चतुर्विधस्य सर्गस्य प्रभवः, अनन्तचक्षुः, कल्पोदयनिबद्धानां वार्तानां प्रभवः, विश्वस्य प्रभवः, ब्रह्मादिप्रभवः, विद्यानां प्रभवः, विद्यानां पतिः, व्रतानां पतिः, मन्त्राणां पतिः, पितॄणां पतिः, पशूनां पति, वाग्वृषः, पुराणवृषभः, सुचारुचारुकेशः, ऊर्ध्वचक्षुः शिराः, गोवृषेन्द्रध्वजः, प्रजापतीनां पतिः, सिद्धानां पतिः, दैत्यदानवसङ्घानां पतिः, रक्षसां पतिः, गन्धर्वाणां पतिः, यक्षाणां पतिः, गरुडोरगसर्पाणां पतिः, पक्षिणां पतिः, गोकर्णः, गोष्ठः, शङ्कुकर्णः, वराहः, अप्रमेयः, रक्षोधिपतिः, अप्सराणां पतिः, गणानां पतिः, अम्भसां पतिः, तेजसां पतिः, लक्ष्मीपतिः, श्रीमान्, हिमान्, बलाबलसमूहः, अक्षोभ्यक्षोभणः, दीर्घशृङ्गेकशृङ्गः, वृषभः, ककुयी, स्थैर्यः, वपुः, तेजः, सुप्रभः, भूतः, भविष्यः, वर्तमानः, वीरः, शूरः, अतिगः, वरदः, वरेण्यः, सर्वगतः, भूतः, भव्यः, भवः, महान्, सर्वः, महातेजः, सर्वगतः, जनः, तपः, वरदः, वन्द्यः, मोक्षः, नरकः, भजमानः, इष्टः, याजकः, अम्युदीर्णः, दीप्तः, तत्त्वः, निर्गुणः, पाशः, हस्तः, स्वाभरणः, हुतः, अपहुतः, प्रहुतप्राशितः, इष्टः, मूर्तः, अग्निष्टोमत्विजः, ऋतः, सत्यः, भूताधिपतिः, सदस्यः, दक्षिणावमृथः, अहिंसः, तुष्टिप्रदानः, त्र्यम्बकः, सुगन्धी, इन्द्रियपतिः, परिहरः, सग्वी, विश्वः, विश्वरूपः, विश्वतोक्षिमुखः, सर्वतः पाणिपादः, रुद्रः, अप्रमितः, हव्यः, कव्यः, हव्यकव्यः, सिद्धः, मेध्यः, अव्ययः, सुवीरः, सुघोरः, सुमेधाः, सुप्रजः, दीप्तः, भास्करः, सुपर्णः, तपनीयनिभः, विरूपाक्षः, यक्षः, पिङ्गलः, महौजाः, दृष्टिघ्नः सौम्येक्षणः, धूम्रः, श्वेतः, कृष्णः, लोहितः, पिशितः, पिशङ्गः, पीतः, निषङ्गी, सविशेषः, निर्विशेषः, इज्यः, पूज्यः, उपजीव्यः, क्षेम्यः, वृद्धः, वत्सलः, कृतः, सत्यः, सत्यासत्यः, पद्मवर्णः, मृत्युघ्नः, मृत्युः, श्यामः, गौरः, कटुः, रोहितः, कान्तः, सन्ध्याभ्रवर्णः, वायुरूपी, कपालहस्तः, दिवस्त्रः, कपर्दी, शर्वः, अबध्यः, वरः, विभ्रान्तः, कृशानुः, दुर्गः, महान्, रोधः, कपिलः, अर्कप्रभशरीरः, बलीः, रंहः, पिनाकी, प्रसिद्धः, स्फीतः, प्रसृतः, अक्षमालः, दिग्वासः, शिखण्डी, चित्रः, चित्रवर्णः, विचित्रः, धरः, चेकितानः, तुष्टः, अनिहितः, क्षान्तः, शान्तः, वज्रसंहननः, रक्षोघ्नः, मखघ्नः, शितिकण्ठः, ऊर्ध्वरेताः, अरिहः, कृतान्तः, तिग्मायुधधरः,

देवादिदेव महादेव शिव

सम्मोदः, प्रमोदः, इरिण्यः, प्रणवः, प्रणवेशः, भक्तानां शर्मदः, मृगव्याधः, दक्षः, दक्षयज्ञहरः, सर्वभूतः, भूतः, सर्वेशः, अतिशयः, पुरभेत्ता, शान्तः, सुगन्धः, वरेषुः, पूष्णः दन्तविनाशः, भगनेत्रान्तकः, कणादः, वरिष्ठः, कामाङ्गदहनः, खे करालचक्रम्, नागेन्द्रदमनः, दैत्यानामन्तकः, दिव्याक्रन्दकरः, श्मशानरतिनित्यः, त्र्यम्बकधारी, प्राणपालः, धवलमालाधरः, परिष्टुतः, नरनारीशरीरः, देव्याः प्रियकरः, जटी, दण्डी, व्यालयज्ञोपवीती, नृत्यशीलः, वाद्यनृत्यप्रियः, मन्थुः, गतिशीलः, सुगीतिं गायन्, कटककरः, भीमः, उग्ररूपधरः, विभीषणः, भगप्रथनः, सिद्धसङ्घातगीतः, महाभागः, मुक्ताङ्गहासः, क्ष्वेडितास्फोटितः, नदन्, कूर्दन्, मनः प्रमुदितः, अद्भुतः, स्वपन्, धावन्, प्रस्थितः, ध्यायन्, जृम्भन्, तुदन्, द्रवन्, चलन्, क्रीडन्, लम्बोदरशरीरी, नमस्कृतः, कम्पः, मुण्डः, विकरः, उन्मत्तवेषः, किङ्किणीकः, विकृतवेषः, क्रूरः, उग्रः, अमर्षणः, दीप्तिः, निर्गुणः, प्रियः, वादः, मुद्रामणिधरः, स्तोकः, तनुः, गुणैरप्रतिमः, गणः, गुह्यः, गम्यः, गमनः, जपः, जप्यः, महायोगी, महादेवः, महेश्वरः, पुरेशयः, गुहावासी, खेचरः, रजनीचरः, तपोनिधिः, गुहगुरुः, नन्दनः, नन्दिवर्धनः, हयशीर्षः, धराधाता, विधाता, भूतिवाहनः, बौद्धव्यः, बोधनः, नेता, धूर्वहः, दुष्प्रकम्पकः, बृहद्रथः, भीमकर्मा, बृहत्कीर्तिः, धनञ्जयः, घण्टाप्रियः, दीप्तिः, ध्वजी, छत्री, पताका, ध्वजिनीपतिः, कवची, पट्टिसी, शङ्खी, परश्वभृत्, पाशहस्तः, अगः, अनघः, शूरः, देवराजः, अरिमर्दनः, अग्निः, क्रोधागारः, प्रसन्नात्मा, कामहा, कामदः, प्रियः, ब्रह्मण्यः, ब्रह्मचारी, गोघ्नः, शिष्टपूजितः, वेदानामव्ययः कोशः, हव्यवाहनः, भवानीशः, अनादिमान्, धामराशिः, ब्रह्मा, लोकानां कर्ता, आदिसर्गः, प्रकृतिभ्यः परमः। (वायु, 24/90-165)

क्षेत्राधिपतिः, सुमेण्ड्रः, अर्च्यमेण्ड्रः, रूक्षरेताः, गह्वरः, घटेशः, व्योमचीराम्बरः, ध्रुवनिबद्धानामृषीणां प्रभुः, धर्मवृक्षः, ब्रह्माधिपतिः, विद्याधिपतिः, व्रताधिपतिः, मन्त्राधिपतिः, वाग्वृषः, पुराणवृषभः, गोवृषेन्द्रध्वजः, सिद्धीनां पतिः, श्रीपः, बलाबलसमूहः, अक्षोभ्यक्षोभणः, दीप्तशृङ्गैकशृङ्गः, बन्धः, प्रत्युदीर्णः, अतिगुणः, उपहृतः, प्रहृतः, प्राशितः, प्रभुः, अग्निष्टोमद्विजः, सदस्यः, दक्षिणावभृथः, अहिंसः, अप्रलोभः, पशुमन्त्रौषध, पुष्टिप्रदानः, सुशीलः, सुशीली, जरासिद्धः, अधरः, अयः, सस्तुपतः, इन्द्रियपत्राणां लेलिहानः, इज्यापरः, सुवीरः, अक्षोभ्यक्षोभणः, सुप्रजः, सुमेधः, विस्तृतः, वक्रकेशः, अरुवक्षः, शिखः, तपनीयनियमः, वृष्टिघ्नः, सौम्येक्षणः, उपजीव्यः, सत्यासत्यः, पद्मवर्णः, मृत्युघ्नः, गौरः, श्यामः, कटुः, लोहितः, महासन्ध्याभ्रवर्णः, चारुदीप्तः, दीक्षी, तर्क्यातर्क्यशरीरः, सिकत्यः, प्रवाह्यः, स्थितः, सुमेधाः, कुलालः, चित्रवेषः, निहितः, वज्रसंहनः, रक्षोघ्नः, विषघ्नः, ऊर्ध्वमन्युः, लेलिहः, तिग्मायुधधरः, यतिवेद्यः, भगनेत्रान्तकः, सर्वभूतात्मभूतः, पुरघ्नः, सुशस्त्रः, परश्वध, रङ्गेकरालवक्त्रः, दैत्यानामन्तकेशः, दैत्याक्रन्दकरः, हिमघ्नः, आर्द्रचर्मधरः,

देवादिदेव महादेव शिव

श्मशानरतिनित्यः, उल्मुकधारी, प्राणपालः, नरनारीशरीरः, नृत्यशीलः, उपनृत्यप्रियः, गीतशीलः, कटङ्कटः, अप्रियः, प्रियः, सिद्धसंघानुगीतः, क्ष्वेडितास्फोटितः, प्रमुदितात्मा, लम्बोदरशरीरी, कीकटः, उन्मत्तदेहः, किङ्किणीकः, विकृतवेषः, अमर्षणः, वामप्रियः, चूडामणिधरः, तोकः, गुण्यः, अगम्यगमनः, महायोगः, पुरेशयः, गुहावासी, खेचरः, रजनीचरः, तपोनिधिः, हयशीर्षा, पयोधाता, बोद्धव्यः, बोधिता, दुष्प्रकम्पनः, बृहद्रथः, बृहत्कीर्तिः, धनअयः, घण्टाप्रियः, ध्वजिनीपतिः, धनुर्हस्तः, परमश्वधी, अधस्मरः, देवराजः, क्रोधाकारः, कामदः, कामगः, शिष्टपूजितः, देवानामक्षयः कोशः। (लिङ्ग, पूर्व, 21/1-87)

प्रस्तुत विवरण से स्पष्ट है कि विष्णु सत्त्वगुण प्रधान होने के कारण शिवतत्त्व के ज्ञाता हैं जबकि ब्रह्मा में रजोगुण के प्राबल्य के कारण बारम्बार गर्व का भाव पनप जाता है। यही कारण है कि स्वयं शिव की दृष्टि में अपनी सत्यनिष्ठा और सात्त्विकता के कारण विष्णु का अधिक महत्त्व है— इस तथ्य की पुष्टि प्रस्तुत आख्यान से हो जाती है — एक बार ब्रह्मा और विष्णु अपना-अपना महत्त्व प्रतिपादित करते हुए विवाद करने लगे। शिव उन दोनों को उचित शिक्षा देने के लिए एक अग्निपुत्र के रूप में उन दोनों के मध्य प्रकट हो गए। उस अग्निपुत्र का न आदि ज्ञात था न ही उसके अन्त का ज्ञान हो पा रहा था। तब ब्रह्मा और विष्णु ने परस्पर निश्चय किया और उसके अनुरूप विष्णु उस अग्निपुत्र के मूलभाग को देखने पाताल गए। अनेक दूर जाकर भी जब कुछ भी ज्ञात न हुआ तो वे पराजित से होकर लौट आए। दूसरी ओर ब्रह्मा उस अग्नि गोलक का अन्त देखने ऊपर की ओर गए। कुछ दूर जाने के उपरान्त ब्रह्मा परास्त हो गए किन्तु अपनी पराजय स्वीकार न करके उन्होंने प्रवञ्चना का आश्रय लिया और अपने मिथ्याचरण का सहयोगी बनाया केतकी पुष्प को। परिणामतः ब्रह्मा ने धरती पर लौटकर मिथ्या ही कह दिया कि उन्होंने अग्निपुत्र का अन्त देखा है और साक्षी के रूप में केतकी को प्रस्तुत किया। इस पर भगवान् शिव उस अग्निपुत्र से बाहर आ गए। विष्णु भक्ति से गदगद हो उनके चरणों पर गिर गए। विष्णु की सत्यनिष्ठा से प्रसन्न शिव ने विष्णु की प्रशंसा की और वर दिया, 'मानव मेरे समान ही तुम्हारी भी पूजा करेंगे। अब से तुम्हारा पृथक् देवालय होगा, तुम्हारी प्रतिमा होगी और तुम्हारा उत्सव आदि होगा।' (शिव, विद्येश्वर, 7/30-32)

शिव ने विष्णु के विषय में यह भी कहा था, 'जो मुझे और विष्णु को पृथक् मानते हैं, वे मुझे भी नहीं जानते हैं। विष्णु और ब्रह्मा मेरे ही अङ्ग से उत्पन्न हैं तो रुद्र मेरे हृदय से उत्पन्न हैं एवं जगत् की आत्मा हैं। मैं विष्णु, ब्रह्मा और रुद्र—तीन रूपों से तीन गुणों के द्वारा सृष्टि, पालन और संहार करता हूँ। मैं स्वयं इन गुणों से पृथक् तथा प्रकृति एवं पुरुष से परे हूँ।' (वही, रुद्र, सृष्टि, 9/51-58)

देवादिदेव महादेव शिव

यह भी माना जाता है कि विष्णु वराह रूप धारण करके पाताल गए थे और ब्रह्मा ने हंस के रूप में ऊर्ध्व में गमन किया था। सहस्र वर्षों के उपरान्त भी विष्णु उसका मूल नहीं देख पाए थे अतः उन्होंने सोचा कि ब्रह्मा भी अवश्य ज्योतिषुज का अन्त नहीं देख पाए होंगे। विष्णु दर्पमुक्त हो गए किन्तु ब्रह्मा का गर्व-भङ्ग नहीं हुआ अतः उन्होंने असत्य का आश्रय लिया। तब शिव ने प्रकट होकर विष्णु की प्रशंसा की जबकि ब्रह्मा की पूजा का निषेध कर दिया। (स्कन्द, माहे, अरुणा, उत्तर, 15/1-12) अनन्तर शिव ने अपने उस तेज को अरुणाद्रि नाम से वहीं स्थित कर दिया। ब्रह्मा और विष्णु की प्रार्थना से वह लिङ्गरूप में वहां विराजित हुआ तो उन दोनों ने विश्वकर्मा के सहयोग से वहां शिवालय का निर्माण करवाया। (वही, माहे, अरुणा, उत्तर, 16/20-53) उस शोणाद्रि को शिव का स्थावर आकार माना जाता है। उसकी प्रदक्षिणा करने वाले को शिव का सारूप्य प्राप्त होता है। प्रदक्षिणा करते हुए पीड़ा भोगने वाला सम्राट् बनता है और अन्त में शाश्वत पद को प्राप्त करता है। (वही, माहे, अरुणा, उत्तर, 22/51-52)

इसी आख्यान का एक परिवर्तित रूप यह भी है कि जब ब्रह्मा ने स्वयं को ही परमेश्वर, सृष्टिकर्ता, सर्वस्व माना तो ब्रह्मा के समान विष्णु भी स्वयं को ही सर्वस्व मानने लगे। उस समय उन दोनों को ही प्रबोधित करने के उद्देश्य से देवादिदेव महादेव एक आदि-अन्त-हीन लिङ्ग के रूप में प्रकट हुए। जब ब्रह्मा और विष्णु को उस लिङ्ग के ओर-छोर का पता ही नहीं चला तो उन दोनों ने ही शिव तत्त्व का अनुधावन करते हुए अञ्जलि बांधकर शिव का स्तवन कर उन्हें प्रसन्न किया। तब शिव ने उन्हें समझाया कि पूर्वकाल में ब्रह्मा और विष्णु शिव के अङ्ग से ही उत्पन्न हुए हैं। उस समय विष्णु ने निम्न अभिधानों ने शिव-स्तवन किया - अनादिः, मूलम्, संसाररोगवैद्यः, शम्भुः, शिवः, शान्तः, ब्रह्मा, लिङ्गमूर्तिः, प्रलयार्णवसंस्थः, प्रलयोद्भूतिहेतुः, ज्वालामालाप्रतीकः, ज्वलनस्तम्भरूपी, आदिमध्यान्तहीनः, स्वभावामलदीप्तिः, महान्, ज्योतिः, अनन्ततेजाः, प्रधानपुरुषेशः, व्योमरूपः, वेधा, निर्विकारः, सत्यः, नित्यः, अतुलतेजाः, वेदान्तसाररूपः, कालरूपः। (कूर्म, पूर्व, 26/66-89)

पृथ्वीमयाकारः, आपोमयाकृतिः, प्रमाकराकारः, अमृतकराकृतिः, वैश्वानराकारः, गन्धवहाकृतिः, होतृमयाकारः, आकाशमयाकृतिः, त्रिगुणातीतः, कालविग्रहः, अक्षयैश्वर्यः, करुणाकरः, सर्वजगत्स्रष्टा, सर्वदेहिनां रक्षिता, सर्वभूतानां हर्ता, अणूनामप्यणीयान्, महतामपिमहान्, स्वर्गः, अपवर्गः, ओङ्कारः, अध्वरः, योगः, परासंवित्, आदितस्थुषाम्, मध्यमस्तस्थुषाम्, अन्तस्तस्थुषाम्, आदिर्जग्मुषाम्, मध्यमर्जग्मुषाम्, अन्तर्जग्मुषाम्, परेशः, परतः शास्ता, सर्वानुग्राहकः, धूर्जटिः, क्रतुध्वंसी, इन्दुशेखरः, स्मरवैरी, मखारातिः, प्रमथाधिपः, व्योमकेशः, मृगव्याधः, कृशानुरेतः। (स्कन्द, माहे, अरुणा, उत्तर, 14/8-30)

सर्वतोमुखः, महाभैरवनादः, भीमरूपः, अव्यक्तः, महान्, लोकसुरेशः, महान्तः, शाश्वतः, सिद्धयोनिः, सर्वजगत्प्रतिष्ठः, श्रेष्ठः, स्कन्दः, यज्ञः, वषट्कारः, स्वाहाकारः, नमस्कारः, संस्कारः सर्वकर्मणाम्, स्वधाकारः, जाप्यः, व्रतानि, नियमाः, वेदाः, लोकाः, देवाः, भगवान् सर्वशः, आकाशस्य शब्दः, भूतानां प्रभवाव्ययम्, भूमेर्गन्धः, रसश्चापाम्, तेजोरूपः, महेश्वरः, वायोः स्पर्शः, देवेशः, वपुश्चन्द्रमसः, बुधः, ज्ञानम्, प्रकृतौ बीजम्, सर्वभूतकर्ता, सूर्यायुतानामयुतप्रभावः, चन्द्रसहस्रगोचरः, पर्वतरूपधारी, सर्वगुणाकारः, पट्टिशरूपधारी, चर्मविभूतिधारी, शायकचक्रधारी, भस्मविभूतिभूषिताङ्गः, कामशरीरनाशनः, हिरण्यवासा, हिरण्यबाहुः, हिरण्यरूपः, हिरण्यनाभः, नेत्रसहस्रचित्रः, हिरण्यरेताः, हिरण्यवर्णः, हिरण्यगर्भः, हिरण्यवीरः, हिरण्यदायी, हिरण्यमाली, हिरण्यवाही, हिरण्यवर्त्मा, भैरवनादनादी, भैरववेगवेगः, दिव्यसहस्रबाहुः, नर्तनवादनप्रियः। (वायु, 55/29-50)

लिङ्ग के माध्यम से गर्वमोहित ब्रह्मा और विष्णु को प्रबोधित करने के वर्णन का ही किञ्चित् परिवर्तित रूप लिङ्गपुराण में उपलब्ध है। तदनुसार गर्वखण्डन हेतु शिव प्रथमतः लिङ्गरूप में प्रकट हुए। तदनन्तर उन्होंने ही ओङ्कार रूप में दर्शन दिया। परम ब्रह्म, अमूर्त ओङ्कार को मूर्तिमान् रूप में समक्ष विराजित देखकर भगवान् विष्णु ने भक्तिभाव से पूरित होकर और इस तथ्य से सुपरिचित होकर कि त्रिशूलधारी शिव ही परम ब्रह्म हैं, वे ही प्रणव हैं, शिव का निम्नाङ्कित सारगर्भित अभिधानों से स्तवन किया — एकाक्षरः, रुद्रः, अकारः, आत्मरूपी, उकारः, आदिदेवः, विद्यादेहः, तृतीयः मकारः, परमात्मा, सूर्याग्निसोमवर्णः, यजमानः, अग्निः, रुद्ररूपः, रुद्राणां पतिः, शिवमन्त्रः, सद्योजातः, वेधा, वामः, वामदेवः, वरदः, अमृतः, अघोरः, अतिघोरः, रंहः, ईशानः, श्मशानः, अतिवेगः, वेगी, श्रुतिपादः, ऊर्ध्वलिङ्गः, लिङ्गी, हेमलिङ्गः, हेमः, वारिलिङ्गः, मोक्षकर्ता, आत्मा, ऋषिः, स्वामी, विष्णुः, भगवान्, नागानां पतिः, ओङ्कारः, सर्वज्ञः, सर्वः, नारायणः, हिरण्यगर्भः, अजः, प्रजानां पतिः, व्यूहहेतुः, महादेवः, देवानामीश्वरः, शर्वः, सत्यः, शमनः, ब्रह्मा, भूतानां सर्वज्ञः, महात्मा, प्रज्ञारूपः, चितिः, चितिरूपः, अम्भः, शिवलिङ्गः, व्यापी, व्योमव्यापी, वायुः, वायुवेगः, वायुव्यापी, शब्दस्पर्शस्वरूपः, रसगन्धः, गन्धी, गणाधिपतिः, गुह्याद्गुह्यतमः, अनन्तः, विरूपः, अनन्तानामयः, शाश्वतः, वरिष्ठः, वारिगर्भः, योगी, संस्थितः अम्भसांमध्ये, ब्रह्माविष्णवोर्मध्ये, गोप्ता, हर्ता, कर्ता, निधनः, ईश्वरः, अचेतनः, चिन्त्यः, चेतनायासहारी, अरूपः, सुरूपः, अनङ्गः, अङ्गहारी, भस्मदिग्धशरीरः, भानुसोमाग्निहेतुः, श्वेतः, श्वेतवर्णः, तुहिनाद्रिचरः, सुश्वेतः, सुवक्त्रः, श्वेतशिखः, श्वेतास्यः, महास्यः, श्वेतलोहितः, सुतारः, विशिष्टः, दुन्दुभी, शतरूपः, विरूपः, केतुमान्, ऋद्धिशोकविशोकः, पिनाकः, कपर्दी, विपाशः, सुपाशः, पाशनाशी, सुहोत्रः, हविष्यम् सुब्रह्मण्यः, सूरी, सुमुखः, सुवक्त्रः, दुर्दमः, दमः, कङ्कः, कङ्करूपः,

कङ्कणीकृतपत्रगः, सनकः, सनातनः, सनन्दनः, सनत्कुमारः, सारङ्गभारणः, महात्मा, लोकाक्षी, त्रिधामः, विरजाः, शङ्खपालः, शङ्खः, रजः, तमः, सारस्वतः, मेघः, मेघवाहनः, सुवाहः, विवाहः, विवादवरदः, शिवः, रुद्रः, प्रधानः, त्रिगुणः, चतुर्व्यूहात्मा, संसारः, संसारहेतुः, मोक्षः, मोक्षरूपः, स्मृतिरूपः, ज्ञानः, ज्ञानगम्यः, संविद्, शिखरः, नीलकण्ठः, अर्धनारीशरीरः, अव्यक्तः, एकादशविभेदः, स्थाणुः, सोमः, सूर्यः, भवः, भवहारी, यशस्करः, अम्बिकाधिपतिः, उमायाः पतिः, हिरण्यबाहुः, हेमरेताः, नीलकेशः, वित्तः, शितिकण्ठः, कपर्दी, नागाङ्गाभरणः, वृषारूढः, सर्वस्य हर्ता, कर्ता, वीररामातिरामः, रामनाथः, विभुः, राजाधिराजः, राज्ञामधिगतः, पालाधिपतिः, पालाशाकृन्ततिः, केयूरभूषः, गोपतिः, श्रीकण्ठनाथः, लिकुचपाणिः, भुवनेशः, वेदशास्त्रः, सारङ्गः, राजहंसः, कनकाङ्गदहरः, सर्पपवीती, सर्पकुण्डलमालः, कटिसूत्रीकृताही, वेदगर्भः, गर्भः, विश्वगर्भः। (लिङ्ग, पूर्व, 18/1-40)

ब्रह्मा के साथ शिव के विरोध का अन्य दृष्टान्त भी दर्शनीय है— एक समय विष्णु द्वारा रचित दारुण अहङ्कार से शिव तथा ब्रह्मा दोनों आक्रान्त हो गए। उसी के प्रभाव में शिव ने ब्रह्मा से उनका परिचय तथा क्रियाकलाप के सम्बन्ध में जिज्ञासा प्रकट की। उसी वाग्वितण्डा में क्रुद्ध एवं ब्रह्मा से पराजित शिव ने ब्रह्मा के पञ्चम मुख ने कुछ तिरस्कार करने वाले वचन कहे। इस पर शिव ब्रह्मा को तृतीय नेत्र से भस्म करने की इच्छा से एकटक देखने लगे। शिव के श्वेत, रक्त, स्वर्ण, नील तथा पिङ्गल वर्ण के पांच सुदर्शन मुख उद्भूत हो गए। इस पर ब्रह्मा ने पुनः उनका उपहास किया तो शिव ने कठोरभाषी ब्रह्मा के पञ्चम मुख को नाखून से छेदकर उनके उस सिर को काट डाला। वह सिर शिव की हथेली में चिपक गया। तब ब्रह्मा ने कवचकुण्डलधारी एक पुरुष का सृजन किया। उस पुरुष ने शिव को पापिष्ठ कहा तो शिव बदरिका आश्रम को चले गए। तब उन्होंने नारायण से भिक्षा मांगी। नारायण के कहने पर शिव ने उनकी वामभुजा पर आघात किया जिससे रक्त की तीन धाराएं प्रवाहित हुईं। उनमें से एक धारा आकाश में जाकर तारामण्डल में स्थापित हुई। दूसरी पृथिवी पर गिरी जिसे तपस्वी अत्रि ने धारण किया। उसी से शङ्कर के अंशभूत दुर्वासा उत्पन्न हुए। तीसरी धारा से श्यामवर्ण कवचधारी युवक उत्पन्न हुआ जिसका ब्रह्मा द्वारा उत्पन्न पुरुष के साथ सहस्रों वर्षों तक घोर युद्ध होता रहा। दोनों के अपराजित रहने पर शिव ने ब्रह्मा के पुरुष को सूर्यमण्डल पर फेंक दिया। (वामन, 2/25-55)

इस आख्यान से पूर्णतया विपरीत यह विवरण भी मिलता है कि एक बार ब्रह्मा ने शिव से प्रार्थना की कि शिव उनके पुत्र बनें। इसके उपरान्त ब्रह्मा ने सुदीर्घ काल तक तप किया किन्तु फल प्राप्त न होने से क्रोधावेश से उनकी आंखों से अश्रु बिन्दु टपक

देवादिदेव महादेव शिव

पड़े। उनसे भूत-प्रेतों की उत्पत्ति हुई जिससे दुःखी ब्रह्मा ने प्राणत्याग का निश्चय किया तो उनके मुख से शिव उत्पन्न हुए। रोदन करने के कारण उनका नाम रुद्र हुआ। ब्रह्मा के आदेश से उन्हीं रुद्र शिव ने कोटि संख्या में अपने समान मृत्युहीन रुद्रों की मानसी सृष्टि की। तब ब्रह्मा ने उनसे मरणधर्मा सृष्टि करने को कहा तो शिव ने वैसी सृष्टि में स्वयं को असमर्थ कहकर ब्रह्मा से ही सृष्टि-कार्य सम्पन्न करने को कहा। इस पर ब्रह्मा को, जो शिव को मात्र अपना पुत्र मान रहे थे, शिव के परमेश्वर रूप का बोध हो गया। ज्ञानचक्षु से शिव-स्वरूप को हृदयङ्गम करके ब्रह्मा ने अञ्जलि बांध भक्तिपूर्वक शिवस्तुति की। उनकी स्तुति से सन्नुष्ट शिव ने ब्रह्मा को सचेत किया कि स्वयं शिव ही ब्रह्मा तथा विष्णु हैं और ब्रह्मा को विविध सृष्टि करने का आदेश दिया।

ब्रह्माकृत उस शिवस्तुति में परिगणित नामावली है - ब्रह्मरूपी, हेतुः, प्रधानपुरुषेशः, योगाधिपतिः, महाप्रासः, पिनाकहस्तः, त्रिनेत्रः, त्रिमूर्तिः, ब्रह्म, जनकः, ब्रह्मविद्याधिपतिः, ब्रह्मविद्याप्रदायी, वेदरहस्यः, वेदान्तसारसारः, वेदात्ममूर्तिः, बुद्धः, योगिनां गुरुः, विविधैःभूतैःपरिवृतः, ब्रह्मण्यदेवः, ब्रह्माधिपतिः, दिग्वासाः, मुण्डः, दण्डी, मलहीनः, ज्ञानगम्यः, तारः, तीर्थः, योगर्द्धिहेतुः, धर्मादिगम्यः, योगगम्यः, निष्प्रपञ्चः, निरामासः, विश्वरूपः, अक्षरम्, परं ज्योतिः, अनन्तः पुरुषः, प्रधानम्, प्रकृतिः, भूमिः, आपः, अनलः, वायुः, व्योम, अहङ्कारः, ब्रह्मसंज्ञितः, चन्द्रात्मा, वाय्वात्मा, चतुर्वक्त्रात्मा, विष्ण्वात्मा, शेषात्मा, रुद्रात्मा, तोयात्मा, सर्वसाक्षी, विश्वतस्तनुः, योगात्मा, विद्यात्मा, परमेश्वरः, नित्यानन्दः, निराधारः, निष्कलः, परमः शिवः, परमात्मा, परमेश्वरः। (कूर्म, पूर्व, 10/40-72)

प्रसङ्गतः उल्लेखनीय यह है कि शिव ने ब्रह्मा की पूजा का जो निषेध किया था वह उनके तृतीय अपराध का दण्ड था। प्रथम अपराध था अपना दम्भ प्रकट करना। हुआ यह कि ब्रह्मा ने अपने पञ्चम सिर के कारण स्वयं को विशिष्ट माना कि उनके समकक्ष कोई अन्य देव नहीं है। शिव ने ब्रह्मा के उस दर्प को नष्ट करने के उद्देश्य से अपने वाम अङ्गुष्ठ के नखभाग से ब्रह्मा के पञ्चम सिर का छेदन कर दिया। (पद्म, सृष्टि, 14/90-121; स्कन्द, आव, अव, 2/36-45) ब्रह्मा का एक सिर काटना ब्रह्महत्या के समतुल्य पाप होने के कारण ब्रह्महत्या शिव की अनुगामिनी हो गई। सर्वत्र भटकने के उपरान्त शिव को ब्रह्मा की शरण में आना पड़ा। शिव ने ब्रह्मा को प्रसन्न करने के लिए उनका स्तवन किया। (पद्म, सृष्टि, 14/122-127)

शिव पुराण के अनुसार गर्वित ब्रह्मा ने शिव को सम्बोधित करके कहा कि पूर्वकाल में स्वयं शिव ब्रह्मा के भाल भाग से उत्पन्न हुए थे अतः वे ब्रह्मा के पुत्र हैं और उन्होंने ही शिव का नाम रुद्र रखा है। इस पर शिव ने क्रुद्ध होकर भैरव की सृष्टि की

देवादिदेव महादेव शिव

जिसने शिव की आज्ञा से बाएं हाथ की अंगुलि के नाखून से ब्रह्मा के पश्चम सिर को काट दिया। (शिव, शत, 8/42-53)

यह भी कथानक उपलब्ध है कि विष्णु से प्रतिस्पर्धा करते हुए लिङ्ग के छोर को देख लेने के विषय में मिथ्या भाषण करने के लिए ब्रह्मा ने जो गर्दभ के सिर को पश्चम सिर के रूप में अपने धड़ पर धारण किया था, उसने जब देवों को विनष्ट करना आरम्भ किया तो विष्णु ने उसे काट दिया। वह भयानक सिर यदि भूपतित होता तो धरती उसे धारण नहीं कर सकती थी अतः स्वयं शिव ने उसे धारण कर लिया था। तभी से वह स्थान ब्रह्मतीर्थ कहलाने लगा। (ब्रह्म, 13/2-22)

शिव द्वारा ब्रह्मा के पश्चम सिर काटने का कारण शिव की ईर्ष्या को भी माना गया है। हुआ यह कि एक बार चतुर्मुखी शिव ब्रह्मा के दर्शनार्थ ब्रह्मलोक गए तो पश्चान्न ब्रह्मा को देखकर ईर्ष्या के वशीभूत होकर उन्होंने नखाग्र से उस सिर को काट दिया। वह सिर तत्काल शिव के हाथ में चिपक गया और अनेक प्रयास करने पर भी हाथ से नहीं छूटा। अनन्तर शिव ने नारायण विष्णु के द्वार पर जाकर भिक्षा मांगी। इस पर विष्णु ने दाहिने हाथ को ही भिक्षा के रूप में आगे बढ़ा दिया तो शिव ने त्रिशूल से उस पर प्रहार किया। उस भुजा से तब रक्त की तीन धाराएं प्रवाहित हुईं जिनमें से पहली धारा शिव के कपाल में गिरी, दूसरी उनके मुख में और तीसरी धारा नदीरूप में प्रवाहित हुई। शिव वहां से कुरुक्षेत्र गए जहां जड़ के तुल्य वे ब्रह्महृद में गिर गए। वहां से क्षतगात्र उन्होंने बाहर निकलकर विष्णु की स्तुति की। तब विष्णु के अनेक तीर्थों की यात्रा करने के आदेश के अनुसार शिव काशी पहुंचे। अब तक शिव की अनुगामिनी बनी हुई ब्रह्महत्या ने काशी में आकर उनको मुक्त किया। शिव को आत्मबोध हुआ कि काशी ही पापनाशक वैष्णव क्षेत्र है और तभी शिव ने विष्णु का स्तवन किया। तदुपरान्त विष्णु की आज्ञा से शिव ने काशी में वास करना प्रारम्भ किया। वहां बिन्दुसर में स्नान करते ही शिव के हाथ से कपाल छूट गया। तभी से वह स्थान कपालमोचन कहलाने लगा। (नारद, उत्तर, 29/29-38, 54-60)

इस कथानक का एक परिवर्तित रूप यह भी है - एक बार शिव ब्रह्मकपाल लेकर भिक्षा के लिए सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में विचरण करते रहे किन्तु कहीं भी उन्हें भिक्षा प्राप्त नहीं हुई। अन्ततोगत्वा वे वैकुण्ठ पहुंचे। कई दिनों से निराहार रहने के कारण उनकी खिन्नता स्वाभाविक थी और तभी वे विश्व की निन्दा भी कर रहे थे। इसी अवस्था में शिव ने विष्णु से भिक्षा की याचना की। विष्णु ने भिक्षा के रूप में अपनी तर्जनी शिव के कपाल में रख दी। शिव ने क्रुद्ध हो अपने त्रिशूल से विष्णु की वह अङ्गुलि काट ली। उससे रक्त प्रवाहित होने लगा और शिव का कपाल भर गया। उसी धारा से शिप्रा नदी

देवादिदेव महादेव शिव

बनी। (स्कन्द, आव, अव, 49/10-43)

अङ्गुलि के स्थान पर विष्णु के द्वारा हस्त दिये जाने का भी उल्लेख मिलता है। उससे प्रवाहित रक्तधारा से कपाल के भर जाने पर वह भूमि में प्रवाहित हुई जो पचास योजन लम्बी और दस योजन चौड़ी थी। एक सहस्र दिव्य वर्षों तक शिव उस धारा को ग्रहण करते रहे। (वही, आव, अव, 3/14-18)

अस्तु! शिव का ब्रह्मा के प्रति वैमनस्य अथवा विरोधिता कभी अकारण नहीं होती है। दृष्टान्तस्वरूप-शिव अनैतिकता को सहन नहीं कर सकते हैं। एक समय ब्रह्मा अपनी ही पुत्री वाक् (सरस्वती) के लिए कामातुर हो गए। शिव इससे अत्यधिक क्रुद्ध हुए और तभी ब्रह्मा को अपने बाण का लक्ष्य बनाया। इससे भयभीत ब्रह्मा मृगशीर्ष नक्षत्र बनकर आकाश में स्थित हो गए। तब शिव आर्द्रा नक्षत्र बन उन्हें पीड़ित करने लगे। शिव द्वारा ब्रह्मा का सिर काट दिये जाने पर ब्रह्मा की पत्नियाँ सावित्री और गायत्री ने शिव की स्तुति की, उनसे प्रार्थना करके अपने पति को प्राणदान दिलवाया। उस शिवस्तुति में प्रयुक्त शिवनाम हैं - दुर्वारसंसारध्वान्तध्वंसैकहेतुः, ज्वलज्वालावलीभीमकालकूटविषादी, जगन्मोहनः, पञ्चास्त्रदेहनाशैकहेतुः, जगदन्तकरक्रूरयमान्तकः, गङ्गातरङ्गसम्पृक्तजटागण्डधारी, बालशीतांशुधारी, पिनाकभीमटङ्कारत्रासितत्रिपुरौकसः, विविधाकारजगत्सष्टिशिरश्छिद्, शान्तामलकृपादृष्टिसंरक्षितमृकण्डजः। (वही, ब्राह्म, सेतु, 40/27-32)

यह विवरण भी उपलब्ध है कि शिवमाया से विमोहित होकर ब्रह्मा स्वयं को स्वयंभू, संसार का कर्ता, अनादि और परम ब्रह्म मानने लगे। उनके इस दम्भ से क्रुद्ध शिव ने ब्रह्मा को समझाया कि ब्रह्मा का समस्त सृष्टिकार्य शिव की आज्ञा से ही सम्पन्न हुआ है। चारों वेदों ने भी ब्रह्मा को समझाया और तभी ब्रह्मा ने आकाश में एक दिव्यज्योति भी देखी किन्तु ब्रह्मा का गर्व खण्डित नहीं हुआ अतः वे शिव को अपनी शरण में आने को कहते रहे। तब शिव के निर्देश पर कालभैरव ने ब्रह्मा के पांचवें सिर को काट दिया जिससे ब्रह्मा की मृत्यु हो गई। दयासिन्धु शिव ने योग द्वारा ब्रह्मा को पुनः जीवित किया। अपने समक्ष शिव को देखकर ब्रह्मा को शिव के परमेश्वर होने का बोध हुआ। उसी समय ब्रह्मा ने सोमाष्टक स्तोत्र के द्वारा शिव को प्रणाम किया और शतरुद्रीय का पाठ करते हुए दण्डवत् होकर उनकी स्तुति की। ब्रह्मा की भक्ति से प्रसन्न शिव की आज्ञा से काल भैरव ने उनका पांचवा सिर उन्हें लौटा दिया।

ब्रह्माकृत उस स्तुति में शिव-नाम हैं - महान्, ब्रह्मा, विद्या, मूलप्रकृतिः, विज्ञानदेहः, चिन्ता, सर्वकार्यनियन्ता, नारायणः, योगदः, योगिनां गुरुः, संसारवासः, संसारोत्पत्तिः,

देवादिदेव महादेव शिव

नित्यानन्दः, आनन्दमूर्तिः, कार्यविहीनः, विश्वप्रकृतिः, ओङ्कारमूर्तिः, अन्तःसंस्थितः, व्योमसंस्थः, व्योमशक्तिः। (कूर्म, उत्तर, 31/49-56)

ब्रह्मा के पञ्चम सिर के कर्तन से जब शिव ब्रह्महत्या से बाधित होकर ब्रह्मा की ही शरण में गए तो ब्रह्मा ने उन्हें विष्णु के समीप भेज दिया और यह निर्देश भी दिया कि शिव अपनी प्रिय काशीनगरी के कपालमोचन तीर्थ में जाएं। (पद्म, सृष्टि, 14/128-129, 183-184)

वस्तुतः ब्रह्मा के दर्प-दलन के अतिरिक्त ब्रह्मा के साथ शिव का कोई मौलिक विरोध नहीं है। इसी कारण राजा दिवोदास से अविमुक्तपुरी काशी को खाली करवाने के लिए शिव ने ब्रह्मा को काशी भेजा था। वहां काशी से प्रभावित ब्रह्मा ने काशी में दशाश्वमेधेश लिङ्ग को स्थापित किया और वहीं रहने लगे। (स्कन्द, काशी, उत्तर, 52/27-97)

यदि शिव के मन में ब्रह्माविषयक वैमनस्य नहीं है तो दूसरी ओर ब्रह्मा भी शिवभक्त ही हैं। यह तो उनके रजोगुण के प्राबल्य के कारण समय-समय पर वे गर्व से भर जाते हैं अन्यथा तो वे शिव को परम ब्रह्म रूप में भी स्वीकार करते हैं। उसी का परिणाम है कि उन्होंने शिव के प्रति भक्तिभाव से प्रेरित हो उनके दस सहस्रनामों को परिगणित किया था। उसी पितामह ब्रह्मा द्वारा बताये गए शिव के दससहस्र नामों में से मथकर साररूप से निकाले गये, स्तवराज के नाम से विख्यात, तण्डि द्वारा पहले कहे गए तथा अनन्तर उपमन्यु द्वारा वासुदेव कृष्ण को सुनाये गए शिव के अष्टोत्तर-सहस्रनाम हैं — स्थिरः, स्थाणुः, प्रभुः, भानुः, प्रवरः, वरदः, वरः, सर्वात्मा, सर्वविख्यातः, सर्वः, सर्वकरः, भवः, जटी, चर्मी, शिखण्डी, सर्वाङ्गः, सर्वभावनः, हरिः, हरिणाक्षः, सर्वभूतहरः, प्रभुः, प्रवृत्तिः, निवृत्तिः, नियतः, शाश्वतः, ध्रुवः, श्मशानचारी, भगवान्, खचरः, गोचरः, अर्दनः, अभिवाद्यः, महाकर्मा, तपस्वी, भूतभावनः, उन्नतवेषः, प्रच्छन्नः, सर्वलोकप्रजापतिः, महारूपः, महाकायः, सर्वरूपः, महायशाः, महात्मा, सर्वभूतः, विरूपः, वामनः, मनुः, लोकपालः, अन्तर्हितात्मा, प्रसादः, हयगर्दभिः, पवित्रः, महान्, नियमः, नियमाश्रयः, सर्वकर्मा, स्वयम्भूः, आदिः, आदिकरः, निधिः, सहस्राक्षः, विरूपाक्षः, सोमः, नक्षत्रसाधकः, चन्द्रसूर्यगतिः, केतुः, ग्रहः, ग्रहपतिः, वरः, अग्निः, अद्र्यालयः, कर्ता, मृगबाणार्पणः, अनघः, महातपाः, घोरतपाः, अदीनः, दीनसाधकः, संवत्सरकरः, मन्त्रः, प्रमाणम्, परमं तपः, योगी, योग्यः, महाबीजः, महेताः, महातपाः, सुवर्णरिताः, सर्वज्ञः, सुबीजः, वृषवाहनः, दशबाहुः, अनिमिषः, नीलकण्ठः, उमापतिः, विश्वरूपः, स्वयंश्रेष्ठः, बलवीरः, बलोगणः, गणकर्ता, गणपतिः, दिग्वासाः, काम्यः, पवित्रं परमम्, मन्त्रः, सर्वभावकरः, हरः, कमण्डलुधरः, धन्वी, बाणहस्तः, कपालवान्, अशनी, शतघ्नी, खड्गी, पट्टिशी, आयुधी,

देवादिदेव महादेव शिव

महान्, सुवहस्तः, सुरुपः, तेजः, तेजकरः, निधिः, उष्णीषी, सुवक्त्रः, उदग्रः, विनतः, दीर्घः, हरिकेशः, सुतीर्थः, कृष्णः, सृगालरूपः, सर्वार्थः, मुण्डः, कुण्डी, कमण्डलुः, अजः, मृगरूपः, गन्धधारी, कपर्दी, ऊर्ध्वरेताः, ऊर्ध्वलिङ्गः, ऊर्ध्वशायी, नभस्तलः, त्रिजटः, चीरवासाः, रुद्रः, सेनापतिः, विभुः, अहश्चरः, नक्तम्, तिग्ममन्युः, सुवर्चसः, गजहा, दैत्यहा, लोकः, लोकधाता, गुणाकरः, सिंहशार्दूलरूपः, आर्द्रचर्माम्बरावृतः, कालयोगी, महानादः, सर्ववासः, चतुष्पथः, निशाचरः, प्रेतचारी, भूतचारी, महेश्वरः, बहुभूतः, बहुधनः, सर्वाधारः, अमितः, गतिः, नृत्यप्रियः, नित्यनर्तः, नर्तकः, सर्वलासकः, घोरः, महातपाः, पाशः, नित्यः, गिरिचरः, नभः, सहस्रहस्तः, विजयः, व्यवसायः, अनिन्दितः, अमर्षणः, मर्षणात्मा, यज्ञहा, कामनाशनः, दक्षयज्ञापहारी, सुसहः, मध्यमः, तेजोपहारी, बलहा, मुदितः, अर्थः, जितः, वरः, गम्भीरघोषः, गम्भीरः, गम्भीरबलवाहनः, न्यग्रोधः, न्यग्रोधरूपः, वृक्षकर्णस्थितिः, विभुः, तीक्ष्णतापः, हर्यश्वः, सहायः, कर्मकालवित्, विष्णुप्रसादितः, यज्ञः, समुद्रः, वडवामुखः, हुताशनसहायः, प्रशान्तात्मा, हुताशनः, उग्रतेजाः, महातेजाः, जयः, विजयः, कालवित्, ज्योतिषामयनम्, सिद्धिः, सन्धिः, विग्रहः, शिखी, दण्डी, जटी, ज्वाली, मूर्तिजः, मूर्धगः, बली, वैणवी, पणवी, ताली, कालः, कालकटङ्कटः, नक्षत्रविग्रहविधिः, गुणवृद्धिः, लयः, अगमः, प्रजापतिः, दिशाबाहुः, विभागः, सर्वतोमुखः, विमोचनः, सुरगणः, हिरण्यकवचोद्भवः, मेद्रजः, बलचारी, महाचारी, स्तुतः, सर्वतूर्यनिनादी, सर्ववाद्यपरिग्रहः, व्यालरूपः, बिलावासी, हेममाली, तरङ्गवित्, त्रिदशः, त्रिकालधृक्, कर्म, सर्वबन्धविमोचनः, बन्धनस्त्वसुरेन्द्राणाम्, युधि शत्रुनाशनः, सांख्यप्रसादः, दुर्वासाः, सर्वसाधुनिषेवितः, प्रस्कन्दनः, विभागः, अतुल्यः, यज्ञभागवित्, सर्वावासः, सर्वचारी, दुर्वासा, वासवः, अमरः, हेमः, हेमकरः, यज्ञः, सर्वधारी, धरोत्तमः, लोहिताक्षः, महाक्षः, विजयाक्षः, विशारदः, सङ्ग्रहः, निग्रहः, कर्ता, सर्पचीरनिवासनः, मुख्यः, अमुख्यः, देहः, देहर्द्धिः, सर्वकामदः, सर्वकालप्रसादः, सुबलः, बालरूपधृक्, आकाशनिधिरूपः, निपाती, उरगः, खगः, रौद्ररूपः, अंशुः, आदित्यः, वरसुश्मिः, सुवर्चसी, वसुवेगः, महावेगः, मनोवेगः, निशाचरः, सर्वावासी, श्रियावासी, उपदेशकरः, हरः, मुनिः, आत्मपतिः, लोके सम्मोज्यः, सहस्रदः, पक्षी, पक्षिरूपी, अतिदीप्तः, विशांपतिः, उन्मादः, मदनकारः, अर्थार्थकरः, वामदेवः, वामः, प्राग्दक्षिण्यः, वामनः, सिद्धयोगापहारी, सिद्धः, सर्वार्थसाधकः, भिक्षुः, भिक्षुरूपः, विषाणी, मृदुः, अव्ययः, महासेनः, विशाखः, षष्टिभागः, गवां पतिः, वज्रहस्तः, विष्कम्भी, चमूस्तम्भनः, ऋतुः, ऋतुकरः, कालः, मधुः, मधुकरः, अचलः, वानस्पत्यः, वाजसेनः, नित्यमाश्रमपूजितः, ब्रह्मचारी, लोकचारी, सर्वचारी, सुचारवित्, ईशानः, ईश्वरः, कालः, निशाचारी, पिनाकधृक्, नन्दीश्वरः, नन्दी, नन्दनः, नन्दिवर्धनः, भगस्याक्षिनिहन्ता, कालः, ब्रह्मविदां वरः, चतुर्मुखः, महालिङ्गः, चारुलिङ्गः, लिङ्गाध्यक्षः, सुराध्यक्षः, लोकाध्यक्षः, युगावहः, बीजाध्यक्षः, बीजकर्ता, अध्यात्मानुगतः,

देवादिदेव महादेव शिव

बलः, इतिहासकरः, कल्पः, गौतमः, जलेश्वरः, दम्भः, अदम्भः, वैदम्भः, वश्यः, वश्यकरः, कविः, लोककर्ता, पशुपतिः, महाकर्ता, महौषधिः, अक्षरम्, परमं ब्रह्म, बलवान्, शक्रः, नीतिः, अनीतिः, शुद्धात्मा, शुद्धः, मान्यः, मनोगतिः, बहुप्रसादः, स्वपनः, दर्पणः, अमित्रजित्, वेदकारः, सूत्रकारः, विद्वान्, समरमर्दनः, महामेघनिवासी, महाघोरः, वशीकरः, अग्निज्वालः, महाज्वालः, अतिधूम्रः, हुतः, हविः, वृषणः, शङ्करः, नित्यः, वर्चस्वी, धूमकेतनः, नीलः, अङ्गलुब्धः, शोभनः, निरवग्रहः, स्वस्तितः, स्वस्तिभावः, भागी, भागकरः, लघुः, उत्सङ्गः, महाङ्गः, महागर्भः, परः, युवा, कृष्णवर्णः, सुवर्णः, इन्द्रियः सर्वदेहिनाम्, महापादः, महाहस्तः, महाकायः, महायशाः, महामूर्धा, महामात्रः, महानेत्रः, दिगालयः, महादन्तः, महाकर्णः, महामेढ्रः, महाहनुः, महानासः, महाकम्बुः, महाग्रीवः, श्मशानघृक्, महावक्षा, महोरस्कः, अन्तरात्मा, मृगालयः, लम्बनः, लम्बितोष्ठः, महामायः, पयोनिधिः, महादन्तः, महादंष्ट्रः, महाजिह्वः, महामुखः, महानखः, महारोमा, महाकेशः, महाजटः, असपत्नः, प्रसादः, प्रत्ययः, गिरिसाधनः, स्नेहः, अस्नेहः, अजितः, महामुनिः, वृक्षाकारः, वृक्षकेतुः, अनलः, वायुवाहनः, मण्डली, मेरुधामा, देवदानवदर्पहा, अथर्वशीर्षः, सामास्यः, ऋक्सहस्रामितेक्षणः, यजुःपादभुजः, गुह्यः, प्रसादः, जङ्गमः, अमोघार्थः, प्रकाशः, अभिगम्यः, सुदर्शनः, उपहारप्रियः, शर्वः, कनकः, काञ्चनः, स्थिरः, नाभिः, नन्दिकरः, भाव्यः, पुष्करस्थपतिः, स्थिरः, द्वादशः, त्रासनः, आद्यः, यज्ञः, यज्ञसमाहितः, नक्तम्, कलिः, कालः, मकरः, कालपूजितः, सगणः, गणकारः, भूतभावनसारथिः, भस्मशायी, भस्मगोप्ता, भस्मभूतः, तरुः, गणः, अगणः, लोपः, महात्मा, सर्वपूजितः, शङ्कुः, त्रिशङ्कुः, सम्पन्नः, शुचिः, भूतनिषेवितः, आश्रमस्थः, कपोतस्थः, विश्वकर्मा, पतिः, वरः, शाखः, विशाखः, ताम्रोष्ठः, अम्बुजालः, सुनिश्चयः, कपिलः, अकपिलः, शूरः, आयुः, परः, अपरः, गन्धर्वः, अदितिः, ताक्ष्यः, सुविज्ञेयः, सुसारथिः, परश्वायुधः, देवः, अर्थकारी, सुबान्धवः, तुम्बवीणी, महाकोपः, ऊर्ध्वरेताः, जलेशयः, उग्रः, वंशकरः, वंशः, वंशनादः, अनिन्दितः, सर्वाङ्गरूपः, मायावी, सुहृदः, अनिलः, अनलः, बन्धनः, बन्धकर्ता, सुबन्धनविमोचनः, यज्ञारिः, कामारिः, महादंष्ट्रः, महायुधः, बाहुः, अनिन्दितः, शर्वः, शङ्करः, शङ्करः, अधनः, अमरेशः, महादेवः, विश्वदेवः, सुरारिहा, अहिर्बुध्नः, निर्ऋतिः, चेकितानः, हरिः, अजैकपात्, कपाली, त्रिशङ्कु, अजितः, शिवः, धन्वन्तरिः, धूमकेतुः, स्कन्दः, वैश्रवणः, घाता, शक्रः, विष्णुः, मित्रः, त्वष्टा, ध्रुवः, धरः, प्रभावः, सर्वगः, वायुः, अर्यमा, सविता, रविः, उदग्रः, विधाता, मान्धाता, भूतभावनः, रतितीर्थः, वाग्मी, सर्वकामगुणावहः, पद्मगर्भः, महागर्भः, चन्द्रवक्त्रः, मनोरमः, बलवान्, श्रोपशान्तः, पुराणः, पुण्यचञ्चुरी, कुरुकर्ता, कालरूपी, कुरुभूतः, महेश्वरः, सर्वाशयः, दर्भशायी, सर्वेषां प्राणिनां पतिः, देवदेवमुखः, असक्तः, सदसत्सर्वरत्नवित्, कैलासशिखरावासी, हिमवद्गिरिसंश्रयः, कूलहारी, कूलकर्ता, बहुविद्यः, बहुप्रदः, वणिजः, वर्धनः, वृक्षः, नकुलः, चन्दनः, छदः, सारग्रीवः, महाजत्रुः, अलोलः,

देवादिदेव महादेव शिव

महौषधः, सिद्धार्थकारी, सिद्धार्थः, छन्दोव्याकरणोत्तरः, सिंहनाद, सिंहदंष्ट्रः, सिंहगः, सिंहवाहनः, प्रभावात्मा, जगत्कालः, तालः, लोकहितः, तरुः, सारङ्गः, नवचक्राङ्गः, केतुमाली, सभावनः, भूतालयः, भूतपतिः, अहोरात्रम्, अनिन्दितः, वाहिता, सर्वभूतानां निलयः, विभुः, भवः, अमोघः, संयत, अश्वः, भोजनः, प्राणधारणः, धृतिमान्, मतिमान्, दक्षः, सत्कृतः, युगाधिपः, गोपालिः, गोपतिः, ग्रामः, गोचर्मवसनः, हरः, हिरण्यबाहुः, गुहापालः प्रवेशिनाम्, प्रतिष्ठायी, महाहर्षः, जितकामः, जितेन्द्रियः, गन्धारः, सुरालयः, तपःकर्मरतिः, धनुः, महागीतः, महानृत्तः, अप्सरोगणसेवितः, महाकेतुः, धनुः, धातुः, नैकसानुचरः, चलः, आवेदनीयः, आवेशः, सर्वगन्धसुखावहः, तोरणः, तारणः, वायुः, परिधावति चैकतः, संयोगः, वर्धनः, वृद्धः, महावृद्धः, गणाधिपः, नित्यआत्मसहायः, देवासुरपतिः, पतिः, युक्तः, युक्तबाहुः, द्विविधः, सुपर्वणः, आषाढः, सुषाढः, ध्रुवः, हरिहणः, हरः, वपुरावर्तमानेभ्यः, वसुश्रेष्ठः, महापथः, शिरोहारी, विमर्षः, सर्वलक्षणभूषितः, अक्षः, रथयोगी, सर्वयोगी, महाबलः, सामान्नायः, असामान्नायः, तीर्थदेवः, महारथः, निर्जीवः, जीवनः, मन्त्रः, शुभाक्षः, बहुकर्मशः, रत्नप्रभूतः, रक्ताङ्गः, महार्णवनिपातवित्, मूलः, विशालः, अमृतः, व्यक्ताव्यक्तः, तपोनिधिः, आरोहणः, निरोहः, शैलहारी, महातपाः, सेनाकल्पः, महाकल्पः, युगायुगकरः, हरिः, युगरूपः, महारूपः, पवनः, गहनः, नगः, न्यायनिर्वाणः, पादः, पण्डितः, अचलोपमः, बहुमालः, महामालः, सुमालः, बहुलोचनः, विस्तारः, लवणः, कूपः, कुसुमः, सफलोदयः, वृषभः, वृषभाङ्गाङ्गः, मणिबिल्वः, जटाधरः, इन्दुः, विसर्गः, सुमुखः, सुरः, सर्वायुधः, सहः, निवेदनः, सुधाजातः, सुगन्धारः, महाधनुः, गन्धमाली, भगवान्, उत्थानः सर्वकर्मणाम्, मन्थानः बहुलः बाहुः, सकलः, सर्वलोचनः, तरस्तालीः, करस्तालीः, ऊर्ध्वसंहननः, वहः, छत्रम्, सुच्छत्रः, विख्यातः, सर्वलोकाश्रयः, महान्, मुण्डः, विरुपः, विकृतः, दण्डिमुण्डः, विकुर्वणः, हर्यक्षः, ककुभः, वज्री, दीप्तजिह्वः, सहस्रपात्, सहस्रमूर्धा, देवेन्द्रः, सर्वदेवमयः, गुरुः, सहस्रबाहुः, सर्वाङ्गः, शरण्यः, सर्वलोककृत्, पवित्रम्, त्रिमधुर्मन्त्रः, कनिष्ठः, कृष्णपिङ्गलः, ब्रह्मदण्डविनिर्माता, शतघ्नी, शतपाशधृक्, पद्मगर्भः, महागर्भः, ब्रह्मगर्भः, जलोद्भवः, गभस्तिः, ब्रह्मकृत्, ब्रह्मा, ब्रह्मवित्, ब्राह्मणः, गतिः, अनन्तरूपः, नैकात्मा, तिग्मतेजाः, स्वयंभुवः, ऊर्ध्वगात्मा, पशुपतिः, वातरंहा, मनोजवः, चन्दनी, पद्ममालाग्न्यः, सुरभ्युत्तरणः, नरः, कर्णिकारमहास्रग्वी, नीलमौलिः, पिनाकधृक्, उमापतिः, उमाकान्तः, जाह्नवीधृक्, उमाधवः, वरः, वराहः, वरदः, वरेशः, सुमहास्वनः, महाप्रसादः, दमनः, शत्रुहा, श्वेतपिङ्गलः, प्रीतात्मा, प्रयतात्मा, संयतात्मा, प्रधानधृक्, सर्वपार्श्वसुतः, तार्क्ष्यः, धर्मसाधारणः वरः, चराचरात्मा, सूक्ष्मात्मा, सुवृषः, गोवृषेश्वरः, साध्यर्षिः, वसुः, आदित्यः, विवस्वान्, सविता, मृडः, व्यासः, सर्वस्य संक्षेपः, विस्तारः, पर्याय, नयः, ऋतुः, संवत्सरः, मासः, पक्षः, संख्यासमापनः, कला, काष्ठा, लवः, मात्रा, मुहूर्तः, क्षपाः, क्षणाः, विश्वक्षेत्रम्, प्रजाबीजम्, लिङ्गम्, आद्यः,

देवादिदेव महादेव शिव

अनिन्दितः, सत्, असत्, व्यक्तम्, अव्यक्तम्, पिता, माता, पितामहः, स्वर्गद्वारम्, प्रजाद्वारम्, मोक्षद्वारम्, त्रिविष्टपम्, निर्वाणम्, ह्लादनम्, ब्रह्मलोकः, परागतिः, देवासुरविनिर्माता, देवासुरपरायणः, देवासुरगुरुः, देवः, देवासुरनमस्कृतः, देवासुरमहामात्रः, देवासुरगणाश्रयः, देवासुरगणाध्यक्षः, देवासुरगणाग्रणीः, देवातिदेवः, देवर्षिः, देवासुरवरप्रदः, देवासुरेश्वरः देवः, देवासुरमहेश्वरः, सर्वदेवमयः, अचिन्त्यः, देवतात्मा, आत्मसम्भवः, उद्भिदः, त्रिक्रमः, वैद्यः, विरजः, विरजोम्बरः, ईड्यः, हस्ती, सुरव्याघ्रः, देवसिंहः, नरर्षभः, विबुधाग्रवरः, श्रेष्ठः, सर्वदेवोत्तमः, उत्तमः, प्रयुक्तः, शोभनः, वज्रः, ईशानः, प्रभुः, अव्ययः, गुरुः, कान्तः, निजः सर्गः, पवित्रः, सर्ववाहनः, शृङ्गी, शृङ्गप्रियः, बभ्रूः, राजराजः, निरामयः, अभिरामः, सुरगणः, विरामः, सर्वसाधनः, ललाटाक्षः, विश्वदेहः, हरिणः, ब्रह्मवर्चसः, स्थावराणां पतिः, नियमेन्द्रियवर्धनः, सिद्धार्थः, सर्वभूतार्थः, अचिन्त्यः, सत्यव्रतः, सत्यव्रतः, शुचिः, व्रताधिपः, परं ब्रह्म, मुक्तानां परमागतिः, विमुक्तः, मुक्ततेजाः, श्रीमान्, श्रीवर्धनः, जगत्। (महा, अनु, 17/30-150)

पितामह ब्रह्मा द्वारा पठित सहस्रनाम का ही तण्डि ऋषि ने भी पाठ किया था और उसी के आधार पर उन्हें शिव का गाणपत्य प्राप्त हुआ था। तण्डि से उसे सुनकर राजा त्रिधन्वा को भी गाणपत्य मिला। पूर्वोक्त सहस्रनाम से तण्डि के सहस्रनाम में तीन सो पचपन शिवनाम नूतन हैं अतः पुनरावृत्ति न करके उन नूतन नामों को ही प्रस्तुत किया जा रहा है - दण्डी, सर्वगः, स्मृतः, शान्तात्मा, भूतधारणः, प्रचन्नः, नरः, अभयदः, विभुः, नियतः, नियताश्रयः, विशालाक्षः, चन्द्रः, सूर्यः, शनिः, मतः, राजा, राज्योदयः, धनः, दीर्घतपाः, अदृश्यः, धनसाधकः, संवत्सरः, कृतः, प्राणायामः, परन्तपः, योगः, महाबलः, बलाग्रणीः, मन्त्रवित्, परमः, शरी, अजः, मृगरूपः, विधिः, शृगालरूपः, सर्वशुभङ्करः, सिंहशार्दूलरूपः, गन्धकारी, ऊर्ध्वरेताः, ऊर्ध्वलिङ्गी, ऊर्ध्वशायी, नभस्तलः, त्रिजटी, अहोरात्रम्, निशाचरः, प्रेतचारी, सर्वदर्शी, महेश्वरः, बहुभूतः, सर्वसारः, अमृतेश्वरः, आर्द्रः, चर्मम्बरधरः, सर्वसारः, नर्तनः, सर्वसाधकः, महापाशः, परिचारी, सुचरः, दक्षहा, सकार्मुकः, प्रहसः, बलवान्, विदितः, गम्भीररोषः, न्यग्रोधः, विश्वमुक्, तीक्ष्णोपायः, सर्वव्याप्तपरिग्रहः, व्यालरूपी, गुहावासी, वृक्षः, शङ्खी, ज्वाली, वीणी, नाली, कटङ्कटः, कालकण्ठः, नक्षत्रविग्रहः, भावः, निभावः, शरणः, जलाचारः, मेखलाकृतिरूपः, कलिकटुः, प्रस्कन्दः, अविभावः, तुल्यः, प्रवासः, बन्धनस्तुसुरेन्द्राणाम्, सखा, दुर्वापः, आकाशः, निर्विरूपः, विवासाः, भिक्षुः, भिक्षुरूपी, सुरूपवान्, त्रयवासी, धरः, आत्मा, सभाग्यः, सहस्रभुक् पक्षिरूपः, निःशङ्कः, समीरः, दमनाकारः, अर्थः, वशः, वासुदेवः, वामनः, वृषणः, अक्षुण्णः, क्षुण्णः, चक्रहस्तः, विष्टम्भी, मूलस्तम्भनः, तालः, वरः, निमित्तस्थः, निमित्तः, नन्दिः, विषमर्दनः, अनेकदृक्, सुनन्दी, नन्दिकरः, भगहारी, नियन्ता,

देवादिदेव महादेव शिव

कालाध्यक्षः, इतिहासः, दमनः, जगदीश्वरः, दम्भकरः, दाता, वंशः, वंशकरः, कलिः, अधोक्षजः, शुक्रः, नित्यः, अत्रीशः, मानः, गतिः, हविः, प्रासादः, बलः, दर्पः, हव्यः, इन्द्रजित्, परमर्दनः, परिधूम्रावृतः, रविः, धिषणः, धूम्रलोचनः, अङ्गलुप्तः, नरविग्रहः, स्वस्तिः, भोगी, भोगकरः, प्रतापवान्, इन्द्रियः सर्ववर्णिकः, महामात्रः, महामित्रः, नगालयः, महास्कन्धः, महोष्ठः, महाकण्ठः, श्मशानवान्, निष्ठः, गीतसाधकः, प्रस्वेदनः, अस्वेहनः, आदिकः, वृषकः, वृषकेतुः, मेरुवासः, देववाहनः, ऋक्सहस्रोर्जितेक्षणः, ओजः, अन्तर्भाव्यः, सर्वः, काञ्चनस्थितः, हर्म्यः स्थितः, सर्वशास्त्रः, धनः, नगः, कविः, सर्वपूजितः, शुक्लः, स्त्रीरूपसम्पन्नः, विराट्, विशालः, सुनिश्चितः, कलशः, स्थूलः, आयुधः, रोमशः, अविज्ञेयः, सुशारदः, तुम्बवीणः, वंशवादी, बलः, राक्षसघ्नः, लम्बितः, लम्बितोष्ठः, लम्बहस्तः, वरप्रदः, बाहुः, अकोपनः, महाघोरः, हली, महागिरिः, सूर्यः, प्रभासः, धृतिः, नीरः, तीर्थः, भीमः, सर्वकर्मा, गुणोद्भवः, नमः, पुण्यकृत्तमः, क्रूरकर्ता, क्रूरवासी, तनुः, महौषधिः, प्राणिनां पतिः, देवदेवेशः, प्राणेशः, सुखोत्तिक्तः, कैलासस्थः, गुहावासी, बहुवित्तः, बहुप्रजः, बन्धकी, अद्रिकः, ह्रस्वग्रीवः, महाजानुः, सिद्धान्तकरी, व्याकरणोद्भवः, सिंहास्यः, कम्पी, भूतचक्राङ्कः, सुवेधकः, अमलः, वसुभूतः, सर्वभूतात्मा, निश्चलः, सुविदुः, बुधः, असुहृत्सर्वभूतानाम्, निश्चलः, चलविद्, अमोघः, संयमः, हृष्टः, भोजनः, प्राणधारणः, त्र्यक्षः, सुकृत्, युधाम्पतिः, गोपालः, प्रवेशनः, महामनाः, महाकामः, चित्तकामः, जितेन्द्रियः, सुरापः, तापकर्मरतः, हितः, महाभूतः, भूतवृत्तः, धराधाता, नैकतानरतः, स्वरः, अवेदनीयः, आवेद्यः, सुखावहः, चरणः, परिधा, परिपूजितः, संयोगी, गणिकः, सुदेवः, स्कन्दः, हरितः, वपुरावर्तमानः, वपुःश्रेष्ठः, महावपुः, शिरोविमर्दनः, सर्वलक्ष्यलक्षणभूषितः, अक्षयः, रथगीतः, सर्वभोगी, महामायः, महायशः, सुभगः, रत्नभूतः, अधिरोहः, शीलधारी, महायोगी, युगः, युगकरः, पवनः, अपादः, शिपिविष्टः, सुलोचनः, कुसुमाङ्गः, फलोदयः, ऋषभः, भङ्गः, शूरः, स्वर्गद्वारः, गिरिवासः, विसर्गः, सर्वलक्षणलक्षवित्, गन्धमाली, सर्वलक्षणः, बहुलः, सकलः, सर्वपावनः, भूषितः, करस्थाली, ऊर्ध्वसंहननः, युवा, यन्त्रतन्त्रसुविख्यातः, सर्वाश्रयः, मृदुः, विकुर्वणः, वार्यक्षः, दीप्ततेजाः, शतघ्नः, विश्वक्षेत्रप्रदः, हृदयः, स्वयंभवः, अवरजः, अम्बरः, बीजम्, इज्यः, व्याघ्रः, महर्षभः, स्वर्गदेवः, उत्तमः, संयुक्तः, वक्ता, आशानां प्रभवः, प्रभवः, सुशरणः, निरामः, नियतेन्द्रियवर्तनः, शुचिव्रतः, मुक्तकेशः। (लिङ्ग, पूर्व, 65/54-168)

ब्रह्मा की शिवभक्ति का एक आख्यान और उपलब्ध है— चिन्तन करते हुए होने पर सृष्टिकर्ता ब्रह्मा की एक मानसी कन्या प्रकट हुई जो मनोरमा और सुलोचना थी। उसे देखकर असंयत हो ब्रह्मा ने उसे रमण के लिए आमन्त्रित किया तो उसी पाप से ब्रह्मा का एक सिर गिर गया। उस सिर को लेकर ब्रह्मा चतुर्मुखी लिङ्ग स्थापु

देवादिदेव महादेव शिव

के समक्ष पहुंचे और उनकी पूजा-उपासना करने लगे। उनकी भक्ति से आकृष्ट शिव वहां प्रत्यक्ष हुए तो ब्रह्मा ने भक्तिविह्वल हो निम्न अभिधानों से शिव-स्तवन किया— भूतभव्यमवाश्रयः, स्तुतिनित्यः, त्रैलोक्यपाली, पवित्रदेहः, सर्वकल्मषनाशी, गुह्यागुह्यानां प्रकाशकृत्, सर्वरोगविनाशनः, रौरवाजिनसंवीतः, वीतशोकः, वारिकल्लोसंक्षुब्धमहाबुद्धिविघटी, नित्यानित्यः, त्रैलोक्यपालनः, अप्रमेयः, व्याधीनां शमनः, अपरिमेयः, सर्वभूतप्रियः, योगेश्वरः, सर्वपापक्षयः, सिद्धवन्दिस्तुतः, भूतसंसारदुर्गः, विश्वरूपः, फणीन्द्रोक्तमहिमा।

तब शिव ने ब्रह्मा को सन्निहति सरोवर में लिङ्ग स्थापित करके समस्त पापों से मुक्त होने का उपदेश दिया। (वामन, 49/4-21)

ब्रह्मा का पञ्चम सिर काटकर शिव ने ब्रह्मा के गर्व को तो खण्डित कर दिया किन्तु स्वयं ब्रह्महत्या से बाधित हो गए। वे कपाल हाथ में लेकर सम्पूर्ण पृथ्वी पर विचरण करते हुए कुशस्थली की श्रेष्ठ वनराजि में पहुंचे। उनके दर्शन कर वृक्षों ने पुष्पों का अर्घ्य समर्पित कर उनका स्वागत किया तथा शिव से उसी वन में अवस्थान करने की प्रार्थना की। शिव ने वहां अपने मानसिक अवस्थान और उन वृक्षों को प्राकृतिक विपदाओं से मुक्त रहने का वर दिया। तब शिव ने सौ वर्ष खड़े होकर वहां पर तप किया और तदुपरान्त ब्रह्महत्या से मुक्त होकर कपाल को वहीं फेंक दिया जिससे सागर ने अपनी मर्यादा भङ्ग कर दी और रसातल तक कम्पित हो उठा। इसी मध्य देवों ने भी शिव के समीप वास करने की इच्छा से उस वन में प्रवेश किया किन्तु उन्हें शिव के दर्शन नहीं हुए। तब शिवभक्त ब्रह्मा ने उन्हें समझाया कि अदीक्षित व्यक्ति को शिव-दर्शन नहीं होता है। शैवी दीक्षा ग्रहण करके कर्मणा, मनसा और वाचा शिव-आराधना करना अनिवार्य है। सहस्रवर्ष पर्यन्त देवों ने वैसी ही तपस्या की। तब शिव ने अनुकम्पा कर उन्हें दर्शन दिया और उन्हें भी उसी वन में रहने का वर प्रदान किया। (स्कन्द, आव. अव. 5/41-72, 6/2-59)

यह वर्णन भी मिलता है कि ब्रह्म-हत्यारूपी कपाल शिव की हथेली में चिपक गया। तब शिव वैकुण्ठ गए तथा विष्णु से इसका प्रतीकार पूछा। विष्णु के उपदेश के अनुसार शिव बदरी क्षेत्र की पवित्र भूमि में ज्यों ही पहुंचे तभी ब्रह्महत्या भय से कांपने लगी और कपाल स्वतः ही उनके हाथ से नीचे गिर गया। तदुपरान्त शिव उस स्थल के प्रति आदर भाव से पार्वती सहित वहीं रहने लगे। (वही, वैष्णव, बदरिका, 2/6-9)

यह भी माना जाता है कि कपाल से मुक्त न हो पाने से शिव अत्यधिक लज्जित हुए और तभी उन्होंने कापालिक व्रत करने का निश्चय किया। उसी व्रत को धारण कर

शिव पुष्कर क्षेत्र पहुंचे तथा ब्रह्मा के प्रसाद से पौष्कर ज्ञान प्राप्त करने का निश्चय किया और ध्यानस्थ हो गए। तब ब्रह्मा ने प्रकट होकर शिव को शिवप्रिय अविमुक्त क्षेत्र में जाकर उस कपाल से मुक्त होने का उपाय बताया तथा वहां कपालमोचन तीर्थ बनने एवम् स्वयं ब्रह्मा और विष्णु के वहां वास करने का भी आश्वासन दिया। (पद्म, सृष्टि, 14/166-185)

सुदर्शन चक्र

शिव के साथ विष्णु के सम्बन्ध को स्पष्ट करते हुए विष्णु के सुदर्शन चक्र का प्रसङ्ग उठना स्वाभाविक ही है। परवर्ती काल में विष्णु के अस्त्र के रूप में प्रसिद्ध होने पर भी उसके निर्माता शिव ही हैं। जलन्धर दैत्य को मारने के लिए शिव के साथ ब्रह्मा और विष्णु ने अपने-अपने तेज को मिश्रित किया तथा शिव ने उस तेज के ऊपर नृत्य किया। उस तेज से एक चक्र निकला तो शिव ने उसे पैरों से दबाया। उससे जो तेजकण निकले, विश्वकर्मा ने उन्हीं से सुदर्शन चक्र का निर्माण किया। (पद्म, उत्तर, 9/20-34) शिव के मुख से भी सुदर्शन चक्र के प्रकट होने की मान्यता है। (वही, उत्तर, 18/98-99)

अन्यत्र शिव के पैर के अंगूठे से उद्भूत तेज से भी उसको बना हुआ माना जाता है। जलन्धर-वध के उपरान्त विष्णु ने उस चक्र को प्राप्त करने के लिए शिव की आराधना की थी। उस समय उन्होंने शिव के सहस्रनाम का पाठ किया तथा सहस्र कमलों से उनकी पूजा की थी। उस सहस्रनाम में परिगणित शिवनाम हैं— हरः, रुद्रः, पुरुषः, पद्मलोचनः, अर्थितव्यः, सदाचारः, सर्वशम्भुः, महेश्वरः, ईश्वरः, स्थाणुः, ईशानः, सहस्राक्षः, सहस्रपात्, वरीयान्, वरदः, शङ्करः, परमेश्वरः, गङ्गाधरः, शूलधरः, परार्थेकप्रयोजनः, सर्वज्ञः, सर्वदेवादिगिरिधन्वा, जटाधरः, चन्द्रापीडः, चन्द्रमौलिः, विद्वान्, विश्वामरेश्वरः, वेदान्तसारसन्दोहः, कपालीनीललोहितः, ध्यानाधारः, अपरिच्छेद्यः, गौरीभर्ता, अष्टमूर्तिः, विश्वमूर्तिः, त्रिवर्गः, स्वर्गसाधनः, ज्ञानगम्यः, दृढव्रजः, देवदेवः, त्रिलोचनः, वामदेवः, महादेवः, पाण्डुः, परिदृढः, अदृढः, विश्वरूपः, विरूपाक्षः, वागीशः, शुचिः, अन्तरः, सर्वप्रणयसंवादी, वृषाङ्कः, वृषवाहनः, ईशः, पिनाकी, खट्वाङ्गी, चित्रवेषः, चिरन्तनः, तमोहरः, महायोगीगोप्ता, ब्रह्माङ्गहृज्जटी, कालकालः, कृतिवासाः, सुभगः, प्रणवात्मकः, उन्मत्तवेषः, चक्षुष्यः, दुर्वासाः, स्मरशासनः, दृढायुधः, स्कन्दगुरुः, परमेष्ठी, परायणः, अनादिमध्यनिधनः, गिरिशः, गिरिबान्धवः, कुबेरबन्धुः, श्रीकण्ठः, लोकवर्णोत्तमोत्तमः, सामान्यदेवः, कोदण्डी, नीलकण्ठः, परश्वधी, विशालाक्षः, मृगव्याधः, सुरेशः, सूर्यतापनः, धर्मकर्माक्षमः, क्षेत्रम्, भगवान्, भगनेत्रभिन्, उग्रः, पशुपतिः,

देवादिदेव महादेव शिव

ताक्षर्यप्रियभक्तः, प्रियंवदः, दान्तोदयाकरः, दक्षः, कपर्दी, कामशासनः, श्मशाननिलयः
सूक्ष्मः, श्मशानस्थः, महेश्वरः, लोककर्ता, भूतपतिः, महाकर्ता, महौषधी, उत्तरः, गोपतिः,
गोप्ता, ज्ञानगम्यः, पुरातनः, नीतिः, सुनीतिः, शुद्धात्मा, सोमसोमरतः, सुखी, सोमपः,
अमृतपः, अमृतपः, सोमः, महानीतिः, महामतिः, अजातशत्रुः, आलोकः, सम्भाव्यः,
हव्यवाहनः, लोककारः, वेदकारः, सूत्रकारः, सनातनः, महर्षिः कपिलाचार्यः, विश्वदीप्तिः,
त्रिलोचनः, पिनाकपाणिः भूदेवः, स्वस्तिदः, स्वस्तिकृत्, त्रिधामा, सौभगः, शर्वः सर्वज्ञः,
सर्वगोचरः, ब्रह्मधृक् विश्वसृक्, स्वर्गः, कर्णिकारः, प्रियः, कविः, शाखः, विशाखः,
गोशाखः, शिवः, नैकः, क्रतुः, समः, गङ्गाप्लवोदकः, भावः, सकलः, स्थपतिस्थिरः,
विजितात्मा, विधेयात्मा, भूतवाहनसारथिः, सगणः, गणकार्यः, सुकीर्तिः, छिन्नसंशयः,
कामदेवः, कामपालः, भस्मोद्धूलितविग्रहः, भस्मप्रियः, भस्मशायी, कामीकान्तः, कृतागमः,
समायुक्तः, निवृत्तात्मा, धर्मयुक्तः, सदाशिवः, चतुर्मुखः, चतुर्बाहुः, दुरावासः, दुरासदः,
दुर्गमः दुर्लभः, दुर्गः, सर्वायुधविशारदः, अध्यात्मयोगनिलयः, सुतन्तु, तन्तुवर्धनः,
शुभाङ्गः, लोकसारङ्गः, जगदीशः, अमृताशनः, भस्मशुद्धिकरः, मेरुः, ओजस्वीशुद्धविग्रहः,
हिरण्यरेताः, तरणिः, मरीचिः, महिमालयः, महाहृदः, महागुर्मः, सिद्धवृन्दारवन्दितः,
व्याघ्रचर्मधरः, व्याली, महाभूतः, महानिधिः, अमृताङ्गः, अमृतवपुः, पञ्चयज्ञः, प्रभञ्जनः,
पञ्चविंशतितत्त्वज्ञ, पारिजातः, परावरः, सुलभः, सुव्रतः, शूरः, वाङ्मयैकनिधिः, निधिः,
वर्णाश्रमगुरुः, वर्णी, शत्रुजित्, शत्रुतापनः, आश्रमः, क्षपणः, क्षामः, ज्ञानवान्, अचलाचलः,
प्रमाणभूतः, दुर्ज्ञेयः, सुपर्णः, वायुवाहनः, धनुर्धरः, धनुर्वेदः, गुणराशिः, गुणाकरः,
अनन्तदृष्टिः, आनन्दः, दण्डः, दमयिता, दमः, अभिवाद्यः, महाचार्यः, विश्वकर्मा,
विशारदः, वीतरागः, विनीतात्मा, तपस्वी, भूतभावनः, उन्मत्तवेषः, प्रच्छन्नः, जितकामः,
अजितप्रियः, कल्याणप्रकृतिः, कल्पः, सर्वलोक प्रजापतिः, तपस्वी, तारकः, धीमान्,
प्रधानप्रभुः, अव्ययः, लोकपालः, अन्तर्हितात्मा, कल्पादिः, कमलेक्षणः, वेदशास्त्रार्थतत्त्वज्ञः,
नियमः, नियमाश्रयः, चन्द्रः, सूर्यः, शनिः, केतुः, विरामः, विदुमच्छविः, भक्तिगम्यः, परं
ब्रह्ममृगबाणार्पणः, अनघः, अद्रिराजालयः, कान्तः, परमात्मा, जगद्गुरुः, सर्वकर्माचलः,
त्वष्टा, मङ्गल्यः मङ्गलावृतः, महातपाः, दीर्घतपाः, स्थविष्ठः, स्थविरः, ध्रुवः, अहः,
संवत्सरः, व्याप्तिः, प्रमाणम्, परमं तपः, संवत्सरकरः, मन्त्रः प्रत्ययः, सर्वदर्शनः,
अजः, सर्वेश्वरः, स्निग्धः, महारेता महाबलः, योगी, योग्यः, महारेताः, सिद्धः, सर्वादिः,
अग्निदः, वसुः, वसुमनाः, सत्यः सर्वपापहरः, हरः, अमृतः, शाश्वतः, शान्तः, बाणहस्तः
प्रतापवान्, कमण्डलुधरः, धन्वी, वेदाङ्गः, वेदवित्, मुनिः, प्राजिष्णुः, भोजनम्, भोक्ता,
लोकेनेता, दुराधरः, अतीन्द्रियः, महामायः, सर्वावासः, चतुष्पथः, कालयोगी, महानादः,
महोत्साहः, महाबलः, महाबुद्धिः, महावीर्यः, भूतचारी, पुरन्दरः, निशाचरः,
प्रेतचारिमहाशक्तिः, महाद्युतिः, अनिर्देश्यवपुः, श्रीमान्, सर्वहार्यमितः, गतिः, बहुश्रुतः,

देवादिदेव महादेव शिव

बहुमयः, नियातात्मा, भवोद्भवः, ओजः, तेजः, द्युतिकरः, नर्तकः, सर्वकागकः, नृत्यप्रियः, नृत्यनृत्यः, प्रकाशात्मा प्रतापनः, बुद्धस्पष्टाक्षरः, मन्त्रः, सन्मानः, सारसंप्लवः, युगादिकृद्युगावर्तः, गम्भीरः, वृषवाहनः, इष्टः, विशिष्टः, शिष्टेष्टः, शरभः, शरभधनुः, अपानिधिः, अधिष्ठानविजयः, जयकालवित्, प्रतिष्ठितः, प्रमाणज्ञः, हिरण्यकवचः, हरिः, विरोचनः, सुरगणः, विद्येशः विबुधाश्रयः, बालरूपः, बलोन्माथी, विवर्तः, गहनः, गुरुः, करणम्, कारणम्, कर्ता, सर्वबन्धविमोचनः, विद्वत्तमः वीतभयः, विश्वभर्ता, निशाकरः, व्यवसायः, व्यवस्थानः, स्थानदः, जगदादिजः, दुन्दुभः, ललितः, विश्वः, भवात्मात्मनि संस्थितः, वीरेश्वरः, वीरभद्रः, वीरहा, वीरभृत्, विराट्, वीरचूडामणिः, वेत्ता, तीव्रनादः, नदीधरः, आज्ञाधारः, त्रिशूली, शिपिविष्टः, शिवालयाः, बालखिल्यः, महाचापः, तिग्मांशुः, निधिः, अव्ययः, अभिरामः, सुशरणः, सुब्रह्मण्यः, सुधापतिः, मघवान्, कौशिकः, गोमान्, विश्रामः, सर्वशासनः, ललाटाक्षः, विश्वदेहः, सारः, संसारचक्रभृत्, अमोघदण्डी, मध्यस्थः, हिरण्यः, ब्रह्मवर्चसी, परमार्थः, परमः, शम्बरः, व्याघ्रकः, अनल, रुचिः, वररुचिः, वन्द्यः, वाचस्पतिः, अहर्षतिः, रविः विरोचनः, स्कन्धः, शास्ता, वैवस्वतः, जनः, युक्तिः, उन्नतकीर्तिः, शान्तरागः, पराजयः, कैलासपतिः कामारिः, सविता, रविलोचनः, विद्वत्तमः, वीतभयः, विश्वहर्तानिवारितः, नित्यः, नियतकल्याणः, पुण्यश्रवणकीर्तनः, दूरश्रवाः, विश्वसहः, ध्येयः, दुःस्वप्ननाशनः, उत्तारकः, दुष्कृतिहा, दुर्धर्षः, दुःसहः, अभयः, अनादिः, भूः, भुवः, लक्ष्मी, किरीटिन्निद्रशाधिपः, विश्वगोप्ता, विश्वभर्ता, सुधीरः, रुचिराङ्गदः, जननः, जनजन्मादिः, प्रीतिमान्, नीतिमान्, नयः, विशिष्टः, काश्यपः, भानुः, भीमः, भीमपराक्रमः, प्रणवः, सप्तधाचारः, महाकायः महाधनुः, जन्माधिपः, महादेवः, सकलागमपारगः, तत्त्वातत्त्वविवेकात्मा, विभूष्णुः, भूतिभूषणः, ऋषिः, ब्राह्मणवित्, जिष्णुः, जन्ममृत्युजरातिगः, यज्ञः, यज्ञपतिः, यज्वा, यज्ञान्तः, अमोघविक्रमः, महेन्द्रः, दुर्भरः, सेनी, यज्ञाङ्गः, यज्ञवाहनः, पञ्चब्रह्मसमुत्पत्तिः, विश्वेशः, विमलोदयः, आत्मयोगिन्, अनाद्यन्तः, षड्विंशत्सप्तलोकधृक्, गायत्रीवल्लभः, प्रांशुः, विश्वावासः, प्रभाकरः, शिशुः, गिरिरतः, सम्राट् सुषेणः, सुरशत्रुहा, अमोघः, अरिष्टमथनः, मुकुन्दः, विगतज्वरः, स्वयंज्योतिः, अनुज्योतिः, आत्मज्योतिः, अचञ्चलः, पिङ्गलः, कपिलश्मश्रुः, शास्त्रनेत्रः, त्रयीतनुः, ज्ञानस्कन्धः, महाज्ञानी, निरुत्पत्तिः, उपप्लवः, भगः, विवस्वान्, आदित्यः, योगाचार्यः, बृहस्पतिः, उदारकीर्तिः, उद्योगी, सद्योगी, सदसन्मयः, नक्षत्रमाली राकेशः, साधिष्ठानः, षडश्रयः, पवित्रपाणिः, पापारिः, मणिपूरः, मनोगतिः, हस्तपुण्डरीकमासीनः, शुक्लः, शान्तः, वृषाकपिः, विष्णुः, ग्रहपतिः, कृष्णः, समर्थः, अनर्थनाशनः, अधर्मशत्रुः, अक्षय्यः, पुरुहूतः, पुरुषुतः, ब्रह्मगर्भः, बृहद्गर्भः, धर्मधेनुः, धनागमः, जगद्धितैषिसुगतः, कुमारः, कुशलागमः, हिरण्यवर्णः, ज्योतिष्मान्, नानाभूतधरः, ध्वनिः, अरोगः, नियमाध्यक्षः, विश्वामित्रः द्विजोत्तमः, बृहज्ज्योतिः, सुधामा, महाज्योतिः, अनुत्तमः, मातामहः, मातरिश्वा,

देवादिदेव महादेव शिव

नभस्वान्, नागहारधृक्, पुलहः, पुलस्त्यः, अगस्त्यः, जातूकर्ण्यः, पराशरः, निरावरण
धर्मज्ञः, विरिञ्चः, विष्टरश्रवाः, आत्मभूः, अनिरुद्धः, अत्रिज्ञानमूर्तिः, महायशाः,
लोकचूडामणिः, वीरः, चण्डसत्यपराक्रमः, व्यालकल्पः, महाकल्पः, महावृक्षः, कलाधरः,
अलङ्कारिष्णुः, अचलः, रोचिष्णुः, विक्रमोत्तमः, आशुशब्दपतिः, वेगी, प्लवनः, शिखिसारथिः,
असंसृष्टः, अतिथिः, शक्रः प्रमाथी, पापनाशनः, वसुश्रवाः, कव्यवाहः, प्रतप्तः, विश्वभोजनः,
जयः, जराधिशमनः, लोहितः, तनूनपात्, पृषदश्वः, नभोयोनिः, सुप्रतीकः, तमिस्रहा,
निदाघः तपनः, मेघः पक्षः, परपुरञ्जयः, मुखानिलः, सुनिष्पन्नः, सुरभिः, शिशिरात्मकः,
वसन्तः, माधवः, ग्रीष्मः, नभस्यः, बीजवाहनः, अङ्गिराः, मुनिः आत्रेयः, विमलः, विश्ववाहनः,
पावनः, पुरुजित्, शक्रः, त्रिविद्यः, नरवाहनः, मनः, बुद्धिः, अहङ्कारः, क्षेत्रज्ञः, क्षेत्रपालकः,
तेजोनिधिः, ज्ञाननिधिः, विपाकः, विघ्नकारकः, अधरः, अनुत्तरः, ज्ञेयः, ज्येष्ठः,
निःश्रेयसालयः, शैलः, नगः, तनुः, दोहः, दानवारिः, अरिन्दमः, चारुधीजनकः,
चारुविशाल्यः, लोकशाल्यकृत्, चतुर्वेदः, चतुर्मावः, चतुरः, चतुरप्रियः, आम्नायः,
सामान्यायः, तीर्थदेवशिवालयः, बहुरूपः, महारूपः, सर्वरूपः, चराचरः, न्यायनिर्वाहकः,
न्यायः, न्यायगम्यः, निरञ्जनः, सहस्रमूर्धा, देवेन्द्रः, सर्वशस्त्रप्रभञ्जनः, मुण्डः, विरूपः,
विकृतः, दण्डी, दान्तः, गुणोत्तमः, पिङ्गलाक्षः, हर्यक्षः, नीलग्रीवः, निरामयः, सहस्रबाहुः
सर्वेशः, शरण्यः, सर्वलोकभृत्, पद्मासनः, परञ्ज्योतिः, परावरपरंफलः, पद्मगर्भः, महागर्भः,
विश्वगर्भः, विचक्षणः, परावरज्ञः, बीजेशः, सुमुखः, सुमहास्वनः, देवासुरगुरुदेवः,
देवासुरनमस्कृतः, देवासुरमहामात्रः, देवासुरमहाश्रयः, देवादिदेवः, देवर्षिदेवासुरवरप्रदः,
देवासुरेश्वरः, दिव्यः, देवासुरमहेश्वरः, सर्वदेवमयः, अचिन्त्यः, देवात्मसम्भवः, ईड्यः,
अनीशः, सुरव्याघ्रः, देवसिंहः, दिवाकरः, विबुधाग्रवरश्रेष्ठः, सर्वदेवोत्तमोत्तमः, शिवज्ञानरतः,
श्रीमान्, शिखिश्रीपर्वतप्रियः, जयस्तम्भः, विशिष्टम्भः, नरसिंहनिपातनः, ब्रह्मचारी,
लोकचारी, धर्मचारी, धनाधिपः, नन्दी, नन्दीश्वरः, नग्नः, नग्नव्रतधरः, शुचिः, लिङ्गाध्यक्षः,
सुराध्यक्षः, युगाध्यक्षः, युगावहः, स्ववशः, सवशः, स्वर्गः, स्वरः, स्वरमयस्वनः, बीजाध्यक्षः,
बीजकर्ता, धनकृत्, धर्मवर्द्धनः, दम्भः, अदम्भः, महादम्भः, सर्वभूतमहेश्वरः,
श्मशाननिलयः, तिष्ठः, सेतुः, अप्रतिमाकृतिः, लोकोत्तरस्फुटालोकः, त्र्यम्बकः, नागभूषणः,
अन्धकारिः, मखद्वेषी, विष्णुकन्धरपातनः, वीतदोषः, अक्षयगुणः, दक्षारिः, पूषदन्तहृत्,
धूर्जटिः, खण्डपरशुः, सकलः, निष्कलः, अनघः, आघारः, सकलाधारः, पाण्डुरामः,
मृडः, नटः, पूर्णः, पूरयिता, पुण्यः, सुकुमारः, सुलोचनः, सामगेयः, प्रियकरः, पुण्यकीर्तिः,
अनामयः, मनोजवः, तीर्थकरः, जटिलः, जीवितेश्वरः, जीवितान्तकरः, नित्यः, वसुरेताः,
वसुप्रियः, सद्गतिः, सत्कृतिः, सक्तः, कालकण्ठः, कलाधरः, मानी, मान्यः, महाकालः,
सद्भूतिः, सत्परायणः, चन्द्रसञ्जीवनः, शास्ता, लोकगूढः, अमराधिपः, लोकबन्धुः,
लोकनाथः, कृतज्ञः, कृतिभूषणः, अनपाय्यक्षरः, कान्तः, सर्वशास्त्रभृतां वरः, तेजोमयः

देवादिदेव महादेव शिव

द्युतिधरः, लोकमायः, अग्रणीः, अणुः, शुचिस्मितः, प्रसन्नात्माः, इर्जयः, दुरतिक्रमः, ज्योतिर्मयः, निराकारः, जगन्नाथः, जलेश्वरः, तुम्बवीणी, महाकायः, विशोकः, शोकनाशनः, त्रिलोकात्मा, त्रिलोकेशः, शुद्धः, शुद्धी, रथाक्षजः, अव्यक्तलक्षणः, व्यक्तः, व्यक्ताव्यक्तः, विशाम्पतिः, वरशीलः, वरतुलः, मानः, मानधनमयः, ब्रह्मा, विष्णुः प्रजापालः, हंसः, हंसगतिः, यमः, वेधा, धाता, विधाता, अत्ता, हर्ता, चतुर्मुखः, कैलासशिखर वासी, सर्वावासी, सतांगतिः, हिरण्यगर्भः, हरिणः, पुरुषः, पूर्वजः पिता, भूतालयाः, भूतपतिः, भूतिदः, भुवनेश्वरः, संयोगी, योगविद्ब्रह्मा, ब्रह्मण्यः, ब्राह्मणप्रियः, देवप्रियः, देवनाथः, देवज्ञः, देवचिन्तकः, विषमाक्षः, कलाध्यक्षः, वृषाङ्कः, वृषवर्धनः, निर्मदः निरहङ्कारः, निर्मोहः, निरुपद्रवः, दर्पहा, दर्पितः, दृप्तः, सर्वतुपरिवर्तकः, सप्तजिह्वः, सहस्रार्विः, स्निग्धः, प्रकृतिदक्षिणः, भूतभव्यभवन्नाथः, प्रभवः, भ्रान्तिनाशनः, अर्थः, अनर्थः, महाकोशः, परकार्यैकपण्डितः, निष्कण्टकः, कृतानन्दः, निर्व्याजः, व्याजमर्दनः, सत्त्ववान्, सात्त्विकः, सत्यकीर्तिस्तम्भकृतागमः, अकम्पितः, गुणग्राही, नैकात्मा, नैककर्मकृत्, सुप्रीतः, सुमुखः, सूक्ष्मः, सुकरः, दक्षिणः, अनलः, स्कन्धः, स्कन्धधरः, धुर्यः, प्रकटः, प्रीतिवर्धनः, अपराजितः, सर्वसहः, विदग्धः, सर्ववाहनः, अधृतः, स्वधृतः, साध्यः, पूर्वमूर्तिः, यशोधरः, वराहशृङ्गधृक्, वायुः, बलवान्, एकनायकः, श्रुतिप्रकाशः, श्रुतिमान्, एकबन्धुः, अनेकधृक्, श्रीवल्लभशिवारम्भः, शान्तभद्रः, समअसः, भूशयः, भूतिकृद्भूतिः, भूषणः, भूतवाहनः, अकायः, भक्तकायस्थः, कालज्ञानी, कलावपुः, सत्यव्रतमहात्यागी, निष्ठाशान्तिपरायणः, परार्थवृत्तिः, वरदः, विविक्तः, श्रुतिसागरः, अनिर्विष्णुः, गुणग्राही, कलङ्काङ्कः, कलङ्कहा, स्वभावरुद्रः, मध्यस्थः, शत्रुघ्नः, मध्यनाशकः, शिखण्डी, कवची, शूली, चण्डी, मुण्डी, कुण्डली, मेखली, कवची, खड्गी, मायी, संसारसारथिः, अमृत्युः, सर्वदृक्, सिंहः, तेजोराशिः, महामणिः, असङ्ख्येयः, अप्रमेयात्मा, वीर्यवान्, कार्यकोविदः, वेद्यः, वेदार्थविद्, वेत्ता, सर्वाचारः, मुनीश्वरः, अनुत्तमः, दुराधर्षः, मधुरः, प्रियदर्शनः, सुरेशः, शरणः, सर्वः, शब्दब्रह्मसतांगतिः, कालभक्षः, कलङ्कारिः, कङ्कणीकृतवासुकिः, महेष्वसुः, महीभर्ता, निष्कलङ्कः, विशृङ्खलः, द्युमणिः, तरणिः, धन्यः, सिद्धिदः, सिद्धिसाधनः, निवृत्तः, संवृत्तः, शिल्पः, व्यूढोरस्कः, महाभुजः, एकज्योतिः, निरातङ्कः, नरः, नारायणप्रियः, निर्लेपः, निष्प्रपञ्चात्मा, निर्व्यग्रः, व्यग्रनाशनः, स्तव्यः, स्तवप्रियः, स्तोता व्यासमूर्तिः, अनाकुलः, निरवद्यपदोपायः, विद्याराशिः, अविक्रमः, प्रशान्तबुद्धिः अक्षुद्रः, क्षुद्रहा, मित्यसुन्दरः, धैर्याग्रधुर्यः, धात्रीशः, शाकल्यः, शर्वरीपतिः, परमार्थगुरुः, दृष्टिः, गुरुः, आश्रितवत्सलः, रसः, रसज्ञः, सर्वज्ञः, सर्वसत्त्वावलम्बनः। (लिङ्ग, पूर्व, 98/27-159)

यह भी माना जाता है कि विष्णु ने शिव के सहस्रनाम का उच्चारण करते हुए प्रत्येक नाम के साथ एक कमल प्रदान किया किन्तु उनकी परीक्षा लेने के लिए शिव

देवादिदेव महादेव शिव

ने एक कमल छुपा दिया तो विष्णु ने एक नेत्र ही उन्हें समर्पित कर दिया क्योंकि उन्होंने सोचा कि विद्वान् जन उन्हें पुण्डरीकाक्ष कहते हैं अतः कमल का स्थानापन्न उनका नयन कर देगा। उसी समय शिव ने प्रकट होकर विष्णु के नयन की रक्षा की तथा चक्र उन्हें दे दिया। वे सहस्रनाम हैं - शिवः, हरः, मृडः, रुद्रः, पुष्करः, पुष्पलोचनः, अर्थिगम्यः, सदाचारः, शर्वः, शम्भुः, महेश्वरः, चन्द्रापीडः, चन्द्रमौलिः, विश्वम्, विश्वम्भरेश्वरः, वेदान्तसारसन्दोहः, कपाली, नीललोहितः, ध्यानाधारः, अपरिच्छेद्यः, गौरीभर्ता, गणेश्वरः, अष्टमूर्तिः, विश्वमूर्तिः, त्रिवर्गसाधनः, स्वर्गसाधनः, ज्ञानगम्यः, दृढव्रजः, देवदेवः, त्रिलोचनः, वामदेवः, महादेवः, पटुः, परिवृढः, दृढः, विश्वरूपः, विरूपाक्षः, वागीशः, शुचिसत्तमः, सर्वप्रमाणसंवादी, वृषाङ्कः, वृषवाहनः, ईशः, पिनाकी, खट्वाङ्गी, चित्रः, वेषः, चिरन्तनः, तमोहरः, महायोगी, गोप्ता, ब्रह्मा, धूर्जटिः, कालकालः, कृतिवासाः, सुभगः, प्रणवात्मकः, उन्नधः, पुरुषः, जुष्यः, दुर्वासाः, पुरशासनः, दिव्यायुधः, स्कन्दगुरुः, परमेष्ठी, परात्परः, अनादिमध्यनिधनः, गिरीशः, गिरिजाध्वः, कुबेरबन्धुः, श्रीकण्ठः, लोकवर्णोत्तमः, मृदुः, समाधिदेवः, कोदण्डी, नीलकण्ठः, परस्वधीः, विशालाक्षः, मृगव्याधः, सुरेशः, सूर्यतापनः, धर्मधाम, क्षमाक्षेत्रम्, भगवान्, भगनेत्रभित्, उग्रः, पशुपतिः, तार्क्ष्यः, प्रियभक्तः, परन्तपः, दाता, दयाकरः, दक्षः, कर्मन्दीः, कामशासनः, श्मशाननिलयः, सूक्ष्मः, श्मशानस्थः, महेश्वरः, लोककर्ता, मृगपतिः, महाकर्ता, महौषधिः, उत्तरः, गोपतिः, गोप्ता, ज्ञानगम्यः, पुरातनः, नीतिः, सुनीतिः, शुद्धात्मा, सोमः, सोमरतः, सुखी, सोमपः, अमृतपः, सौम्यः, महातेजाः, महाद्युतिः, तेजोमयः, अमृतमयः, अन्नमयः, सुधापतिः, अजातशत्रुः, आलोकः, सम्भाव्यः, हव्यवाहनः, लोककरः, वेदकरः, सूत्रकारः, सनातनः, महर्षिकपिलाचार्यः, विश्वदीप्तिः, त्रिलोचनः, पिनाकपाणिः, भूदेवः, स्वस्तिकः, स्वस्तिकृत्, सुधीः, धातुधामा, धामकरः, सर्वगः, सर्वगोचरः, ब्रह्मसृक्, विश्वसृक् सर्गः, कर्णिकारः, प्रियः, कविः, शाखः, विशाखः, गोशाखः, शिवः, मिषगनुत्तमः, गङ्गाप्लवोदकः, मव्यः, पुष्कलः, स्थपतिः, स्थिरः, विजितात्मा, विधेयात्मा, भूतवाहनसारथिः, सगणः, गणकायः, सुकीर्तिः, छिन्नसंशयः, कामदेवः, कामपालः, भस्मोद्धूलितविग्रहः, भस्मप्रियः, भस्मशायी, कामी, कान्तः, कृतागमः, समावर्तः, अनिवृत्तात्मा, धर्मपुञ्जः, सदाशिवः, अकल्मषः, पुण्यात्मा, चतुर्बाहुः, दुरासदः, दुर्लभः, दुर्गमः, दुर्गः, सर्वायुधविशारदः, अध्यात्मयोगनिलयः, सुतन्तुः, तन्तुवर्धनः, शुभाङ्गः, लोकसारङ्गः, जगदीशः, जनार्दनः, भस्मशुद्धिकरः, मेरुः, ओजस्वी, शुद्धविग्रहः, असाध्यः, साधुसाध्यः, मृत्यमर्करूपधृक्, हिरण्यरेताः, पौराणः, रिपुजीवहरः, बलीः, महाहृदः, महागर्तः, सिद्धः, वृन्दारवन्दितः, व्याघ्रचर्माम्बरः, व्याली, महाभूतः, महानिधिः, अमृताशः, अमृतपः, पाञ्चजन्यः, प्रभञ्जनः, पञ्चविंशतितत्त्वस्थः, पारिजातः, परावरः, सुलभः, सुव्रतः, शूरः, ब्रह्मवेदनिधिः, निधिः, वर्णाश्रमगुरुः, वर्णी, शत्रुजित्, शत्रुतापनः, आश्रमः, क्षपणः, क्षामः, ज्ञानवान्, अचलेश्वरः, प्रमाणभूतः, दुर्ज्ञेयः

देवादिदेव महादेव शिव

सुपर्णः, वायुवाहनः, धुनर्धरः, धनुर्वेदः, गुणराशिः गुणाकारः, सत्यः, सत्यपरः, अदीनः, धर्माङ्गः, धर्मसाधनः, अनन्तदृष्टिः, आनन्दः, दण्डः, दमयिता, दमः, अभिचार्यः, महामायः, विश्वकर्मा, विशारदः, वीतरागः, विनीतात्मा, तपस्वी, भूतभावनः, उन्मत्तवेषः, प्रच्छन्नः, जितकामः, अजितप्रियः, कल्याणप्रकृतिः, कल्पः, सर्वलोकप्रजापतिः, तरस्वी, तारकः, धीमान्, प्रधानः, प्रभुः, अव्ययः, लोकपालः, अंतर्हितात्मा, कल्पादिः, कमलेक्षणः, वेदशास्त्रार्थतत्त्वज्ञः, अनियमः, नियताश्रयः, चन्द्रः, सूर्यः, शनिः, केतुः, वराङ्गः, विद्रुमच्छविः, भक्तिवश्यः, परम् ब्रह्म, मृगबाणार्पणः, अनघः, अदरिद्र्यालयः, कान्तः, परमात्मा, जगद्गुरुः, सर्वकर्मालयः, तुष्टः, मङ्गल्यः, मङ्गलावृतः, महातपाः, दीर्घतपाः, स्थविष्ठः, स्थविरः, ध्रुवः, अहः, संवत्सरः, व्याप्तिः, प्रमाणम्, परमं तपः, संवत्सरकरः, मन्त्रः, प्रत्ययः, सर्वतापनः, अजः, सर्वेश्वरः, सिद्धः, महातेजाः, महाबलः, योगी, योग्यः, महारेताः, सिद्धिः, सर्वादिः, अग्रहः, वसुः, वसुमनाः, सत्यः, सर्वपापहरः, हरः, सुकीर्तिः, शोभनः, श्रीमान्, अमृतः, शाश्वतः, शान्तः, बाणहस्तः, प्रतापवान्, कमण्डलुधरः, धन्वी, वेदाङ्गः, वेदवित्, मुनिः, भ्रजिष्णुः, भोजनम्, भोक्ता, लोकनाथः, दुराधारः, अवाङ्मनसोगोचरः, अतीन्द्रियः, महामायः, सर्वावासः, चतुष्पथः, कालयोगी, महानादः, महोत्साहः, महाबलः, महाबुद्धिः, महावीर्यः, भूतचारी, पुरन्दरः, निशाचरः, प्रेतचारी, महाशक्तिः, महाद्युतिः, अनिर्देश्यवपुः, श्रीमान्, सर्वाचार्यमनोगतिः, बहुश्रुतिः, महामायः, नियतात्मा, ध्रुवः, अध्रुवः, तेजस्तेजः, द्युतिधरः, जनकः, सर्वशासकः, नृत्यप्रियः, नृत्यनित्यः, प्रकाशत्मा, प्रकाशकः, स्पष्टाक्षरः, बुधः, मन्त्रः, समानः, सारसंप्लवः, युगादिकृत्, युगावर्तः, गम्भीरः, वृषवाहनः, इष्टः, विशिष्टः, शिष्टेष्टः, सुलभः, सारशोधनः, तीर्थरूपः, तीर्थनामा, तीर्थादृश्यः, तीर्थदः, अपांनिधिः, अपामधिष्ठानम्, विजयः, जयकालवित्, प्रतिष्ठितः, प्रमाणज्ञः, हिरण्यकवचः, हरिः, विमोचनः, सुरगणः, विद्येशः, बिन्दुसंश्रयः, वातरूपः, अमलः, उन्मायी, विकर्ता, गहनः, गुहः, करणम्, कारणम्, कर्ता, सर्वबन्धविमोचनः, व्यवसायः, व्यवस्थानः, स्थानदः, जगदादिजः गुरुदः, ललितः, अभेदः, भावात्मा, आत्मनिसंस्थितः, वीरेश्वरः, वीरभद्रः, वीरासनविधिः, गुरुः, वीरचूडामणिः, वेत्ता, चिदानन्दः, नदीधरः, आज्ञाधारः, त्रिशूली, शिपिविष्टः, शिवालयः, बालखिल्यः, महावीरः, तिग्मांशुः, बधिरः, खगः, अभिरामः, सुशरणः, सुब्रह्मण्यः, सुधापतिः, मधवान्, कौशिकः, गोमान्, विरामः, सर्वसाधनः, ललाटाक्षः, विश्वदेहः, सारः, संसारचक्रभृत्, अमोघदण्डः, मध्यस्थः, हिरण्यः, ब्रह्मवर्चसः, परमार्थः, परोमायी, शम्बरः, व्याघ्रलोचनः, रुचिः, बहुरुचिः, वैद्यः, वाचस्पतिः, अहस्पतिः, रविः, विरोचनः, स्कन्दः, शास्ता, वैवस्वतः, यमः, युक्तिः, उन्नतकीर्तिः, सानुरागः, पुरअयः, कैलासाधिपतिः, कान्तः, सविता, रविलोचनः, विश्वोत्तमः, वीतभयः, विश्वभर्ता, अनिवारितः, नित्यः, नियतकल्याणः, पुण्यश्रवणकीर्तनः, दूरश्रवः, विश्वसहः, ध्येयः, दुःस्वप्ननाशनः, उत्तारणः, दुष्कृतिहा, विज्ञेयः, दुःसहः, अभवः, अनादिः, भूः, भुवः, लक्ष्मीः, किरीटी,

त्रिदशाधिपः, विश्वगोप्ता, विश्वकर्ता, सुवीरः, रुचिराङ्गदः, जननः, जनजन्मादिः, प्रीतिमान्, नीतिमान्, ध्रुवः, वशिष्ठः, कश्यपः, भानुः, भीमः, भीमपराक्रमः, प्रणवः, सत्पथाचारः, महाकोशः, महाधनः, जन्माधिपः, महादेवः, सकलागमपारगः, तत्त्वम्, तत्त्ववित्, एकात्मा, विभुः, विष्णुः, विभूषणः, ऋषिः, ब्राह्मणः, ऐश्वर्यजन्ममृत्युजरातिगः, पञ्चयज्ञसमुत्पत्तिः, विश्वेशः, विमलोदयः, आत्मयोनिः, अनाद्यन्तः, वत्सलः, भक्तलोकधृक्, गायत्रीवल्लभः, प्रांशुः, विश्वावासः, प्रभाकरः, शिशुः, गिरिरतः, सम्राट्, सुषेणः, सुरशत्रुहा, अनेमिः, इष्टनेमिः, मुकुन्दः, विगतज्वरः, स्वयंज्योतिः, महाज्योतिः, तनुज्योतिः, अचञ्चलः, पिङ्गलः, कपिलश्मश्रुः, भालनेत्रः, त्रयीतनुः, ज्ञानस्कन्दः, महानीतिः, विश्वोत्पत्तिः, उपप्लवः, भगः, विवस्वान्, आदित्यः, योगपारः, बृहस्पतिः, कल्याणगुणनामा, पापहा, पुण्यदर्शनः, उदारकीर्तिः, उद्योगी, सद्योगी, सदसन्मयः, नक्षत्रमाली, नाकेशः, स्वाधिष्ठानपदाश्रयः, पवित्रः, पापहारी, मणिपूरः, नभोगतिः, हृत्पुण्डरीकमासीनः, शक्रः, शान्तः, वृषाकपिः, उष्णः, गृहपतिः, कृष्णः, समर्थः, अनर्थनाशनः, अधर्मशत्रुः, अज्ञेयः, पुरुहूतः, पुरुश्रुतः, ब्रह्मगर्भः, बृहद्गर्भः, धर्मधेनुः, धनागमः, जगद्धितैषी, सुगतः, कुमारः, कुशलागमः, हिरण्यवर्णः, ज्योतिष्मान्, नानभूतरतः, ध्वनिः, आरोग्यः, नमनाध्यक्षः, विश्वामित्रः, धनेश्वरः, ब्रह्मज्योतिः, वसुधामा, महाज्योतिः, अनुत्तमः, मातामहः, मातरिश्वा, नभस्वान्, नागहारधृक्, पुलस्त्यः, पुलहः, अगस्त्यः, जातूकर्ण्यः, पराशरः, निरावरणः, निर्वारः, वैरज्यः, विष्टरश्रवाः, आत्मभूः, अनिरुद्धः, अत्रिः, ज्ञानमूर्तिः, महायशः, लोकवीराग्रणीः, वीरः, चण्डः, सत्यपराक्रमः, व्यालकल्पः, महाकल्पः, कल्पवृक्षः, कलाधरः, अलङ्कारिष्णुः, अचलः, रोचिष्णुः, विक्रमोन्नतः, आयुः, शब्दपतिः, वेगी, प्लवनः, शिखिसारथिः, असंसृष्टः, अतिथिः, शत्रुः, प्रमाथी, पादपासनः, वसुश्रवाः, कव्यवाहः, प्रतप्तः, विश्वभोजनः, जयः, जरादिशमनः, लोहितात्मा, तनूनपात्, बृहदश्वः, नभोयोनिः, सुप्रतीकः, तमिस्रहा, निदाघः, तपनः, मेघः, स्वक्षः, परपुरञ्जयः, सुखानिलः, सुनिष्पन्नः, सुरभिः, शिशिरात्मकः, वसन्तः, माधवः, ग्रीष्मः, नभस्यः, बीजवाहनः, अङ्गिरा, गुरुः, आत्रेयः, विमलः, विश्वपावनः, पावनः, सुमतिः, विद्वान्, त्रैविद्यः, वरवाहनः, मनोबुद्धिरहङ्कारः, क्षेत्रज्ञः, क्षेत्रपालकः, जमदग्निः, बलनिधिः, विगालः, विश्वगालवः, अघोरः, अनुत्तरः, यज्ञः, श्रेयः, निःश्रेयसापथः, शैलः, गगनकुन्दाभः, दानवारिः, अरिन्दमः, चामुण्डः, जनकः, चारुविशाल्यः, लोकशाल्यधृक्, चतुर्वेदः, चतुर्भावः, चतुरः, चतुरप्रियः, आम्नायः, सामान्नायः, तीर्थदेवशिवालयः, बहुरूपः, महारूपः, सर्वरूपः, चराचरः, न्यायनिर्मायकः, न्यायी, न्यायगम्यः, निरन्तरः, सहस्रमूर्द्धा, देवेन्द्रः, सर्वशस्त्रप्रभञ्जनः, मुण्डः, विरूपः, विकृतः, दण्डी, दान्तः, गुणोत्तमः, पिङ्गलाक्षः, जनाध्यक्षः, नीलग्रीवः, निरामयः, सहस्रबाहुः, सर्वेशः, शरण्यः, सर्वलोकधृक्, पद्मासनः, परं ज्योतिः, परंपारः, परं फलम्, पद्मगर्भः, महागर्भः, विश्वगर्भः, विचक्षणः, चराचरज्ञः, वरदः, वरेशः, महाबलः, देवासुरगुरुः, देवः,

देवादिदेव महादेव शिव

देवासुरमहाश्रयः, देवादिदेवः, देवाग्निः, देवाग्निसुखदः, प्रभुः, देवासुरेश्वरः, दिव्यः, देवासुरमहेश्वरः, देवदेवमयः, अचिन्त्यः, देवदेवात्मसम्भवः, सद्यः, महासुरव्याधः, देवसिंहः, दिवाकरः, विबुधाग्रचरः, श्रेष्ठः, सर्वदेवोत्तमोत्तमः, शिवज्ञानरतः, श्रीमाञ्जिखी, श्रीपर्वतप्रियः, वज्रहस्तः, सिद्धखड्गी, नरसिंहनिपातनः, ब्रह्मचारी, लोकचारी, धर्मचारी, धनाधिपः, नन्दी, नन्दीश्वरः, अनन्तः, नग्नव्रतधरः, शुचिः, लिङ्गाध्यक्षः, सुराध्यक्षः, युगाध्यक्षः, युगावहः, स्वधर्मा, स्वर्गतः, स्वर्गस्वरः, स्वरमयस्वनः, बाणाध्यक्षः, बीजकर्ता, धर्मकृत्, धर्मसम्भवः, दम्भः, लोभः, अर्थवित्, शम्भुः, सर्वभूतमहेश्वरः, श्मशाननिलयः, त्र्यक्षः, सेतुः अप्रतिमाकृतिः, लोकोत्तरस्फुटलोकत्र्यम्बकः, नागभूषणः, अन्धकारिः, मखद्वेषी, विष्णुकन्धरपातनः, हीनदोषः, अक्षयगुणः, दक्षारिः, पूषदन्तभित्, धूर्जटिः, खण्डपरशुः, सकलः, निष्कलः, अनघः, अकालः, सकलाधारः, पाण्डुराभः, मुडः, नटः, पूर्णः, पूरयिता, पुण्यः, सुकुमारः, सुलोचनः, सामगेयप्रियः, अक्रूरः, पुण्यकीर्तिः, अनामयः, मनोजवः, तीर्थकरः, जटिलः, जीवितेश्वरः, जीवितान्तकरः, नित्यः, वसुरेताः, वसुप्रदः, सद्गतिः, सत्कृतिः, सिद्धिः, सज्जातिः, कालकण्टकः, कलाधरः, महाकालः, भूतसत्यपरायणः, लोकलावण्यकर्ता, लोकोत्तरसुखालयः, चन्द्रसजीवनः, शास्ता, लोकगूढः, महाधिपः, लोकबन्धुः, लोकनाथः, कृतज्ञः, कृतिभूषितः, अनपायः, अक्षरः, कान्तः, सर्वशस्त्रभृतांवरः, तेजोमयः, द्युतिधरः, लोकानामग्रणीः, अणुः, शुचिस्मितः, प्रसन्नात्मा, दुर्जयः, दुरतिक्रमः, ज्योतिर्मयः, जगन्नाथः, निराकारः, जलेश्वरः, तुम्बवीणः, महाकोपः, विशोकः, शोकनाशनः, त्रिलोकपः, त्रिलोकेशः, सर्वशुद्धिः, अधोक्षजः, अव्यक्तलक्षणः, देवः, व्यक्तः, अव्यक्तः, विशास्पतिः, वरशीलः, वरगुणः, सारः, मानधरः, यमः, ब्रह्मा, विष्णुः, प्रजापालः, हंसः, हंसगतिः, वयः, वेधा, विधाता, धाता, सष्टा, हर्ता, चतुर्मुखः, कैलासशिखरवासी, सर्वावासी, सदागति, हिरण्यगर्भः, द्रुहिणः, भूतपालः, भूपतिः, सद्योगी, योगवित्, योगी, वरदः, ब्राह्मणप्रियः, देवप्रियः, देवनाथः, देवज्ञः, देवचिन्तकः, विषमाक्षः, विरूपाक्षः, वृषदः, वृषवर्धनः, निर्ममः, निरहङ्कारः, निर्मोहः, निरुपद्रवः, दर्पहा, दर्पदः, दृप्तः, सर्वार्थपरिवर्तकः, सहस्रजित्, सहस्रार्चिः, स्निग्धाकृतिः, दक्षिणः, भूतभव्यभवन्नाथः, विभवः, भूतिनाशनः, अर्थः, अनर्थः, महाकोशः, परकार्यैकपण्डितः, निष्कण्टकः, कृतानन्दः, निर्व्याजः, व्याजमर्दनः, सत्त्ववान्, सात्त्विकः, सत्यकीर्तिः, स्नेहकृतागमः, अकम्पितः, गुणग्राही, नैकात्मा, नैककर्मकृत्, सुप्रीतः, सुखदः, सूक्ष्मः, सुकरः, दक्षिणानिलः, नन्दिस्कन्दधरः, धुर्यः, प्रकटः, प्रीतिवर्धनः, अपराजितः, सर्वसत्त्वः, गोविन्दः, सत्त्ववाहनः, अधृतः, स्वधृतः, सिद्धः, पूतमूर्तिः, यशोधनः, वाराहशृङ्गधृक्, शृङ्गी, बलवान्, एकनायकः, श्रुतिप्रकाशः, श्रुतिमान्, एकबन्धुः, अनेकधृक्, श्रीवत्सलशिवारम्भः, शान्तभद्रः, समः, यशः, भूयशः, भूषणः, भूतिः, भूतिकृत्, भूतभावनः, अकम्पः, भक्तिकायः, कालहा, नीललोहितः, सत्यव्रतमहात्यागी, नित्यशान्तिपरायणः, परार्थवृत्तिः, वरदः, विविक्षुः, विशारदः,

देवादिदेव महादेव शिव

शुभदः, शुभकर्ता, शुभनामा, शुभः, अनर्थितः, अगुणः, साक्षी, अकर्ता, कनकप्रभः, स्वभावभद्रः, मध्यस्थः, शीघ्रगः, शीघ्रनाशनः, शिखण्डी, कवची, शूली, जटी, मुण्डी, कुण्डली, अमृत्यु, सर्वदृक्, सिंहः, तेजोराशिः, महामणिः, असङ्ख्येयः, अप्रमेयात्मा, वीर्यवान्, वीर्यकोविदः, वैद्यः, वियोगात्मा, परावरमुनीश्वरः, अनुत्तमः, दुराघर्षः, मधुरः, प्रियदर्शनः, सुरेशः, शरणम्, सर्वः, शब्दः ब्रह्म, सतां गतिः, कालपक्षः, कालकारी, कङ्कणीकृतवासुकिः, महेष्वासः, महीभर्ता, निष्कलङ्कः, विसृङ्खलः, द्युमणिः, तरणिः, धन्यः, सिद्धिदः, सिद्धिसाधनः, विश्वतस्संवृतः, स्तुत्यः, व्यूढोरस्कः, महाभुजः, सर्वयोनिः, निरातङ्कः, नरनारायणप्रियः, निर्लेपः, निष्प्रपञ्चात्मा, व्यङ्गः, व्यङ्गनाशनः, स्तव्यः, स्तवप्रियः, स्तोता, व्यासमूर्तिः, निरवद्यमयः, अपायः, विद्याराशिः, रसप्रियः, प्रशान्तबुद्धिः, अक्षुण्णः, सङ्गही, नित्यसुन्दरः, वैयाघ्रधुर्यः, धात्रीशः, सङ्कल्पः, शर्वरीपतिः, परमार्थगुरुः, दृष्टिः, शरीराश्रितवत्सलः, सोमः, रसज्ञः, रसदः, सर्वसत्त्वावलम्बनः। (शिव, कोटि, 35/1-132)

ऐसा भी माना जाता है कि विष्णु ने महेश्वर शिव के निकट ही एक पैर से खड़े होकर एक सहस्र वर्षों तक ब्रह्म का जप किया। शिव ने तब सन्तुष्ट होकर उन्हें चक्र प्रदान किया और उससे शत्रुओं को विनष्ट करने का निर्देश भी दिया। (वामन, 82/21-28) शिव का चक्र ही विष्णु के हाथों में पहुंचकर सुदर्शन चक्र कहलाने लगा।

रामचन्द्र

विष्णु के ही एक रूप दाशरथि राम हैं। विष्णु के समान राम भी शिव के परम भक्त हैं। वनवास के समय गौतमी नदी में स्नान करके पिण्डदान देने से पिता दशरथ का नरक से उद्धार हो जाने पर अत्यधिक प्रसन्नतापूर्वक राम ने वहां महेश्वर शिव की स्थापना की। तदुपरान्त षोडश उपचारों से शिव की पूजा-अर्चना करके छत्तीस कलाओं से समन्वित शिव की निम्न नामों से स्तुति की— शम्भुः, पुरुषः, पुराणः, सर्वज्ञः, अपारभावः, रुद्रः, प्रभुः, अक्षयः, शर्वः, परमव्ययः, उमापतिः, लोकगुरुः, दारिद्र्यविदारणः, रोगापहरः, कल्याणम्, अचिन्त्यरूपः, विश्वोद्भवबीजरूपः, विश्वस्थितिकारणः, संहारकरः, गौरीप्रियः, क्षरः, अक्षरः, चिद्रूपः, अमेयभावः, त्रिलोचनः, कारुण्यकरः, भयङ्करः, अभीप्सितानां दाता, सोमेशः, उमेशः, वेदत्रयलोचनः, मूर्तित्रयवर्जितः, पुण्यम्, सदसदव्यतीतः, पापहरः, विश्वहितेतरतः, विश्वगोप्ता, सदसत्प्रणेता, विश्वपतिः, यज्ञेश्वरः, हव्यकव्यः, गतिः, लोकसदाशिवः, दानप्रियः, इष्टदेवः, सोमेश्वरः, अस्वतन्त्रः, उमापतिः, विजयः, विघ्नेश्वरनन्दिनाथः, पुत्रप्रियः, भवदुःखशोकविनाशनः, चन्द्रधरः, गङ्गाधरः, ईशः, ईड्यः, उमाधवः, देववरः, अजादीशपुरन्दरादिसुरासुरैरर्चितपादपद्मः, सम्पूजितः, सोमः। (ब्रह्म, 123/195-206)

शरणदाता, शरणरूप शिव को नाना प्रकार के अभिधानों से राम ने जब तुष्ट कर लिया तब वृषध्वज शिव ने समक्ष प्रकट होकर जगत्वंद्य राम की प्रशंसा करते हुए उन्हें वर दिया कि चतुर्दश वर्ष पर्यन्त वन में वास करने के उपरान्त राजा बने राम का दर्शन करने वाले व्यक्ति भूलोक में सर्वविध सुख भोगकर स्वर्ग में अक्षयवास करेंगे। (पद्म, सृष्टि, 33/131-170)

युद्ध के लिए प्रयाण करते हुए समुद्र तट पर उपस्थित होकर पिपासा से आकुल श्रीराम जब वानरों के द्वारा लाये हुए जल का पान करने को उद्यत हुए कि तभी उन्हें ध्यान आया कि शिव भगवान् का दर्शन किये बिना जलपान उचित नहीं है। तब उन्होंने षोडशोपचार से शिव-पूजन करके रावण को विजित करने के लिए शिव की कृपा-दृष्टि की प्रार्थना की। स्वयं को शिव का दास स्वीकार करके बारम्बार नमन करने वाले राम के समक्ष तब शिव मूर्तिमान् रूप में प्रकट हुए तथा उन्हें विजयी होने का वर दिया। इस पर राम ने शिव से वहीं अवस्थान करने की प्रार्थना की तो शिव लिङ्गरूप में परिणत होकर वहीं रामेश्वर नाम से ज्योतिर्लिङ्ग के रूप में स्थित हो गए। (शिव, कोटि, 31/13-40)

स्कन्द पुराण के अनुसार रावणवध के उपरान्त श्रीराम लक्ष्मण, सीता तथा विभीषण आदि सहित जब दण्डकारण्य में अगस्त्य आदि मुनियों के दर्शनार्थ आए तब राम ने ब्राह्मण रावण के वध से उत्पन्न पाप को प्रक्षालित करने का उपाय पूछा। मुनियों ने गन्धमादन पर्वत के शिखर पर शिवलिङ्ग की प्रतिष्ठा करने को कहा क्योंकि लिङ्ग-प्रतिष्ठा समस्त पापों को नष्ट करने वाली होती है। मुनियों ने उस लिङ्ग की राम के नाम से प्रसिद्ध होने की भविष्यवाणी भी की। तब राम ने हनुमान् को कैलाश से शिव लिङ्ग लाने के लिए भेजा। उनके लौटने में विलम्ब होने तथा शुभ मुहूर्त को टलते देखकर राम ने सीता निर्मित सैकत लिङ्ग की ही प्रतिष्ठा की। ज्येष्ठ मास के शुक्ल पक्ष की दशमी तिथि में सेतु के मध्य में राम ने लिङ्ग की स्थापना करके पार्वती सहित शिव की पूजा की। तब पार्वती और शिव ने प्रत्यक्ष होकर श्रीराम को वर दिया कि उस धनुष्कोटि में राम द्वारा स्थापित लिङ्ग के दर्शन से समस्त पाप नष्ट हो जाएंगे। उस समय ईश्वर के अभिषेक के लिए एक कूप भी पृथ्वी का भेदन कर वहां प्रकट हो गया। उसी के जल से राम ने रामेश्वर लिङ्ग का अभिषेक किया। (स्कन्द, ब्राह्म, सेतु, 44/61-113)

उक्त रामेश्वर लिङ्ग की स्थापना करने के उपरान्त राम ने निम्न नामों से शिव का स्तवन किया — महात्मा, महामायः, शूली, स्वपदाम्बुजभक्तातिहारी, सर्पहारी, वेदान्तवेद्यः, योगिनां तत्त्वदायी, सर्वानन्दपूर्णः, भक्तभयच्छेदहेतु— पादाब्जरेणुः, अखिलनाथः,

देवादिदेव महादेव शिव

साक्षात्परमात्मा, महापातकनाशी, अद्भुतवीर्यः, कालकालः, कालः, कालातीतः, अविद्यानिहन्ता, पापहरः, संसारतप्ततापनाशकहेतुः, ब्रह्महत्याविनाशी, मदनहारी। (वही, ब्राह्म, सेतु, 49/5-12)

महाभूतग्रासः, महाप्रलयकारणः, महाहिभूषणः, महारुद्रः, नागयज्ञोपवीतः, करिकृत्तिवसनः, ब्रह्मशिरःकपाल—मालाभरणभूषणः, नरकास्थिभूषणः, भासितपरः, नारायणप्रियः, शुभचरितः, पञ्चब्रह्मादिदेवः, चतुर्वदनः, वेदवेद्यः, भक्तसुलभः, अभक्तदुर्लभः, परमानन्दविज्ञानपरः, पूषदन्तपातनः, दक्षशिरश्छेदनः, ब्रह्मपञ्चमशिरोहरणः, पार्वतीवल्लभः, नारदोपगीयमानशुभचरितः, नैकरूपधरः, नानायुधः, देवपतिः, त्रिपुरहरः, श्रीशैलनिवासः, काशीनाथः, केदारेश्वरभूषणः, सिद्धेश्वरः, गोकर्णेश्वरः, कनखलेश्वरः, पर्वतेश्वरः, चक्रपदः, बाणचिन्तापादकः, मुरहरपूजितचरणकमलः, सोमः, सोमभूषणः, सर्वज्ञः, ज्योतिर्मयः, जगन्मयः। (पद्म, पाताल, 116/221)

राम द्वारा रामेश्वर लिङ्ग की स्थापना के उपरान्त सीता ने भी शिव की जो स्तुति की उसमें शिवनाम हैं—परमकारणः, शङ्करः, धूर्जटिः, गिरिसुतास्तनकुङ्कुमशोभितः, गङ्गाधरः, विरूपाक्षः, नीललोहितः, करुणाकरः, भवभीतानां भवभीतिविमर्दनः, शरणागतपालकः। (स्कन्द, ब्राह्म, सेतु, 49/21-25)

रामेश्वर लिङ्ग की राम ने जब स्थापना की तब लक्ष्मण ने शिव की जो स्तुति की उसमें परिगणित नाम हैं—त्रिपुरघ्नः, पार्वतीजीवितेशः, गणेशस्कन्दसूनुः, सूर्यचन्द्राग्निलोचनः, सोमः, मार्कण्डेयभयच्छिद्, सर्वप्रपञ्चस्य अन्तहेतुः, सृष्टिस्थित्यन्तहेतुः, श्रीकण्ठः, पञ्चपातकभेदी, परानन्दसत्यविज्ञानरूपी, भवरोगघ्नः, स्नायूनां पतिः, तस्कराणां पतिः, वनानां पतिः, गणानां पतिः। (वही, ब्राह्म, सेतु, 49/13-19)

यह भी उल्लेखनीय है कि अयोध्यानरेश राम के राज्य करते हुए दीर्घ समय व्यतीत हो जाने पर जब राम विभीषण का राज्य देखने लङ्का गये थे तो लङ्का से लौटते हुए विभीषण के अनुरोध पर समुद्र पर निर्मित सेतु को उन्होंने खण्डित कर दिया। उसके उपरान्त रामेश्वर लिङ्ग के दर्शन करने पर स्वयं शिव ने अदृश्य होकर ही राम की प्रशंसा की तथा उस लिङ्ग और सेतुतीर्थ को शाश्वत बताते हुए उनके सर्वविध पापों का विनाशक होने की भी घोषणा की। उस समय राम ने निम्न नामों से शिव की स्तुति की—देवदेवेशः, भक्तानामभयङ्करः, गौरीकान्तः, दक्षयज्ञविनाशनः, भवः, शर्वः, रुद्रः, वरदः, पशुपतिः, नित्यमुग्रः, कपर्दी, महादेवः, भीमः, त्र्यम्बकः, दिशां पतिः, ईशानः, भगघ्नः, अन्धकघाती, नीलग्रीवः, घोरः, वेधाः, वेधसा स्तुतः, कुमारशत्रुनिघ्नः, कुमारजननः, विलोहितः, धूम्रः, शिवः, क्रथनः, नीलशिखण्डः, शूली, दैत्यनाशी, उग्रः,

देवादिदेव महादेव शिव

त्रिनेत्रः, हिरण्यवसुरेताः, अनिन्द्यः, अम्बिकाभर्ता, सर्वदेवस्तुतः, अभिगम्यः, काम्यः, सद्योजातः, वृषध्वजः, मुण्डः, जटी, ब्रह्मचारी, तप्यमानः, तप्यः, ब्रह्मण्यः, अजः, विश्वात्मा, विश्वसृक्, दिव्यः, प्रपन्नार्तिहरः, भक्तानुकम्पी, विश्वतेजाः, मनोगतिः। (पद्म, सृष्टि, 38/135-155)

शिव का राम के प्रति पूर्ण आदर होने पर भी उनसे समक्ष युद्ध करने का विवरण प्रस्तुत करना भी अप्रासङ्गिक नहीं होगा। हुआ यह कि देवपुर के राजा वीरमणि महान् शिवभक्त थे। उनकी कठोर तपस्या से प्रसन्न होकर शिव ने उन्हें वर दिया था कि राम के अश्वमेधीय यज्ञ के अश्व के उनके राज्य में आगमन तक शिव उसके राज्य में रहकर उसे सुरक्षा प्रदान करेंगे। उसी कारण भक्तवत्सल शिव उसी के राज्य में रहते थे। जब राम का अश्व उस राज्य से निकला तो वीरमणि के पुत्र ने उसे पकड़ लिया जिस कारण अश्वरक्षक शत्रुघ्न आदि के साथ वीरमणि का युद्ध हुआ। वीरमणि के पक्ष के दुर्बल होने पर स्वयं शिव ने उसके पक्ष से युद्ध किया और शत्रुघ्न आदि को मूर्च्छित कर दिया। अन्ततः श्रीराम को स्वयं वहां आना पड़ा। अपने भक्त भी और अपने आराध्य भी राम को सम्मुख देखकर शिव ने राम के चरणों में प्रणाम कर अपने अपराध- शत्रुघ्न आदि को घायल करना - के लिए क्षमायाचना की तथा अपने भक्त को दिये वचन की रक्षा की बात भी बताई। (वही, पाताल, 46/5-17) यह है शिव तथा राम का गूढ़ सम्पर्क।

राम के दर्शनार्थ शिव एक बार पार्वती को लेकर अयोध्या में भी उपस्थित हुए थे और ब्राह्मण-ब्राह्मणी का वेश धारण कर सरयू तट पर वास किया था। (वही, पाताल, 104/3-4)

हनुमान्

श्रीराम की शिवभक्ति के सन्दर्भ में रामभक्त हनुमान् की शिवभक्ति पर दृष्टिपात करना प्रासङ्गिक ही होगा - शिव ने हनुमान् से जब उनके आराध्य का नाम पूछा तब हनुमान् ने जो शिवस्तुति की उसमें कतिपय शिवनाम हैं - महान् देवः, अमितात्मा, योगी, योगधाता, योगिनां गुरुः, योगिगम्यः, ज्ञानिनां पतिः, वेदानां पतिः, देवानां पतिः, ध्यानम्, ध्यानगम्यः, धातृणां गुरुः, शिष्टः, शिष्टगम्यः, भूम्यादिपतिः, वेदवाक्यानां निधिः, अष्टमूर्तिः, पशूनां पतिः, त्र्यम्बकः, त्रिनेत्रः, सोमसूर्याग्निलोचनः सुभृङ्गराजधत्तूरद्रोणपुष्पप्रियः। (वही, पाताल, 114/79-65)

एक बार गौतम ऋषि के आश्रम में पहुंचे शिव तथा विष्णु जब जलक्रीड़ा कर रहे थे तब हनुमान् ने उन्हें गाना सुनाकर इतना मुरझाया कि आश्रम में लौटते हुए शिव

देवादिदेव महादेव शिव

ने हनुमान् को अपने वृषभ पर आरुढ़ होने को कहा जिससे मार्ग में भी उनके गाने का आनन्द प्राप्त किया जा सके। हनुमान् वृषभारुढ़ होने के स्थान पर शिव को ही अपने कन्धों पर बिठाकर चल पड़े और गीत गाने लगे। आश्रम में पहुँचकर हनुमान् जब शिव के समक्ष नमन करने लगे तो शिव ने उनके अङ्ग-प्रत्यङ्ग को अपने चरणों से स्पर्श किया और उनके कण्ठ में माला डाल दी। इस पर विष्णु तक हनुमान् के सौभाग्य की प्रशंसा करने लगे। भोजन आदि के उपरान्त विष्णु के पूछने पर सभी के ध्येय शिव ने बताया कि वे स्वयं किसी का ध्यान नहीं करते हैं, केवल लोकशिक्षा के लिए ध्यानस्थ होते हैं। इसी मध्य वहां पार्वती के आने से शिव के प्रेम-प्रदर्शन के उत्तर में पार्वती ने जब शिव की अकिञ्चनता पर कटाक्ष किया तो विष्णु अपने आराध्य का यह अपमान सहन नहीं कर सके और नखों से पार्वती का सिर काटने को उद्यत हो गए किन्तु स्वयं शिव ने विष्णु के इस कृत्य की निन्दा करते हुए कह दिया कि उन्हें तो पार्वती का प्रत्येक आचरण ही प्रिय होता है। उस समय हनुमान् ने शिव की निष्काम पूजा करने की इच्छा व्यक्त की तथा निम्न नामों से शिव का स्तवन करने लगे — अमितात्मा, योगधाता, योगिनां गुरुः, ज्ञानिनां पतिः, ध्यानम्, ध्यानगम्यः, धातृणां गुरुः, अष्टमूर्तिः, अम्बकः, सोमसूर्याग्निचक्षुः, सुभृङ्गराजधत्तूरद्रोणपुष्पप्रियः, बृहतीपूगपुत्राङ्गचम्पकादिप्रियः। (नारद, पूर्व, 79/230-236)

अनन्तर हनुमान् सरस्वती नदी के तट पर विधानपूर्वक शिवलिङ्ग की पूजा करने लगे तो लिङ्ग के अभिषेक के समय उन्हें लिङ्ग का पीठ भाग नहीं मिला। इससे शोकसन्तप्त उन्होंने रुदन करना प्रारम्भ कर दिया। इसी समय वहां शिवगण वीरभद्र आए तथा हनुमान् को रोते देख पीठ खोजकर भी जब नहीं पा सके तो क्रोध से नेत्राग्नि द्वारा उन्होंने पाताल से लेकर स्वर्ग आदि समस्त लोकों को जला दिया। एकमात्र सत्यलोक ही उस समय तक सुरक्षित था। आशङ्कित मुनिजन गौतम-आश्रम में आकर शिव के दर्शन करने में असमर्थ रहे। तब उन्होंने अपने हृदय में अवस्थित देवदेवेश शिव की निम्न नामों से स्तुति की — शुद्धप्रभाचिन्त्यरूपः, ब्रह्माद्यधीशः, सृष्ट्यादिकर्ता, विष्णुप्रियः, आर्तिहन्ता, अन्तकर्ता, अखिलाधीश्वरः, अम्बरः, चरस्थावरव्यापकः, वेदगुहाः, भक्तिप्रियः, पाकभोक्तामखेशः, व्यालयज्ञोपवीतप्रधर्ता, सुराबिन्दुवर्षापनः, धरित्रीमरुद्वयोमतोयेन्द्रवह्निप्रभामण्डलात्माष्टधामूर्तिधर्ता, अशिवघ्नः, कलानाथभालः, जगज्जाड्यविध्वंसनः, शुद्धकीर्तिः, कालत्रयात्मा, सर्वमूर्तिः। (वही, पूर्व, 79/320-328)

इस स्तुति से प्रसन्न शिव प्रकट हुए तथा मुनियों की समस्या सुनकर शिव ने उन सभी को आश्चस्त किया कि उन्होंने केवल हनुमान् की परीक्षा लेने के लिए ही पीठ को

देवादिदेव महादेव शिव

लुप्त किया था। तब शिव ने समस्त लोकों को पूर्ववत् बना दिया। उन्होंने वीरभद्र को शिवभक्त की रक्षा करने के कारण शाश्वती कीर्ति प्राप्त करने का वर दिया। हनुमान् ने भी विधिपूर्वक शिवलिङ्ग की पूजा की। शिव ने प्रसन्न होकर हनुमान् को कल्पान्त तक जीवित रहने, समुद्र को लांघने की सामर्थ्य प्राप्त करने, शास्त्रज्ञ होने तथा शक्तिसम्पन्न होने का वर दिया। (वही, पूर्व, 79/301-351)

वासुदेव कृष्ण

श्रीराम के समान श्रीकृष्ण भी विष्णु ही हैं तथा शिवभक्त हैं। वे कृष्ण जब उपमन्यु मुनि के आश्रम में गए तो मुनि से उन्होंने अपनी शिव-विषयक जिज्ञासा व्यक्त करते हुए पूछा, 'योगवेत्ताओं में श्रेष्ठ ईश्वर शिव कैसे दृश्य होंगे? मैं उमापति को कहाँ देखूँगा।' उपमन्यु ने कृष्ण को आश्वस्त किया कि वे शिव का दर्शन अवश्य करेंगे किन्तु उसके लिए कृष्ण को संयत होकर तप करना होगा। उपमन्यु का कहना था कि उनके आश्रम में पूर्व में भी उनके व्यक्तियों ने शिव के दर्शन प्राप्त किए हैं। कृष्ण भस्म का लेप कर, मुण्डित सिर तथा वल्कल धारण कर दिनरात शिव के नाम का जप करने लगे। दीर्घकाल के उपरान्त शिव ने पार्वती के साथ आकर कृष्ण को दर्शन दिया। तब श्रीकृष्ण ने निम्न अभिधानों से शिव की स्तुति की - शाश्वतः, सर्वयोगः, ब्रह्मा, तमः, सत्त्वम्, रजः, हरिः, रुद्रः, विश्वकर्ता, संहर्ता, दिनकरमण्डलाधिवासः, प्राणः, हुतवहवासवादिभेदः, अगुणः, एकरूपः, योगस्थः, हृदिस्थः, इन्द्र्यः, अशेषविभागहीनः, अमलः, हृद्यन्तरावस्थितः, योनिः, अनन्तः, एकः, अचलः, सत्यः, परः, सर्वगः, अनादिमध्यनिधनम्, सत्यविभवः, विश्वेश्वरः, नीलकण्ठः, त्रिनेत्रः, रंहः, महादेवः, ईशानः, पिनाकी, मुण्डः, दण्डी, वज्रहस्तः, दिग्वस्त्रः, कपर्दी, भैरवनादः, कालरूपः, दंष्ट्री, नागयज्ञोपवीतः, वह्निरेताः, गिरीशः, स्वाहाकारः, मुक्ताट्टहासः, भीमः, कामनाशः, कालप्रमाथी, भैरववेषः, हरः, निषङ्गी, त्र्यम्बकः, कृत्तिवासा, अम्बिकाधिपतिः, पशूनां पतिः, व्योमरूपः, व्योमाधिपतिः, नरनारीशरीरः, साङ्ख्ययोगप्रवर्त्ती, भैरवनाथः, देवानुगतलिङ्गी, कुमारगुरुः, देवदेवः, यज्ञाधिपतिः, ब्रह्मचारी, मृगव्याधः, महान्, ब्रह्माधिपतिः, हंसः, विश्वः, मोहनः, योगी, योगगम्यः, योगमायः, प्राणपालः, घण्टानादप्रियः, कपाली, ज्योतिषां पतिः।

स्तवन करने के उपरान्त कृष्ण ने शिव-पार्वती के चरणों में दण्डवत् प्रणाम किया तो शिव ने सस्नेह उन्हें उठाकर उनकी प्रशंसा की। तब कृष्ण ने शिवभक्त एवं शिव-सदृश पुत्र की याचना की जिसे शिव ने स्वीकार कर लिया। (कूर्म, पूर्व, 25/33-85)

कृष्ण के प्रसङ्ग में उनके पथप्रदर्शक उपमन्यु को परिचित करवाना उचित ही

देवादिदेव महादेव शिव

होगा। उपमन्यु व्याघ्रपाद ऋषि के पुत्र थे। दारिद्र्य के कारण उपमन्यु की माता ने दूध के स्थान पर आटे का घोल उन्हें दिया तो माता के निर्देश पर उन्होंने कठोर तप करके शिव को प्रसन्न किया था। उपमन्यु की शिवभक्ति इतनी प्रगाढ़ थी कि वे शिव के वर से कृमि-कीट होने को भी प्रस्तुत थे किन्तु देवराज द्वारा प्रदत्त राजपद भी उन्हें स्वीकार्य नहीं था। उपमन्यु जानते थे कि उनके आराध्य शिव समस्त कारणों के कारण हैं। एक मात्र शिव ही ऐसे देवता हैं जिनके लिङ्ग की पूजा होती है। उपमन्यु की भक्ति से आकृष्ट शिव ही इन्द्र का रूप धरकर उनकी निष्ठा की परीक्षा लेने आए थे। अपने प्रति उपमन्यु की दृढ़भक्ति और निष्ठा से प्रभावित शिव ने जब स्वरूप ग्रहण किया तो उनके तेज से समस्त दिशाएं प्रकाशित हो उठीं। उस समय नीलकण्ठ महादेव अठारह भुजायुक्त थे, शुक्लाम्बरधारी, श्वेतमाला, श्वेत ध्वज, श्वेत यज्ञोपवीत धारण करने वाले शिव के माथे पर बालेन्दु विराजित था। उनका पिनाक धनुष पुरुषाकार में उनके साथ था। वहीं उनका पाशुपत अस्त्र था जो ब्राह्म, नारायण, ऐन्द्र, आग्नेय, वारुण आदि अस्त्रों से श्रेष्ठ तथा भयङ्कर है। नन्दी तथा ब्रह्मा आदि भी उनके साथ थे। अपने आराध्य को सम्मुख विराजमान पाकर उपमन्यु के आनन्द की सीमा ही नहीं रही। उन्होंने निम्न अभिधानों से शिवस्तुति की—देवाधिदेवः, महादेवः, शक्रः, शक्ररूपः, शक्रवेषधरः, वज्रहस्तः, पिङ्गलः, अरुणः, पिनाकपाणिः, खड्गशूलधरः, कृष्णावासः, कृष्णाकुञ्चितमूर्धजः, कृष्णाजिनोत्तरीयः, कृष्णाष्टमिरतः, शुक्लवर्णः, शुक्लः, शुक्लाम्बरधरः, शुक्लभस्मावलिप्तः, शुक्लकर्मरतः, ब्रह्मा सर्वदेवानाम्, रुद्राणां नीललोहितः, सर्वभूतानाम् आत्मा, साङ्ख्येयपुरुषः, पवित्राणां ऋषभः, योगिनां निष्कलः शिवः, आश्रमाणां गृहस्थः, ईश्वराणां महेश्वरः, सर्वयक्षाणां कुबेरः, क्रतूनां विष्णुः, पर्वतानां महामेरुः, नक्षत्राणां चन्द्रमाः, अरण्यानां सिंहः, पशूनां सिंहः, परमेश्वरः, ग्राम्याणां गोवृषः, लोकपूजितः भगवान्, आदित्यानां विष्णुः, वसूनां पावकः, पक्षिणां वैनतेयः, भुजगेषु अनन्तः, सामवेदः वेदानाम्, यजुषां शतरुद्रियम्, सनत्कुमारो योगिनाम्, साङ्ख्यानं कपिलः, शक्रमरुताम्, पितृणां धर्मराज्, ब्रह्मलोकः लोकानाम्, गतीनां मोक्षः, क्षीरोदः सागराणाम्, शैलानां हिमवान्गिरिः, वर्णानां ब्राह्मणः, विप्राणां दीक्षितद्विजः, आदिः लोकानाम्, संहर्ताकालः, भगवान्, देवः, भक्तवत्सलः, योगेश्वरः, विश्वसम्भवः।

तब उपमन्यु ने शिव के प्रति अचला भक्ति और त्रिकालज्ञता की प्रार्थना की। इसके साथ ही उपमन्यु ने अपने अभीष्ट दूध और भात का बान्धवों सहित सेवन करने का वर भी मांगा और शिव को अपने आश्रम में अवस्थित रहने के लिए भी मना लिया। (महा. अनु. 14/75-195)

ऐसे परम शिवभक्त उपमन्यु की शरण में आए कृष्ण को उपमन्यु ने शिव का नाम

VED UNIVERSITY UNDER

देवादिदेव महादेव शिव

जप करने का मन्त्र प्रदान किया। (वही, अनु. 15/2) उसी के साथ उन्होंने योगेश्वर कृत्य को सम्पन्न करने वाले शिवस्तोत्र को भी उन्हें बताया। उसमें परिगणित शिव नाम हैं — जगदेकनाथः, प्रकृतिमनोहरः, नित्यचित्स्वभावः, अतिगतकलुषप्रपञ्चः, स्वभावनिर्मलाभोगः, सुन्दरचेष्टितः, स्वात्मतुल्यमहाशक्तिः, शुद्धगुणार्णवः, अनन्तकान्तिसम्पन्नः, असदृशविग्रहः, अतर्क्यमहिमाधारः, अनाकुलमङ्गलः, निरञ्जनः, निराधारः, निष्कारणोदयः, निरन्तरपरानन्दः, निर्वृतिकारणः, अतिपरमैश्वर्यः, अतिकरुणास्पदः, स्वतन्त्रसर्वस्वः, असदृशवैभवः, आवृतमहाविश्वः, अनावृतः, उत्तरः समस्तस्य, अत्यन्तनिरुत्तरः, अद्भुतः, अक्षुद्रः, अक्षतः, अव्ययः, अमेयः, अमायः, अभावः, अमलः, महाभुजः, महासारः, महागुणः, महाकथः, महाबलः, महामायः, महारसः, महारथः, परमदेवः, परमहेतुः, शिवः, शान्तः, शिवतरः। (शिव, वाय, उत्तर, 31/1-10)

उपमन्यु से विधिवत् दीक्षित होकर कठोर आत्मसंयम के साथ साधना करने के उपरान्त कृष्ण के समक्ष एक अत्यधिक दीपित होते तेजोमण्डल के मध्य से महेश्वर शिव प्रकट हुए। शिव के साथ उनकी अर्धाङ्गिनी उमा भी थीं। आदित्य, वसु, साध्य, विश्वेदेव आदि के गणों के द्वारा स्तुत किये जाते हुए तथा ब्रह्मा आदि से परिवेष्टित शिव को सम्मुख देखकर उन दुर्दर्शनीय शिव को नमन करके कृष्ण ने शिव की जो स्तुति की उसमें उनके निम्न अभिधान परिगणित किये गए थे — शाश्वतः, सर्वयोनिः, ब्रह्माधिपः, तपः, सत्त्वः, रजः, तमः, सत्यम्, ब्रह्मा, रुद्रः, वरुणः, अग्निः, मनुः, भवः, धाता, त्वष्टा, विधाता, प्रभुः, सर्वतोमुखः, आदिः सर्वभूतानाम्, संहारः, वेदाः, यज्ञाः, सोमः, दक्षिणा, पावकः, हविः, यज्ञोपगम्, इष्टः, दत्तः, अधीतम्, व्रतानि, नियमाः, ह्रीः, कीर्तिः, श्रीः, द्युतिः, तुष्टिः, सिद्धिः, कृतिः, विकारः, प्रलयः, प्रधानम्, प्रभवः, अव्ययः, मनसः परमायोनिः, स्वभावश्चशाश्वतः, अव्यक्तः, पावन, विभुः, सहस्रांशुः, हिरण्मयः, आदिर्गुणानाम्, जीवनाश्रयः, महान्, आत्मा, मतिः, ब्रह्मा, विश्वः, शम्भुः, स्वयंभुवः, बुद्धिः, प्रज्ञा, उपलब्धिः, संवित्, ख्यातिः, धृतिः, स्मृतिः, हृदयं सर्वभूतानाम्, क्षेत्रज्ञः, ऋषिष्टुतः, सर्वतः पाणिः, सर्वतः पादः, सर्वतोक्षिशिरोमुखः, सर्वतः श्रुतिमान्, फलम्, तिग्मांशुः, प्रभा, अर्विः, पुरुषः, सर्वहृदिसंस्थितः, अणिमा, लघिमा, प्राप्तिः, ईशानः, ज्योतिः, अव्ययः, ध्रुवः, गुहाशयः, प्रभुः, पुराणः पुरुषः, विश्वरूपः, बुद्धिमतां परागतिः, बुद्धिमान्।

कृष्ण की स्तुति से प्रसन्न शिव ने कृष्ण की अविचल भक्ति की प्रशंसा करते हुए उनसे वर मांगने को कहा। (महा, अनु. 15/4-5) तब शिव ने कृष्ण को उनके अभीष्ट वर प्रदान किये यथा धर्म में दृढ़ता, युद्धभूमि में शत्रुहनन, यश, परम बल, योग-प्रियता, शिव का सान्निध्य और दस सहस्र पुत्र। (वही, अनु. 16/2)

दुर्वासा को शिव-अवतार माना जाता है। कालान्तर में कृष्ण के आवास में दुर्वासा

देवादिदेव महादेव शिव

के रूप में शिव ने ही कुछ काल तक वास किया था और उन्हें दुःसह कष्ट दिये थे किन्तु कृष्ण ने उन कष्टों को धीरता से सहन कर लिया था। उन्हीं दुर्वासा रूपी शिव की महिमा का प्रतिपादन करते हुए कृष्ण ने शिव के निम्न अभिधानों को परिगणित किया था — देवेन्द्रः, वायुः, अश्विनौ, विद्युतः, चन्द्रमाः, ईशानः, सूर्यः, वरुणः, कालः, अन्तकः, मृत्युः, तमः, रात्र्यहानि, मासाः, अर्धमासाः, ऋतवः, सन्ध्ये, संवत्सरः, धाता, विधाता, विश्वकर्मा, सर्ववित्, नक्षत्राणि, दिशः, प्रदिशः, ग्रहाः, विश्वमूर्तिः, अमेयात्मा, भगवान्, अमितद्युतिः, एकधा, द्विधा, बहुधा, शतधा, सहस्रधा, शतसहस्रधा। (वही, अनु. 145/37-41)

श्रीकृष्ण की शिवभक्ति इतनी प्रगाढ़ थी कि वे स्वयं तो शिवदर्शन करते ही थे, अन्य शिवभक्त को भी उनका दर्शन करवा सकते थे। इसी का उदाहरण है अर्जुन को कृष्ण द्वारा शिव-पार्वती का दर्शन करवाना और वह भी महाभारत की रणभूमि में। हुआ यह था कि स्वाभिमानी अर्जुन ने सूर्यास्त से पूर्व जयद्रथ के वध की प्रतिज्ञा कर ली अन्यथा उन्हें मृत्यु को वरण करना था। अपनी प्रतिज्ञा-पूर्ति के लिए जहां अर्जुन चिन्तित थे वहीं उनकी समस्या के समाधान-स्वरूप कृष्ण भी उपाय खोज रहे थे। ऐसी विषम परिस्थिति में कृष्ण ने अपने आराध्य शिव को स्मरण किया, अर्जुन को पार्वती सहित शिव के दर्शन करवाए और तब अर्जुन के साथ मिलकर शिव-स्तुति की। उस स्तुति में प्रयुक्त नामावलि है— लोकादिः, विश्वकर्मा, अजः, ईशानः, अव्ययः, मनसःपरमायोनिः, खम्, वायुः, ज्योतिषां निधिः, स्रष्टा वारिधाराणाम्, भुवः प्रकृतिः परा, देवदानवयक्षाणां साधनम्, मानवानां साधनम्, योगिनां परमब्रह्म, व्यक्तः, ब्रह्मविदां निधिः, चराचरस्रष्टा, चराचरप्रतिहर्ता, कालः, कोपः, महात्मा, शुक्रसूर्यगुणोदयः, भवः, शर्वः, रुद्रः, वरदः, पशूनां पतिः, नित्यः, उग्रः, कपर्दी, महादेवः, भीमः, त्र्यम्बकः, शम्भुः, ईशानः, भगध्नः, अन्धकघाती, कुमारगुरुः, नीलग्रीवः, वेधा, विलोहितः, धूम्रः, व्याधः, अपराजित्, नीलशिखण्डः, शूली, दिव्यचक्षुः, हन्ता, गोप्ता, त्रिनेत्रः, वसुरेताः, अचिन्त्यः, अम्बिकाभर्ता, सर्वदेवस्तुतः, वृषध्वजः, पिङ्गः, जटी, ब्रह्मचारी, तप्यमानः सलिले, ब्रह्मण्यः, अजितः, विश्वात्मा, विश्वसृक्, विश्वमावृत्य तिष्ठन्, सेव्यः, भूतानां प्रभुः, ब्रह्मवक्त्रः, शर्वः, शङ्करः, शिवः, वाचस्पतिः, प्रजापतिः, विश्वपतिः, महतां पतिः, सहस्रशिराः, सहस्रभुजमन्युः, सहस्रनेत्रपादः, असङ्ख्यकर्मा, हिरण्यवर्णः, हिरण्यकवचः, भक्तानुकम्पी। (वही, द्रोण, 57/40-59)

विष्णु के ही अवतार नरसिंह और शिव के सम्पर्क को भी रेखाङ्कित करना समीचीन होगा। पशुयोनि धारण कर विष्णु ने हिरण्यकशिपु का वध करने के उपरान्त सिंह आदि पशुओं से प्रीति बढ़ा ली। तब समस्त देवताओं ने शिव से ही प्रार्थना की कि

देवादिदेव महादेव शिव

वे विष्णु को पुनः अपने रूप में लाएं। इसी उद्देश्य के लिए शिव ने सिंह से अधिक शक्तिशाली पशु शरभ का रूप धारण किया और वे नरसिंह से सहस्रों वर्षों तक भयानक युद्ध करते रहे। एक बार दोनों देवता युद्ध करते करते एक सरोवर में गिर पड़े। सौभाग्य से उसी सरोवर के तट पर देवर्षि नारद अश्वत्थ वृक्ष का अवलम्बन लेकर ध्यानस्थ थे। शिव और विष्णु के उस रोमाञ्चक युद्ध ने नारद का ध्यान आकृष्ट किया तो महाज्ञानी देवर्षि को उन दोनों को पहचानने में कष्ट नहीं हुआ। नारद ने भक्तिभाव से उन दोनों का स्तवन किया तो शिव लिङ्ग रूप में परिवर्तित हो गए और विष्णु चतुर्भुज रूप में आ गए। (वामन, 36/29-33)

अन्य देववृन्द

शिव को जो देवादिदेव महादेव कहा जाता है, वह उनका सार्थक अभिधान है। विष्णु तथा ब्रह्मा के शिव-स्तवन का उल्लेख पूर्व में किया जा चुका है। अन्य जो भी देवता, लोकपाल अथवा अन्य कोई भी हो, इन्हीं देवादिदेव शिव की शरण में आता है, उन्हीं से विपत् से त्राण की प्रार्थना करता है। ऐसे देवों के कतिपय दृष्टान्तों के प्रस्तुतीकरण से शिव की महिमा स्पष्ट परिलक्षित होगी—

पूर्वकाल में पञ्चनद तीर्थ में सहस्ररश्मि सूर्य भगवान् शिव के गभस्तीश्वर नामक महालिङ्ग की प्रतिष्ठा करके सुदारुण तप करने लगे। उन्होंने लिङ्ग के साथ ही मङ्गला नाम्नी गौरी पार्वती की भी स्थापना की थी। दिव्य सहस्र वर्षों तक तप करने के कारण सूर्य पूर्व की अपेक्षा अधिक तीव्रता से प्रज्वलित होने लगे। इस कारण विष्णु आदि देवता भी भयभीत होकर शिव की शरण में गए तो शिव अपने आराधक सूर्य के समक्ष उपस्थित हुए किन्तु तपोलीन सूर्य को कोई बोध नहीं हुआ। शिव के पुकारने पर भी सूर्य ने जब नहीं सुना तो शिव ने उन्हें अपनी हथेली के स्पर्श से प्रबोधित किया। समक्ष आराध्य शिव को देखकर भाव-विभोर सूर्य ने शिव का स्तवन किया और तदुपरान्त पार्वती की भी स्तुति की। तब प्रसन्न शिव ने सूर्य को नित्य चराचर विश्व को देखने, सर्वज्ञ तथा सर्वगामी होने, सभी के समस्त कर्मों के ज्ञाता होने आदि के अनेक वर दिए। सूर्य ने जो शिवस्तुति की थी उसके नाम हैं — भर्गः, भीमः, चन्द्रभूषणः, भवभीतिहारकः, नतवाञ्छितप्रदः, चन्द्रचूडः, दक्षशततन्तुशातनः, शिवापतिः, समीहितार्थदः, द्वयेकलोचनः, विरूपलोचनः, पशुपाशनाशनः, कामकृत्, त्रिपुरसूदनः, त्राणकृत्, त्रयीमयः, कालकूटदलनः, शर्वरीरहितः, स्वर्गमार्गसुखदः, अपवर्गदः, कपर्दभृत्, पतिः, विधिविष्णुसंस्तुतः, विदिताखिलेङ्गितः, रूपवर्जितः, ब्रह्म, जिह्वारहितः, अमृतप्रदः, वाङ्मनोविषयदूरः, दूरगः। (स्कन्द, काशी, पूर्व, 49/26-67)

देवादिदेव महादेव शिव

दानव हिरण्य के महाबलशाली पुत्र महाशनि द्वार पराभूत तथा अपमानित देवराज इन्द्र अत्यधिक कातर हो गए तो इन्द्राणी ने इन्द्र को समझाया और अपने साथ शिव-स्तवन करवाया। तब शिव ने प्रकट होकर इन्द्र को शत्रुजय का मार्ग बतलाया। इन्द्र और इन्द्राणीकृत उस संक्षिप्त स्तोत्र में शिवनाम हैं - स्वतन्त्रः, अद्वयचित्सुखात्मकः, सकलाभिलाषदाता, अन्धकारिः, जगतामीशः, पार्वतीशः। (ब्रह्म, 129/68-69)

रवि के पुत्र यम ने एकबार काशी के आनन्द कानन में अपने नाम से शिवलिङ्ग की स्थापना करके कठोर तप किया। उनकी तपस्या से सन्तुष्ट शिव ने उन्हें दर्शन दिया और तपस्या से निरत किया। यमराज की स्तुति से प्रसन्न शिव ने उन्हें धर्मराज कहलाने, दक्षिण दिशा का अधिनायक होने, समस्त कर्मों के साक्षी होने आदि नाना वर दिए। यमकृत उस स्तुति में प्रयुक्त शिव नाम हैं - कारणकारणानाम्, कारणवर्जितः, कार्यमयः, कार्यविभिन्नरूपः, अरूपरूपः, समस्तरूपी, पराणुरूपः, परापरः, अपारपारः, पराब्धिपारप्रदः, शशिमौलिः, अनीश्वरः, गुणात्मकः, गुणवर्जितः, कालात्परः, प्रकृतेः परः, कालात् निर्वाणपदप्रदः, अनिर्वाणम्, आत्तरूपः, परमात्तरूपः, अन्तरात्मा चराचरस्य, जगदेकबन्धुः, हर्ता, अविता, प्रथमो विधाता, मृडः श्रुतिवर्त्मगेषु, भीमोश्रुतिवर्त्मगेषु, सोमःसुभक्तिभाजाम्, रुद्रोऽभक्तिभाजाम्, शूली द्विषताम्, श्रीकण्ठः, एकः स्वपदाश्रितानाम्, दुरात्मानां हालाहलोग्रकण्ठः, चन्द्रकलावतंसः, फणिभूषणः, अन्धकवैरी। (स्कन्द, काशी, उत्तर, 78/16-45)

प्राचीन काल में नैमिषारण्य में ऋषियों ने यज्ञ करते हुए मृत्यु को यज्ञ का शमिता बनाया। दीर्घकाल व्यापी यज्ञ में मृत्यु के व्यस्त रहने से मर्त्यलोक में किसी की मृत्यु नहीं होती थी। इससे देवताओं ने विन्तित होकर यज्ञभाग देने का प्रलोभन दिखलाकर राक्षसों को यज्ञ बाधित करने के लिए भेजा। उस समय मृत्यु को सम्मुख रखकर ऋषियों ने शिव की स्तुति की और अपने यज्ञ के सुसम्पन्न होने का वर मांगा। शिव ने ऋषियों के यज्ञ को निर्विघ्न पूर्ण करवाया। उस समय से ही ऋषियों के शाप से राक्षस देवताओं के शत्रु हो गए। मृत्यु और ऋषियों द्वारा की गई उस शिवस्तुति में प्रयुक्त नाम हैं- भुवनत्रयधाता, भुवनत्रयविधाता, विश्वरूपः, सदसत्परः, सोमेश्वरः, त्रिदशेशानः, महानलः, महाकायः, महानागविभूषणः, महामूर्तिधरः। (ब्रह्म, 116/2-22)

प्रजापति ब्रह्मा ने अपनी सृष्टि की व्यवस्था बनाये रखने के लिए दैत्य-दानवों के साथ सर्पों को भी पाताल में रहने को कहा किन्तु शेषनाग के रसातल में जाते ही दैत्य-दानवों ने उन्हें वहां प्रवेश करने ही नहीं दिया। इससे वे ब्रह्मा की शरण में गए किन्तु ब्रह्मा ने उन्हें शिव की शरण में भेज दिया। गङ्गा स्नान करके भक्तिपूरित हो शेषनाग ने शिव का स्तवन कर उन्हें प्रसन्न किया और उनसे वर के साथ शूल प्राप्त

देवादिदेव महादेव शिव

किया। उसी से अपने शत्रुओं का विनाश कर शेषनाग ने अपनी स्थिति बना ली। तब शेषनाग ने जो शिवस्तुति की थी उसमें प्रयुक्त शिव-नाम हैं — त्रैलोक्यनाथः, दक्षयज्ञविभेदी, आदिकर्ता, त्रैलोक्यरूपी, सहस्रशिराः, संहारकारी, सोमसूर्याग्निरूपः, जलरूपः, सर्वरूपः, कालरूपः, शङ्करः, सर्वेशः, सोमेशः, सर्वगः। (ब्रह्म, 115/2-18)

प्राचीन काल में एक बार धर्म ने दक्षिण समुद्र के तट पर चक्रतीर्थ में धर्मपुष्करिणी के तीर पर कठोर तप करते हुए शिव की आराधना की। धर्म की तपस्या तथा उनकी निष्ठा से प्रभावित शिव ने उनको दर्शन दिया। तब धर्म ने उनकी स्तुति की तथा शिव का वाहन बनने का वर मांगा। शिव ने धर्म को वृषभरूप में अपना वाहन बना लिया। धर्म ने जो स्तुति की थी उसमें से शिव नाम हैं— जगन्नाथः, ईशानः, प्रणवात्मकः, समस्तदेवतारूपः, आदिमध्यान्तवर्जितः, ऊर्ध्वरेताः, विरूपाक्षः, विश्वरूपः, समस्तजगदाधारः, पुष्टिवर्धनः, लोकाधिनाथः, वञ्चत्, परिवञ्चत्, नीलकण्ठः, कल्मषनाशः, मीढुष्टमः, रुद्रः, कद्रुद्रः, प्रचेताः, पिनाकहस्तः, शूलहस्तः, चैतन्यरूपः, पुष्टीनां पतिः, पञ्चास्यदेवः, क्षेत्राणां पतिः। (स्कन्द, ब्राह्म, सेतु, 3/55-60)

प्रिया पत्नी रोहिणी के प्रति अत्यधिक कामासक्त तथा अन्य पत्नियों की उपेक्षा करने वाले जामाता चन्द्र जब दक्ष के शाप से तेजोहीन हो गए तब उन्होंने तपस्या के अन्त में शिवस्तुति द्वारा शिव को प्रसन्न किया एवं विपत्ति से मुक्त हुए। चन्द्रकृत उसी स्तुति में परिगणित शिवनाम हैं — पापहरः, वासुकिभूषणधरः, शूलकपालधरः, अन्धकदेहविनाशः, दानववृन्दवधः, निष्कलरूपः, सकलः, कामदहः, मेचककण्ठधरः, सूक्ष्मनिरअनशब्दः, किङ्करमीशः। (वही, आव, रेवा, 85/17-20)

चन्द्रपुत्र बुध ने काशी में बुधेश्वर लिङ्ग की स्थापना कर कठोर तप से शिव को सन्तुष्ट किया। लिङ्ग से शिव के प्रकट होने पर निम्न नामों से बुध ने उनकी स्तुति की — पूतात्मा, ज्योतीरूपः, विश्वरूपः, रूपातीतः, सर्वार्तिनाशः, प्रणतानां शिवात्मा, सर्वज्ञः, सर्वकर्ता, कृपालुः, भक्तिगम्यः, फलदाता, तपसां तपोरूपः, शिवाकान्तः, श्रीकण्ठः, शूलभृत्, शशिशेखरः, स्तुतिप्रियः, करुणामृतवारिधिः। (वही, काशी, पूर्व, 15/54-55)

प्रपितामह ब्रह्मा का वाहन हंस मानसरोवर से आते हुए मार्ग में लक्ष्मी के वास पद्मयुक्त सरोवर को लांघकर आने के कारण जब कृष्णवर्ण का हो गया तो शिव के चरणों में कमल अर्पित कर उसने शिव-स्तवन किया और शिव के अनुग्रह से शापमुक्त हो गया। उसके द्वारा की गई स्तुति में शिव-नाम हैं — चिदानन्दः, सुधासिन्धुः, सदासम्भावनासङ्गकल्लोलः, अनन्तविग्रहः, अद्वैतवासनामत्यामलत्रयविवर्जितः, जितेन्द्रियः, पराधीनः, समाधिप्राप्यविग्रहः, निरुपाधिः, विनिर्मुक्तः, निरामयः, निःसीमः, निरहङ्कारः, निरावरणः, निर्गुणः, शरणागतसंत्राणः, प्रवीणचरणाम्बुजः, भीममालः, महाव्यालः,

देवादिदेव महादेव शिव

ज्वालादग्धमनोभवः, कुठारभिन्नदैत्येन्द्रः, महाविभुः, त्रिपुरप्रमदाभालसिन्दूरोद्धलिमार्जनः, कात्यायनीकुचाम्भोज— वरकुङ्कुमचर्चितः, प्रमाणदूरः, प्रमतिरूपी, चैतन्यनाथः, त्रैलोक्यरूपी। (पद्म, उत्तर, 184/28-37)

शिव ने जब सनत्कुमार आदि ऋषियों को ईश्वर गीता सुनाई तब विष्णु—आश्रित वामभाग वाले शिव के समक्ष उन्होंने निम्न नामों से उनका स्तवन किया — एकः, ईशः, पुराणः पुरुषः, प्राणेश्वरः, रुद्रः, अनन्तयोगः, हृदि सन्निविष्टः, प्रचेताः, ब्रह्ममयः, पवित्रः, ब्रह्मयोनिः, विमलः, रुक्मवर्णः, परेभ्यः परमः, कविः, परः, जगतः प्रसूतिः, सर्वानुभूः, परमाणुभूतः, अणोरणीयः, महतोमहीयः, हिरण्यगर्भः, जगदन्तरात्मा, जगतः हेतुभूतः, मायावी, जगतामेकनाथः, योगात्मा, अक्षरः, स्वयम्भूतः, भुवो नाशः, अनादिमान्, विश्वरूपः, ब्रह्मा, विष्णुः, परमेष्ठी, वरिष्ठः, एकरूपः, वन्द्यः, एकरुद्रः, हरिः, अग्निः, रुद्रः, नित्यः, अनिलः, चेकितानः, धाता, आदित्यः, अनेकरूपः, परमः वेदितव्यः, विश्वस्य परं निधानम्, शाश्वतधर्मगोप्ता, सनातनः, पुरुषोत्तमः, विष्णुः, चतुराननः, विश्वनाथः, प्रकृतिः, प्रतिष्ठा, सर्वेश्वरः, परमेश्वरः, आदित्यवर्णः, तमसः परः, चिन्मात्र, अनन्तरूपः, खम्, शून्यम्, प्रकृतिः, गुणाः, योगेश्वरः, भद्रः, अनन्तशक्तिः, परायणः, ब्रह्मतनुः, भूताधिपतिः, भवः, भवोद्भवः, कालः, सर्वः, हरः, रुद्रः, कपर्दी, अग्निः। (कूर्म, उत्तर, 5/21-40)

शिव भक्तों के इतने अधिक प्रिय तथा आदरणीय हैं कि वे भक्तजन अपने प्रभु के लिए कोई भी अप्रिय कथन सुनने को प्रस्तुत नहीं होते, चाहे वह उनकी प्रिया पत्नी पार्वती ही कहें। ऐसा ही तब हुआ जब पार्वती के साथ द्यूतक्रीड़ा करते हुए पराजित शिव से पण के अनुसार पार्वती द्वारा शिव की प्रत्येक वस्तु की मांग करने पर शिव ने कह दिया कि वे तो विश्व में सभी के लिए अजेय हैं। इस पर पार्वती ने परिहास में कहा कि अन्यो के लिए अजेय होने पर भी शिव पार्वती के द्वारा तो पराजित हुए हैं। दम्पती के इस हास-परिहास का श्रोता और क्रीड़ा का दर्शक भक्त नारद अपने सम्माननीय शिव के लिए यह कटाक्ष भी सुनने में समर्थ नहीं हुए अतः निम्न अभिधानों से उन्होंने शिव की महिमा का प्रतिपादन किया— अजितः, देवानां परमोगुरुः, अरूपः, सुरूपः, रूपातीतः, परं ज्योतिः, त्रैलोक्यनाथः, विश्वात्मा, लोकशङ्करः। (स्कन्द, माहे, केदार, 34/66-92)

एक बार देवगुरु बृहस्पति के साथ देवराज इन्द्र शिव के दर्शनार्थ कैलास आए। उनके ज्ञान की परीक्षा लेने के लिए शिव रूप परिवर्तित कर दिगम्बर हो उनके समक्ष उपस्थित हुए। त्रिलोक के गर्व से गर्वित इन्द्र ने उनसे उनका परिचय पूछा किन्तु उत्तर न पाकर उन पर वज्राघात करना चाहा इससे शिव ने उनके वज्रसहित हाथ को

देवादिदेव महादेव शिव

स्तम्भित कर दिया। बृहस्पति शिव को तुरन्त जान गए और तभी उनसे शरणागत को प्राणदान देने की प्रार्थना करने लगे। उस समय तक शिव के नेत्र से क्रोधाग्नि निकल चुकी थी जिसको कहीं स्थापित करना आवश्यक था। अतः शिव ने उस अग्नि को क्षारसमुद्र में निक्षिप्त कर दिया। इन्द्र को जीवन दान करवाने के कारण बृहस्पति को शिव ने जीव नाम से सम्बोधित किया। (शिव, रुद्र, युद्ध, 13/5-50)

यह भी माना जाता है कि इन्द्र के वज्र उठाने पर शिव का कण्ठ नीलवर्ण का तथा वह वज्र भस्मीभूत हो गया। बृहस्पति तुरन्त शिव की महिमा को हृदयङ्गम करके उनके समक्ष स्वयं भी विनत हुए तथा इन्द्र को भी विनत किया और शिव की क्रोधाग्नि से इन्द्र की रक्षा की प्रार्थना की। तब शिव ने अपने ललाट की अग्नि को समुद्र में डाल दिया जिसने एक शिशु का रूप धारण कर लिया। वह बालक ही जलन्धर हुआ जिसका वर्णन अन्यत्र उपलब्ध है। (स्कन्द, वैष्णव, कार्तिक, 14/8-26)

बृहस्पति के शिव से जीव नाम प्राप्त करने तथा वर प्राप्त करने का प्रसङ्ग अन्यत्र भी उपलब्ध है। तदनुसार अङ्गिरापुराण बृहस्पति ने काशी में शिव के एक महान् लिङ्ग की स्थापना करके कठोर तप किया। अपनी तपस्या से सन्तुष्ट करके आङ्गिरस ने प्रत्यक्ष हुए शिव की निम्न नामों से स्तुति की - शान्तः, शशाङ्गरुचिः, रुचिरार्थदः, सर्वदः, सर्वशुचिः, शुचिदत्तगृहीतमहोपहृतिः, हृतभक्तजनोद्धततापतति, ततसर्वहृदम्बरवरः, वरदनतिः, नतवृजिनमहावनदाहकृतिः, कृतविविधचरित्रतनुः, सुतनुः, तनुविशिखविशोषणः, विशिखः, धैर्यनिधिः, निघनादिविवर्जितः, कृतनतिकृत्, कृतिविहितमनोरथः, पन्नगभृत्, नगभर्तृसुतापितवामवपुः, स्ववपुः परिपूरितसर्वजगत्, त्रिजगन्मयरूपः, विरूपः, सुदृक्, दृगुदञ्चनकुञ्चनः, कृतहुतभुक्, भवः, भूतपतिः, प्रमथैकपतिः, पतितेष्वपिदत्तकरप्रसृतिः, प्रसृताखिलभूतलसंवरणः, प्रणवध्वनिसौधः, सुधांशुधरः, धरराजकुमारिकयापरयापरितः परितुष्टः, देवः, गिरीशः, महेशः, विभुः, विभवप्रदः, गिरिशः, शिवेशः, मृडः, उडुपतिघ्नः, हरः, अमोघमतिः, गुणहीनः, अहीमहावलयः, प्रलयान्तकः।

जब बृहस्पति इस भांति स्तुति करके शान्त हो गए तब प्रसन्न हुए शिव ने उन्हें अनेक वर प्रदान किए। उन्होंने बृहत् तप से बृहत् भाव को प्राप्त करने के कारण देवगुरु को बृहस्पति अभिधान से अभिहित किया और उसी नाम से अर्चनीय ग्रह का पद भी दिया। उस लिङ्ग की नित्य अर्चना करने के कारण उन्हें जीव नाम भी प्रदान किया। वाणी के विस्तार से शिवस्तवन करने के कारण उन्हें वाचस्पति भी कहा। (वही, काशी, पूर्व, 17/28-46)

प्रसङ्गतः उल्लेखनीय है कि देवासुर संग्राम में महान् वीर वृत्र को युद्धभूमि में समक्ष देख इन्द्र सहित समस्त देवगण जब शिव शङ्कर को स्मरण करने लगे तब बृहस्पति

देवादिदेव महादेव शिव

ने इन्द्र को विधान दिया कि कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष में त्रयोदशी मन्दवार हो तो प्रदोषकाल में लिङ्गरूपी शिव की पूजा करनी चाहिए। शिव के लिए दीपदान, फल आदि का नैवेद्य समर्पित करते हुए प्रदक्षिणा तथा नमस्कार के साथ शिव के शतनाम का पाठ करना चाहिए। इन्द्र को बृहस्पति ने इस भांति शतनाम का पाठ करके शिव का नमन तथा प्रदक्षिणा आदि करके ही युद्ध करने का आदेश दिया।

गुरु बृहस्पतिकृत शिव के शतनाम हैं - रुद्रः, भीमः, नीलकण्ठः, वेधा, कपर्दी, सुरेशः, व्योमकेशः, वृषध्वजः, सोमः, नीलकण्ठः, दिगम्बरः, भर्गः, कपर्दी, उमाकान्तः, तपोमयः, व्याप्तः, शिपिविष्टः, व्यालप्रियः, व्यालः, व्यालपतिः, महीधरः, व्याघ्रः, पशुपतिः, त्रिपुरान्तकसिंहः, शार्दूलोग्रवः, मीनः, मीननाथः, सिद्धः, परमेष्ठी, कामान्तकः, बुद्धः, बुद्धपतिः, कपोतः, विशिष्टः, शिष्टः, परमात्मा, वेदः, वेदबीजः, देवगृह्यः, दीर्घः, दीर्घदीर्घः, दीर्घार्धः, महः, जगत्प्रतिष्ठः, व्योमरूपः, गजासुरविनाशः, अन्धकासुरभेदी, नीललोहितशुक्लः, चण्डमुण्डप्रियः, भक्तिप्रियः, देवः, ज्ञानाज्ञानः, अव्ययः, महेशः, महादेवः, हरः, त्रिनेत्रः, त्रिवेदः, वेदाङ्गः, अर्थः, अर्थरूपः, परमार्थः, विश्वरूपः, विश्वः, विश्वनाथः, शङ्करः, कालः, कालावयवरूपी, अरूपः, सूक्ष्मः, सूक्ष्मासूक्ष्मः, श्मशानवासी, कृतिवासा, शशाङ्कशेखरः, रुद्रः, विश्वाश्रयः, दुर्गः, दुर्गसारः, दुर्गावयवसाक्षी, लिङ्गरूपः, लिङ्गः, लिङ्गपतिः, प्रणवरूपः, प्रणवार्थः, कारणकारणम्, मृत्युञ्जयः, आत्मस्वरूपी, भवस्वरूपी, त्रियम्बकः, असितकण्ठः, भर्गः, गौरीपतिः, सकलमङ्गलहेतुः। (स्कन्द, माहे, केदार, 17/55-89)

(ध्यातव्य है कि शतनाम कहने पर भी नाम मात्र तिराने हैं।)

प्रसङ्गतः उल्लेखनीय यह है कि एक ओर गुरु बृहस्पति देवराज की कल्याण-कामना से शिव-स्तवन करते हैं तो दूसरी ओर इन्द्र के जनक प्रजापति कश्यप भी शिवभक्त होने के कारण इन्द्र के शापित होने पर शिव की ही शरण लेते हैं। हुआ यह कि पुत्र इन्द्र द्वारा विमाता दिति के उदर में प्रविष्ट होकर गर्भस्थ शिशु को विखण्डित करने, अगस्त्य तथा दिति द्वारा इन्द्र को शापित करने, अपने पुत्रों में बढ़ते शत्रुभाव आदि से उद्विग्न कश्यप ने इन सब से मुक्ति हेतु गोमती गङ्गा में स्नान कर शिव का स्तवन किया। उस स्तुति में प्रयुक्त शिव की नामावलि है—शङ्करः, देवेशः, लोकनमस्कृतः, पावनः, वागीशः, पन्नगभूषणः, धर्मवृषारूढः, वेदत्रयेक्षणः, गोधरलक्ष्मीशः, शर्वः, गजाम्बरः, त्रिपुरहन्ताथः, सोमार्धभूषणः, यज्ञेशः, सोमेशः, अभीष्टप्रदायकः, कारुण्यनिलयः, मङ्गलदायकः, सर्वप्रभवः, पालकः, वासवः, भास्करः, वित्तेशः, ब्रह्मनमस्कृतः, विश्वेशः, सिद्धेशः, पूर्णः, कृपासिन्धुः, शरणम्। (ब्रह्म, 124/94-99)

शिव – भक्त

महेश्वर शिव के लिए मात्र भक्त वत्सल विशेषण का प्रयोग उनकी भक्तप्रीति को रेखाङ्कित करने में अलम् नहीं है। वे तो भक्त के अनुरोध पर अचिन्तनीय कृत्य को भी सम्पन्न करते हैं। उनके कालकूट ग्रहण करने के प्रसङ्ग से ही यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है।

भक्तवत्सलता और कालकूट

समुद्र-मन्थन के समय सर्वप्रथम प्रकट हुए अग्नि के समान दाहक हालाहल से समस्त जगत् दग्ध होने लगा तो विष्णु ने शिव से प्रार्थना की, 'समुद्र मन्थन से सर्वप्रथम जो वस्तु प्राप्त हुई है, वह आपका भाग है। अग्रपूजा के रूप में सभी देवों के अग्रगण्य आप उसे स्वीकार करें।' देवों को भय से व्याकुल देखकर शिव ने हालाहल को अमृत के समान अपने कण्ठ में धारण कर लिया। (राम, बाल, 45/23-26)

ऐसा चित्रण भी उपलब्ध है कि समुद्र मन्थन से वडवाग्नि के निकलते ही देवर्षि नारद ने मन्थन कार्य रोककर शिव की प्रार्थना करने का निर्देश दिया था किन्तु राग-द्वेष के कारण शिव से पराङ्मुख देवता मन्थन करते रहे। शीघ्र ही कालकूट विष निकला। ब्रह्मा सहित समस्त ब्रह्माण्ड उस हलाहल के द्वारा भस्मीभूत कर दिया गया। साक्षात् प्रकृति के पुत्र गणेश ब्रह्माण्ड से पृथक् होने के कारण स्वस्थ रहे। उन्होंने शिव की स्तुति कर सब कुछ पूर्ववत् करने की प्रार्थना की। तब शिव ने लिङ्गरूप में कालकूट को अपना ग्रास बना लिया जिससे भस्म बना सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड पुनः जीवित हो गया। जीवित हुए देव, दैत्य और ऋषियों ने विस्मय प्रकट किया तो विष्णु ने लिङ्ग का महत्त्व प्रतिपादित किया। उस समय शिव पार्वती के साथ प्रकट हुए तथा गणेश के सर्वप्रथम पूज्य होने की मर्यादा निर्धारित की। शिव के हलाहल का पान करने के कारण वे नीलकण्ठ हो गए। उस समय उन्होंने चन्द्रमा को सिर पर धारण कर लिया। (स्कन्द, माहे, केदार, 9/93-113, 10/51-86, 13/33)

समुद्र मन्थन से हलाहल निकलने के कारण भयभीत हुए देवगण के साथ ब्रह्मा ने शिव की शरण में जाकर उनकी जो स्तुति की उसमें से कतिपय नाम हैं – दिव्यचक्षुः, पिनाकहस्तः, वज्रहस्तः, त्रैलोक्यनाथः, भूतानां पतिः, साङ्ख्यः, योगः, भूतग्रामः,

देवादिदेव महादेव शिव

मन्मथाङ्गविनाशः, कालपृष्ठः, सुरेताः, रंहः, मातृणां पतिः, वृद्धः, मुक्तः, बलः, लोकत्रयैकवीरः, चन्द्रः, अग्रः, विप्रः, अनेकचक्षुः, रजः, सत्त्वः, अव्यक्तयोनिः, अनित्यः, नित्यानित्यः, व्यक्तः, अव्यक्तः, व्यक्ताव्यक्तः, चिन्त्यः, अचिन्त्यः, चिन्त्याचिन्त्यः, जगतामार्तिनाशः, प्रियनारायणः, उमाप्रियः, नन्दिवक्त्राङ्कितः, पक्षमासार्द्धमासः, ऋतुसंवत्सरः, बहुरूपः, वरुथी, शिखण्डी, धन्वी, रथी, यमी। (ब्रह्माण्ड, अनु. 25/62-78)

यह भी मान्यता है कि कालकूट विष से कालाग्नि के समान जो कान्ति निकली उससे गौरवर्ण विष्णु कृष्णवर्ण के हो गए। तब ब्रह्मा ने कहा कि उस विष के प्रभाव को वे, विष्णु अथवा अन्य देवगण सहन नहीं कर सकेंगे अतः उन्हें शिव की शरण में ही जाना होगा। तभी ब्रह्मा ने शिव से उस हालाहल को ग्रहण करने की प्रार्थना की। शिव के विषपान करते ही उनका कण्ठ कृष्णवर्ण का हो गया तो ब्रह्मा ने निवेदन किया, 'नीलकण्ठ के कारण आप अत्यधिक शोभायमान हो रहे हैं।' तभी से शिव उसी रूप में रहते हैं। उनका नीलकण्ठ दैत्य-दानवों के लिए विस्मयजनक बना। अस्तु, उस समय ब्रह्मा ने शिव की जो स्तुति की थी उसमें उनके निम्न अभिधान परिगणित हुए हैं — अनेकचक्षुः, पिनाकहस्तः, वज्रहस्तः, त्रैलोक्यनाथः, सुरारिसंहर्ता, तापसः, त्रिचक्षुः, ब्रह्म, भूतग्रामः, मन्मथाङ्गविनाशः, कालकालः, करालः, विरूपः, एकरूपः, वन्द्यः, मातृणां पतिः, बुद्धः, केवलः, कमलहस्तः, दिग्वासाः, लोकत्रयविधाता, वरुणः, अग्रः, उग्रः, विप्रः, अनेकचक्षुः, अव्यक्तयोनिः, अनित्यरूपः, नित्यानित्यः, चिन्त्यः, नरनारायणः, उमाप्रियः, नन्दिवक्त्राङ्कितः, पक्षमासार्द्धमासः, संवत्सरः, बहुरूपः, वरुथी, ध्वजी, रथी, यमी, ब्रह्मचारी, ऋग्यजुःसामवेदः। (वायु, 54/54-95)

प्रसङ्गतः उल्लेखनीय है कि दारुक दैत्य के वध के लिए पार्वती ने नीलकण्ठ शिव के कण्ठ से नीलिमा (कालिमा) लेकर कालिका का निर्माण किया था और उसे दारुक का वध करने के लिए भेजा था। भयङ्कर गर्जना करते हुए कालिका ने दारुक का वध कर दिया। इससे भी उनका क्रोध शान्त नहीं हुआ। अतः उन्होंने पुनः इतनी विकट गर्जना की जिससे वधिर बने तीनों लोक मृतप्रायः हो गए। देवी के उस प्रलयङ्करी रूप को शान्त करने के लिए महादेव शिव ने तुरन्त शिशु का रूप धारण किया और उस महाश्मशान में रोना प्रारम्भ कर दिया। उस रुदन को सुनकर कालिका का मातृत्वं प्रभावी हो गया अतः उन्होंने उक्त शिशु को अङ्ग में धारण कर उसे स्तनपान करवाना प्रारम्भ किया। शिशुरूपी शिव ने दूध के बहाने से कालिका के समस्त क्रोध का पान कर लिया जिससे वे सौम्य-शान्त हो गईं। तब शिव ने स्वरूप धारण करना चाहा किन्तु कालिका से भयाक्रान्त देवगण शिव से उसी रूप में रहने के लिए प्रार्थना करने लगे। इस पर शिव ने देवताओं को आश्चस्त किया कि उन्होंने कालिका को शान्त बना

देवादिदेव महादेव शिव

दिया है। तब भी सावधानी के कारण शिव ने अपने मुख से चौंसठ क्षेत्रपालों की सृष्टि की। सभी क्षेत्रपाल ऊर्ध्वकेशी, विरूपाक्ष तथा भयावह आकार वाले हैं। उनमें से कुछ स्वक्षेत्रपाल हैं यथा अघहारी, अह्वर, अपकुम्भ आदि तो कुछ पातालरक्षक हैं यथा ऋकार, हठकारी आदि। शेष विविध स्थलों के क्षेत्रपाल होते हैं जैसे महालक्ष घोरवन का और भयावह श्मशान का क्षेत्रपाल है। (स्कन्द, माहे, कौमा, 62/6-36)

इस कथानक का एक परिवर्तित रूप भी उपलब्ध है। तदनुसार दारुक नामक असुर को ब्रह्मा-विष्णु से अवध्य जानकर देवताओं ने शिव से दारुक वध की प्रार्थना की तो लीलापुरुष शिव ने प्रिया पार्वती से विश्वकल्याण के लिए दारुक का वध करने का आग्रह किया। तब पार्वती ने अपने केवल एक अंश से अर्धनारीश्वर शिव के शरीर में प्रवेश किया तथा शेष भाग से पार्वतीरूप में विराजमान रही अतः ब्रह्मा-विष्णु भी इस विषय में कुछ नहीं जान पाए। उस अंशरूप पार्वती ने शिव के शरीर में रहती हुई अवस्था में शिव के कण्ठगत विष से अपने शरीर का निर्माण किया। पार्वती के आविर्भूत होने की इच्छा को जानकर शिव ने उन्हें अपने तृतीय नेत्र से उत्पन्न किया। वे देवी ही काली कहलाई जिन्होंने दारुक का वध करने के उपरान्त भी अपने भयङ्कर क्रोध का त्याग नहीं किया। उनके क्रोध से जब सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड ही व्याकुल हो गया तब शिव ने उनको शान्त करने का अभिनव उपाय निकाला और तभी एक छोटा शिशु बनकर घोर श्मशान के मध्य रोना प्रारम्भ कर दिया। अग्निपुञ्ज अतः संहारकारिणी काली का वात्सल्य उस शिशु के रोदन से जाग उठा अतः शान्त जननी बन शिशुरूपी शिव को अङ्क में धारण कर वे उन्हें स्तनपान करवाने लगीं। लीलापुरुष शिव ने काली के स्तनों से निस्सृत दुग्ध के साथ उनके क्रोध का भी पान कर लिया। तभी से वह शिशु क्षेत्रों का रक्षक बन गया। इसके उपरान्त काली की प्रसन्नता के लिए शिव ने भूतेन्द्रों, प्रेतों एवम् अन्य गणों आदि के साहचर्य में ताण्डव नृत्य किया। उस नृत्य के आनन्द में मत्त देवी काली ने भी ताण्डव किया। (लिङ्ग, पूर्व, 106/19-26)

अस्तु ! पुनः हालाहल के प्रसङ्ग पर लौटा जाए— शिव द्वारा कालकूट विष को कण्ठ में धारण कर लेने पर देव-दैत्य-उरग-राक्षस आदि सभी ने मिलकर प्रसन्नचित्त हो शिव का निम्न नामों से स्तवन किया—गङ्गाजलास्फालितमुक्तकेशः, विष्णुः, चतुराननः, सूर्यः, रजनीकरः, भूमिः, सलिलम्, यज्ञः, नियमः, भूतम्, भविता, स्थूलः, सूक्ष्मः, सूक्ष्मस्य परः, वह्निः, पवनः, सर्वचराचरकर्ता, लोककर्ता, प्रलये गोप्ता। (वायु, 54/97-102)

इस सन्दर्भ में एक विवरण यह भी मिलता है कि सभी की प्रार्थना से दयालु शिव ने मयूर का रूप धारण कर उस कालकूट विष को अपने कण्ठ में धारण कर लिया था। (स्कन्द, आव, चतुर, 14/4-9)

देवादिदेव महादेव शिव

इससे पृथक् मान्यता के अनुसार स्वयं कालकूट ने समुद्र से बाहर आकर कहा, 'तुम सभी को मैं नष्ट कर दूंगा अतः मेरा पान कर लो।' तब सभी देव-दानव शिव की शरण में जाकर आत्मत्राण की प्रार्थना करने लगे। शिव ने लोकहित को लक्ष्य करके विषपान के लिए अपनी सम्मति प्रदान की और नन्दी पर आरुढ़ होकर सुरों, असुरों तथा अन्य गणों को सहगामी बनाकर क्षीरसागर के तट पर जा पहुंचे जहां कालकूट का उद्भव हुआ था। उस समय शिव के तृतीय नेत्र की ज्वाला से उनका जटभार पिङ्गलवर्ण का हो रहा था। सागर तट पर एक छायायुक्त स्थान पर स्थित होकर बाएं हाथ से विषपात्र उठाकर शिव ने उस महाविष का पान कर लिया। तब ब्रह्मा आदि सभी दर्शक वर्ग ने शिव से अनुरोध किया कि कुन्दपुष्प तुल्य उनके कण्ठ में भ्रमरों की पंक्ति के समान श्यामवर्णी विष शोभायमान हो रहा है अतः शिव उसे कण्ठ में ही धारण किये रहें, कण्ठाधःकरण न करें। शिव प्रशंसकों के प्रस्ताव को स्वीकार करते हुए नीलकण्ठ बनकर पुनः कैलास में लौट आए। (मत्स्य, 250/43-60)

समुद्र-मन्थन के सन्दर्भ में एक अन्य घटना को प्रस्तुत करना अप्रासङ्गिक नहीं होगा। अमृत के वितरण को लेकर दानवों में वैमनस्य होने पर विष्णु ने मनोरमा नारी मोहिनी का रूप धारण किया तथा दैत्यों को अमृत से वञ्चित कर देवों को ही अमृत प्रदान किया। अपना उद्देश्य पूर्ण होने पर मोहिनीमूर्ति त्याग कर विष्णु पुनः स्वरूप में आ गए किन्तु शिव उस रूप से अत्यधिक मुग्ध हुए अतः उन्होंने विष्णु से पुनः वही रूप दिखलाने का आग्रह किया। विष्णु ने शिव की इच्छा-पूर्ति के लिए पुनः मोहिनी रूप धारण कर लिया। शिव उस रूप से अत्यधिक कामोन्मत्त हो गए अतः वे मोहिनी को पकड़ने के लिए गौरी पार्वती को छोड़कर मोहिनी के समीप जा पहुंचे। मोहिनी उनके करपाश से मुक्त हो पलायन करने लगी तो शिव उसके पीछे भागे। कामावेश में शिव का वीर्य स्खलित होकर पृथ्वी पर जहां-जहां गिरा वहां-वहां शिवलिङ्ग प्रकट हुआ एवं वह स्थान सोने का क्षेत्र बन गया। (अग्नि, 3/17-20)

समुद्र-मन्थन के उपरान्त दैत्यों की पराजय तथा अपने अमृतपान से देवगण शिवमाया से अभिमानी हो गए तथा अपने-अपने बल का दम्प करने लगे। तब शिव यक्षरूप में उनके समीप गए तो देवों ने उनकी उपेक्षा की। यक्ष ने उन्हें समझाना चाहा कि निर्माण एवं हरण करने वाले देवता महादेव शिव हैं जिन्हें वे भूल गए हैं। इस पर भी देवता सचेत नहीं हुए तो यक्षरूपी शिव ने देवों को एक तिनका देकर उसे काटने का आदेश दिया। समस्त अस्त्र-शस्त्रों से भी उसे काटने में असफल देवों को तब आकाशवाणी ने ही प्रबोधित किया कि सर्व-गर्व अपहारक शिव ही कर्ता, पालक एवं संहारक हैं। उन्हीं के बल से अन्य बली होते हैं। इससे देवगण प्रबुद्ध हुए और तभी

देवादिदेव महादेव शिव

सभी शिव को पहचान कर उनके समक्ष प्रणत हुए। (शिव, शत, 16/16-33)

शिव के भक्तों में देवताओं के अतिरिक्त प्रत्येक योनि तथा प्रत्येक श्रेणी के भक्त मिलते हैं यथा दैत्यगुरु शुक्राचार्य, महान् ऋषि परशुराम हों या वेदव्यास। असुर, दैत्य, दानव, मानव, पक्षी आदि कोई भी तो शिवभक्त की तालिका से बाहर नहीं है। उनके संक्षिप्त विवरण तथा उनके द्वारा की गई शिवस्तुति से ही इस कथन की पुष्टि हो जाती है। वे ऐसे देवादिदेव हैं जो भक्त के लिए अन्य देवों से विग्रह करने में भी सङ्कोच नहीं करते हैं।

राजा वीरमणि

अपने भक्त वीरमणि राजा के लिए उन्होंने राम के अश्वमेधीय अश्व की रक्षक-सेना के साथ-साथ राम से भी युद्ध किया था, यह तो पूर्व में ही बताया जा चुका है। इसी क्रम में माली और सुमाली राक्षस सहोदरों का वृत्तान्त भी वर्णनीय है। सुकेश राक्षस और देववती गन्धर्वी के पुत्र माली और सुमाली थे। ब्रह्मा से अजेयता का वर प्राप्त कर दोनों उद्वण्ड हो गए थे। (राम, उत्तर, 51/1-40) उन्होंने एक बार सूर्य के अस्त हो जाने पर सूर्य के समान ही प्रकाशित होना आरम्भ कर दिया। शिव के वर से मदोन्मत्त उन दोनों पर इस कारण सूर्य देव ने रुष्ट होकर त्रिशूल से प्रहार किया। अपने भक्तों के अमङ्गल को सहन करने में असमर्थ शिव तुरन्त उनके निकट गए और उन दोनों को जीवित कर दिया। (ब्रह्मवै, श्रीकृष्ण, पूर्व, 48/2-5) शिव ने इसके उपरान्त सूर्यदेव पर प्रहार कर उन्हें भी मूर्च्छित कर दिया। (वही, गण, 18/6-11) यह भी माना जाता है कि शिव-लिङ्ग की पूजा करके ही माली और सुमाली ने सिद्धि प्राप्त की थी। (स्कन्द, भादे, केदार, 8/29-32) और शिव से देवों, मनुष्यों और अस्त्र-शस्त्रों से अवध्यता का वर प्राप्त किया था। (भविष्य, उत्तर, 132/13-16)

शुक्राचार्य

शिव के भक्तों में से एक विशिष्ट नाम है भृगु ऋषि के पुत्र शुक्र का जो काव्य अथवा उशना भी कहलाते हैं। (वायु, 65/74) गुरु अङ्गिरा ऋषि से असन्तुष्ट शुक्र गौतम ऋषि की शरण में गए तो उन्होंने महादेव का स्तवन करने का निर्देश दिया। स्वयं को असहाय मानकर शुक्र ने शिव के समक्ष स्वयं को पूर्णतया समर्पित कर दिया तो शिव ने शुक्र को उनका अभीष्ट वर दिया मृतसंजीवनी विद्या। उसके साथ ही अन्य वैदिक और लौकिक विद्याएं भी उन्होंने उन्हें प्रदान की जिनके आधार पर शुक्र दैत्यों के गुरु बन गए। (ब्रह्म, 95/3-30) यह संजीवनी विद्या शिव, कार्तिकेय, पार्वती तथा गणेश के अतिरिक्त अन्यो को अज्ञात थी। (स्कन्द, काशी, पूर्व, 16/2-3)

देवादिदेव महादेव शिव

वामन भगवान् द्वारा दैत्यराज बलि को पाताल भेज देने के उपरान्त दैत्यों के लिए शिव से विजय-मन्त्र लाने के लिए शुक्र ने पुनः शिव-आराधना की। (मत्स्य, 47/71-84) उसी मध्य शुक्र ने घनाधिपति कुबेर के हृदय में योगबल से प्रवेश किया और उसके समस्त धन का हरण कर लिया। इस कारण शिव त्रिशूल से उसका वध करने आए तो शुक्र सूक्ष्मरूप धरकर शिव के त्रिशूल के ऊपरी भाग पर बैठ गए। शिव ने उन्हें पहचाना और तभी त्रिशूल को नीचे झुकाया और शुक्र को अपने मुंह में डाल लिया जिससे शुक्र ने शिव के उदर में पहुंचकर सर्वत्र विचरण किया। वे जीर्ण न होकर यथावत् रहे। इसी मध्य शिव ध्यानस्थ हो गए तो शुक्र को उनके उदर में ही रहना पड़ा। अनन्योपाय होकर उशाना ने शिव को प्रसन्न करने के लिए नाना नामों से शिव का स्तवन किया तो शिव ने प्रसन्न होकर उन्हें अपने लिङ्ग-मार्ग से बाहर आने की अनुमति प्रदान की। शिव के शुक्र से निकलने के कारण तभी से भृगु पुत्र उशाना शुक्र कहलाने लगा। शिव का क्रोध तब भी शान्त नहीं हुआ था अतः वे उन्हें मारने को उद्यत हुए किन्तु पार्वती ने पति शिव के लिङ्ग से निकलने के कारण शुक्र को अपना पुत्र स्वीकार कर लिया। तब शिव ने प्रसन्न मन से शुक्र को अभीष्ट स्थान में जाने की अनुमति प्रदान की। (महा, शान्ति, 278/7-36)

ऐसा वर्णन भी मिलता है - शुक्र को मारने के लिए अपने आराध्य शिव को उद्यत हुए देखकर निर्भीक शुक्र ने कहा, 'सर्वविद्याविशारद मुझ ब्राह्मण को मारने से ब्रह्महत्या पुनः आपका पीछा करेगी।' शिव को यह बात समझते देर न लगी क्योंकि ब्रह्मा के पांचवें सिर को काटने पर ब्रह्महत्या ने उनका पीछा अत्यधिक कठिनाता से छोड़ा था अतः शिव ने शुक्र को तो मारा नहीं पर अपने तृतीय नेत्र से कृत्या को उत्पन्न किया जो जलन्धर का वध होने तक शुक्र को अपनी योनि में धारण किये रही। इससे शुक्र मृतक दैत्यों को जीवित नहीं कर पाए। (पद्म, उत्तर, 17/72-88)

शिव का परमाशक्ति का आह्वान करने का भी वर्णन उपलब्ध है। शिव ने उनसे कहा, 'आप अग्नि के मध्य से केलीमय रूप धारण करके आई हैं अतः त्रिभुवन में आपका नाम केलीश्वरी होगा।' शुक्राचार्य ने उन्हीं केलीश्वरी देवी की आराधना करके अमृतवाणी विद्या प्राप्त कर ली। (स्कन्द, नागर, 149/100-101)

शिव के साथ शुक्र का विरोध तब भी हुआ जब चन्द्रमा ने गुरु बृहस्पति की पत्नी तारा को हर लिया और शुक्राचार्य की शरण में रहने लगा। शिव ब्रह्मा को लेकर शुक्र के समीप गए और चन्द्रवध तथा दैत्य-विनाश का अपना निश्चय शुक्र को बताया तो शुक्र ने वाक्चातुरी से शिव को शान्त किया, 'मैं आपका शरणागत हूं, चन्द्र मेरा शरणागत है। मैं शरणागत का त्याग नहीं कर सकता और ब्राह्मणवध करने में आपका

देवादिदेव महादेव शिव

भी पौरुष नहीं है।' तब ब्रह्मा ने ही मध्यस्थता करके तारा को बृहस्पति के हाथों सौंप दिया। (ब्रह्मवै, श्रीकृष्ण, उत्तर, 80/33-37)

यह भी माना जाता है कि अन्धकासुर के शिव के साथ हुए युद्ध में उशना बारम्बार मृतक दैत्यों को सञ्जीवनी विद्या से जीवित करने लगे तो शिव ने उन्हें एक फल के समान उठाकर मुंह में डाल दिया। वहां शिवमन्त्र का जप करते हुए उशना एक शुक्र (वीर्य) के रूप में शिव लिङ्ग से बाहर आ गये तब पार्वती के साथ शिव ने भी उन्हें पुत्ररूप में स्वीकार कर लिया। (शिव, रुद्र, युद्ध, 47/7-53, 49/9-44; वामन, 69/11-42) उस समय प्रसन्न शिव की उदारता से कृतकृत्य उशना अर्थात् शुक्र ने उनकी जो स्तुति की उसके नाम हैं - देवेशः, सुरासुरनमस्कृतः, भूतभव्यमहादेवः, हरितपिङ्गललोचनः, बलः, बुद्धिरूपी, वैयाघ्रवसनच्छदः, आरण्यः, त्रैलोक्यप्रभुः, ईश्वरः, हरः, हरितनेत्रः, युगान्तकरणः, अनलः, गणेशः, लोकपालः, महाभुजः, महाहस्तः, शूली, महादंष्ट्री, कालः, महेश्वरः, अव्ययः, कालरूपी, नीलग्रीवः, महोदरः, गणाध्यक्षः, सर्वात्मा, सर्वभावनः, सर्वगः, मृत्युहन्ता, पारियात्रसुव्रतः, ब्रह्मचारी, वेदान्तगः, तपोन्तगः, पशुपतिः, व्यङ्गः, शूलपाणिः, वृषकेतुः, हरिः, जटी, शिखण्डी, लकुटी, महायशः, भूतेश्वरः, गुहावासी, वीणापणवतालवान्, अमरः, दर्शनीयः, बालसूर्यनिभः, श्मशानवासी, भगवान्, उमापतिः, अरिन्दमः, भगस्याक्षिपाती, पूषादशननाशनः, क्रूरकर्तकः, पाशहस्तः, प्रलयकालः, उल्कांमुखः, अग्निकेतुः, मुनिः, दीप्तः, विशाम्पतिः, उन्नयनः, जनकः, चतुर्थकः, लोकसत्तमः, वामदेवः, वाग्दाक्षिण्यः, भिक्षुरूपी, जटी, जटिलः, शक्रहस्तप्रतिस्तम्भकः, वसूनां स्तम्भः, क्रतुः, क्रतुकरः, कालः, मेधावी, मधुकरः, चलः, वानस्पत्यः, समाश्रमपूजितः, जगद्धाता, जगत्कर्ता, पुरुषः, शाश्वतः, ध्रुवः, धर्माध्यक्षः, त्रिवर्त्मा, भूतभावनः, त्रिनेत्रः, बहुरूपः, सूर्यायुतसमप्रभः, देवः, सर्वतूर्यनिनादी, सर्वबाधाविमोचनः, बन्धनः, सर्वधारी, धर्मात्तमः, पुष्पदन्तः, भागः, सर्वहरः, द्वारी, भीमः, भीमपराक्रमः। (शिव, रुद्र, युद्ध, 49/1)

शितिकण्ठः, कनिष्ठः, सुवर्चा, लेलिहानः, काव्यः, वत्सरः, अन्धसः पतिः, करालः, हर्यक्षः, वरदः, संस्तुतः, सुतीर्थः, रंहः, उष्णीषी, सुवक्त्रः, वसुरेताः, तपः, चित्रवासाः, ह्रस्वः, मुक्तकेशः, सेनानी, रोहितः, कविः, राजवृक्षः, तक्षकक्रीडनः, सहस्रशिराः, श्वेतः, पुरुषः, अर्कः, बली, आज्यपः, सुतृप्तः, सुवस्त्रः, भार्गवः, तारः, स्वक्षः, क्षपणः, ताम्रः, विश्वरूपशिवः, वरिष्ठः, ज्येष्ठः, मध्यमः, वास्तोष्पतिः, पिनाकः, मुक्तिः, केवलः, मृगव्याधः, वक्षः, भीषणः, बहुनेत्रः, धुर्यः, वीरः, मृत्युः, इषुमान्, चित्रः, दुन्दुभ्यः, एकपादः, बुद्धिदः, आरण्यः, गृहस्थः, यतिः, ब्रह्मचारी, साङ्ख्यः, योगः, व्यापी, दीक्षितः, अनाहतः, भव्येशः, यमः, रोधाः, चेकितानः, ब्रह्मिष्ठः, महर्षिः, चतुष्पदः, मेध्यः, रक्षी, शीघ्रगः, शिखण्डी,

देवादिदेव महादेव शिव

करालः, दंष्ट्री, विश्ववेधा, भास्वरः, प्रतीतः, सुदीप्तः, सुमेधाः, क्रूरः, अविकृतः, सौम्यः, मुख्यः, धार्मिकः, शुभः, अवध्यः, अमृतः, नित्यः, शाश्वतः, व्यापृतः, विशिष्टः, भरतः, साक्षी, क्षेमः, सहमानः, सत्यः, कर्ता, परशुः, शूली, दिव्यचक्षुः, सोमपः, आज्यपः, धूमपः, उष्मपः, शुचिः, परिधानः, सद्योजातः, पिशिताशः, सर्वः, मेघः, विद्युतः, व्यावृत्तः, वरिष्ठः, भरितः, तरक्षुः, त्रिपुरघ्नः, तीर्थः, अवक्रः, रोमशः, तिग्मायुधः, व्याख्यः, सुसिद्धः, पुलस्तिकः, रोचमानः, चण्डः, स्फीतः, ऋषभः, व्रती, युञ्जमानः, ऊर्ध्वरेताः, असुरघ्नः, स्वघ्नः, मृत्युघ्नः, यज्ञियः, कृशानुः, प्रचेताः, वह्निः, निर्मलः, रक्षोघ्नः, पशुघ्नः, अविघ्नः, श्वसितः, विभ्रान्तः, महान्तः, अणुः, दुर्गमः, कृष्णः, जयन्तः, लोकानामीश्वरः, अनाश्रितः, वेध्यः, समत्वाधिष्ठितः, हिरण्यबाहुः, व्याप्तः, महः, सुकर्मा, प्रसह्यः, ईशानः, सुचक्षुः, क्षिप्रेषु सदश्वः, शिवः, मोक्षदः, धीमान्, महाकायः, दीप्तः, रोदनः, सहः, दृढधन्वी, कवची, रथी, बरुथी, भृगुनाथः, शुक्रः, गह्वरेष्ठः, वेधा, अमोघः, प्रशान्तः, सुमेधाः, वृषः, विश्वः, प्रणवः, ऋग्यजुः सामा, स्वाहा, स्वधा, वषट्कारात्मा, मन्त्रात्मा, त्वष्टा, धाता, कर्ता, चक्षुः श्रोत्रमयः, कर्मात्मा, वसुः, साध्यः, रुद्रादित्यसुरः, विषः, मारुतः, देवात्मा, अग्नीषोमविधिज्ञः, पशुमन्त्रौषधः, स्वयंभुः, अपूर्वप्रथमः, ब्रह्मात्मा, आत्मेशः, आत्मवश्यः, सर्वेशः, अतिशयः, सर्वभूताङ्गभूतः, भूतात्मा, निर्गुणः, गुणज्ञः, व्याकृतः, निरुपाख्यः, मित्रः, साङ्ख्यात्मा, पृथिवी, अन्तरिक्षः, दिव्यः, महः, जनः, तपः, सत्यः, लोकात्मा, अव्यक्तः, महान्, भूतादिः, इन्द्रियः, आत्मज्ञः, विशेषज्ञः, आत्मलिङ्गः, सूक्ष्मः, इतरः, बुद्धः, विभुः, मोक्षात्मा, ब्रह्मण्यः। (मत्स्य, 47/128-168)

शितिकण्ठः, सुराद्यः, सुवर्चा, लेलिहानः, लेह्यः, वत्सरः, जगत्पतिः, ऊर्ध्वरोमा, हर्यक्षवरदः, संस्तुतः, सुतीर्थः, रहः, उष्णीषी, सुवक्त्रः, वसुरेताः, निस्वः, मुक्तकेशः, कविः, राजवृद्धः, तक्षकक्रीडनः, सहस्रामलचक्षुः, सहस्रकुक्षिः, श्वेतः, क्षपणः, ताम्रः, विश्वरूपशिवः, वर्षः, मध्यमः, धामा, ईषुमान्, चित्रः, रोहितः, दुन्दुभ्यः, एकपादः, अर्हः, बुद्धः, मृगव्याधः, वास्तोष्पतिः, आरण्यः, गृहस्थः, साङ्ख्यः, ध्यानी, दीक्षितः, अन्तर्हितः, तप्यः, केवलः, रोधा, चैकितानः, ब्रह्मिष्ठः, महर्षिः, चतुष्पादः, वर्मा, बीभत्सः, परिधानः, पिशिताशः, मेघः, वैद्युतः, लोकानामीश्वरः, अनामयः, इध्मः, एकचक्षुः, श्रेष्ठः, महाकल्पः, रोदनः, हसः, दृढधन्वी, वरुथी, भृगुनाथः, गह्वरेष्ठः, दिग्वासः, भगघ्नः, सुधः, मन्त्रात्मा, स्रष्टा, क्षपणः, भूतभयेशः, कर्मात्मा, रुद्रादित्याशिवन्, अग्निषोमविधिज्ञः, पशुमन्त्रौषधः, दक्षिणावभृथः, अहिंसः, लोभः, सुवेषः, अनिशः, सर्वभूतात्मभूतः, पृथिवी, तन्मात्रः, तत्त्वात्मा, अलिङ्गः, इतरः, नित्यात्मा। (ब्रह्माण्ड, मध्य.उप. 73/162-194)

शुक्राचार्य की कठोर तपस्या से सन्तुष्ट शिव से अजेयता तथा धनप्राप्ति का वर प्राप्त कर शुक्राचार्य ने निम्न नामों से शिव की स्तुति की - शितिकण्ठः, सुरूपः,

देवादिदेव महादेव शिव

सुवर्चा, रिरिहाणः, लोपः, वत्सरः, जगत्पतिः, कपर्दी, ऊर्ध्वरोमा, हयः, करणः, संस्कृतः, सुतीर्थः, देवदेवः, रंहा, उष्णीषी, सुवक्त्रः, सहस्राक्षः, मीढुष्, वसुरेतः, रुद्रः, तपः, चीरवासाः, ह्रस्वः, मुक्तकेशः, सेनानी, रोहितः, कविः, राजवृद्धः, तक्षकक्रीडनः, गिरिशः, अर्कनेत्रः, यती, जाम्बवः, सुवृत्तः, सुहस्तः, धन्वी, भार्गवः, सहस्रबाहुः, सहस्रचक्षुः, अमलचक्षुः, सहस्रकुक्षिः, सहस्रचरणः, सहस्रशिराः, बहुरूपः, वेधा, भवः, विश्वरूपः, श्वेतपुरुषः, निषङ्गी, कवची, सूक्ष्मः, क्षपणः, ताम्रः, भीमः, उग्रः, शिवः, बभ्रुः, पिशङ्गः, पिङ्गलः, अरुणः, महादेवः, शर्वः, विश्वरूपः, हिरण्यः, शिष्टः, श्रेष्ठः, मध्यमः, पिनाकी, इषुमान्, चित्रः, रोहितः, दुन्दुभ्यः, एकपादः, अर्हः, बुद्धः, मृगव्याधः, सर्पः, स्थाणुः, भीषकः, बहुरूपः, उग्रः, त्रिनेत्रः, ईश्वरः, कपिलः, एकवीरः, मृत्युः, त्र्यम्बकः, वास्तोष्पतिः, पिनाकः, शङ्करः, आरण्यः, गृहस्थः, यतिः, ब्रह्मचारी, साङ्ख्यः, योगः, ध्यानी, दीक्षितः, अन्तर्हितः, शर्वः, मान्यः, माली, बुद्धः, शुद्धः, मुक्तः, केवलः, रोधा, चेकितानः, ब्रह्मनिष्ठः, महर्षिः, चतुष्पादः, मेध्यः, धर्मी, शीघ्रगः, शिखण्डी, कपालः, दंष्ट्री, विश्वमेधा, अप्रतिघातः, दीप्तः, भास्करः, सुमेधाः, क्रूरः, विकृतः, बीभत्सः, शिवः, सौम्यः, पुण्यः, धार्मिकः, शुभः, अवध्यः, अमृताङ्गः, नित्यः, शाश्वतः, कट्यः, शरभः, शूली, त्रिचक्षुः, सोमपः, आज्यपः, धूमपः, उष्मपः, शुचिः, रेरिहाणः, सद्योजातः, मृत्युः, पिशिताशः, खर्वः, मेघः, वैद्युतः, व्याश्रितः, श्रविष्ठः, भारतः, अन्तरिक्षी, क्षेमः, सहमानः, सत्यः, तपनः, त्रिपुरघ्नः, दीप्तः, चक्रः, रोमशः, तिग्मायुधः, मेध्यः, सिद्धः, पुलस्तिकः, रोचमानः, खण्डः, स्फीतः, ऋषभः, भोगी, युजमानः, शान्तः, ऊर्ध्वरेताः, अघघ्नः, मखघ्नः, मृत्युः, यज्ञियः, कृशानुः, प्रचेतः, बह्वी, किशलः, सिकत्यः, प्रसन्नः, वरेण्यः, चक्षुः, क्षिप्रगुः, सुधन्वः, प्रमेध्यः, पिवः, रक्षोघ्नः, पशुघ्नः, विघ्नः, शयनः, विभ्रान्तः, महान्तः, अन्तिः, दुर्गमः, दक्षः, जघन्यः, लोकानामीश्वरः, अनामयः, ऊर्ध्वः, संहत्याधिष्ठितः, हिरण्यबाहुः, सत्यः, शमनः, असिकल्पः, माघः, रीरिण्यः, एकचक्षुः, श्रेष्ठः, वामदेवः, ईशानः, धीमान्, महाकल्पः, दीप्तः, रोदनः, हसः, दृढधन्वा, कवची, रथी, वरुथी, भृगुनाथः, शुक्रः, वह्निरिष्टः, धीमान्, अघः, अघसंसः, विप्रियः, प्रियः, दिग्वासः, कृत्तिवासा, भगघ्नः, पशूनां पतिः, भूतानां पतिः, प्रणवः, ऋग्यजुः सामा, स्वधा, सुधः, वषट्कारतमः, अनन्तात्मा, सष्टा, धाता, होता, हर्ता, क्षपणः, भूतभव्यभवः, कालात्मा, वसुः, सत्यः, त्यागः, शमः, विश्वः, मरुत्, देवात्मा, अग्नीषोमत्विगिज्यः, पशुमन्त्रौषधः, दक्षिणावभृथः, यज्ञात्मा, तपः, सत्यः, त्यागः, शमः, अर्हिसः, अलोभ्यः, सुवेशः, अतिशः, सर्वभूतात्मभूतः, लोकात्मा, पृथिवी, अन्तरिक्षः, दिवः, महः, जनः, तपः, सत्यः, लोकात्मा, अव्यक्तः, महान्, भूतः, इन्द्रियः, तन्मात्रः, महान्, तत्त्वात्मा, नित्यः, लिङ्गः, सूक्ष्मः, चेतनः, शुद्धः, विभुः, नित्यात्मा । (वायु. 97/160-203)

शुक्र द्वारा की गई स्तुति से प्रसन्न होकर शिव ने शुक्र को विष्णु-पार्षदों के लिए

देवादिदेव महादेव शिव

भी दुर्लभ वर दिया—सूर्य और अग्नि से अधिक दीप्तिमान ग्रह का पद। (शिव, रुद्र, युद्ध, 50/39-46)

यह विवरण भी उपलब्ध है कि शिव के द्वारा पुत्र रूप में स्वीकृत भार्गव शुक्र ने काशी जाकर शिव-लिङ्ग की स्थापना की तथा अष्टमूर्ति शिव की अष्टपद्यात्मक स्तुति की, उसमें परिगणित शिव के नाम हैं — दिनमणिः, सदागतिः, स्तब्धप्रभञ्जनः, विवर्धितसर्वजन्तुः, सन्तोषिताहिकुलः, सर्वगतः, विश्वैकपावकः, भुवनजीवनः, जगदन्तरात्मा, अमृतः, पावकः, शमदः, पानीयरूपः, जगत्पवित्रः, विचित्रः, सुचरित्रः, विश्वनाथः, आकाशरूपः, विश्वम्भरात्मकः, तमोरिः, हिमजाहिभूषः, परपरः, आत्मस्वरूपः, हरः, सर्वान्तरात्मनिलयः, प्रतिरूपः, परमात्मतनुः, अष्टमूर्तिः, उमाभिवन्द्यः, वन्द्यातिवन्द्यः, विश्वजनीनमूर्तिः, प्रणतप्रणीतः, सर्वार्थसार्थः, परमार्थः। (स्कन्द, काशी, पूर्व, 16/101-109)

परशुराम

शिव के एक अन्य प्रसिद्ध भक्त हैं परशुराम। मुनि जमदग्नि तथा रेणुका के पुत्र परशुराम (वायु, 91/91; विष्णु, 4/7/16) ने पिता के आदेश पर माता और सहोदरों का वध कर दिया था। यद्यपि पिता के वर से वे सभी पुनरुज्जीवित हो गए थे तथापि स्वयं को मातृहन्ता और भ्रातृघातक मानते हुए उन्होंने शिव की शरण में जाकर उनकी स्तुति आदि की। तब शिव ने उन्हें श्रेष्ठ परशु दिया और निष्पाप और अजेय रहने का वर भी दिया था। (महा, अनु, 18/9-13) उनके तीन सौ वर्षों के तप के उपरान्त शिव ने उन्हें पाशुपत अस्त्र प्रदान किया था। (स्कन्द, प्रभा, अर्बुद, 49/4-5) शिव का परशुराम के प्रति अपत्यस्नेह था तभी दैत्य-दानवों के साथ युद्ध करते हुए उन्हें जो घाव लगे थे शिव ने उन पर स्नेहस्पर्श किया जिससे घाव तत्काल भर गए। शिव ने उस समय भी उन्हें नानाविध वर दिए। (महा, कर्ण, 24/150-152)

शिव की आज्ञा से देवासुर सङ्ग्राम में शिव प्रदत्त परशु से समस्त असुरों और दैत्यों को मार कर पुनः तपोलीन हुए परशुराम के समक्ष शिव जब अपने गणों के साथ उपस्थित हुए तो परशुराम ने भक्तिविह्वल होकर उनका स्तवन किया। उससे सन्तुष्ट हो शिव ने उन्हें वर मांगने को कहा तो परशुराम ने शिव से समस्त अलौकिक अस्त्रों के साथ ब्रह्माण्ड का श्रेष्ठ अस्त्रधारी होने का वर भी मांगा। शिव ने उन्हें मन्त्र सहित चारों प्रकार के अस्त्र दे दिए। श्वेत अश्वों सहित अप्रतिहत गतिवाला रथ तथा कभी समाप्त न होने वाले बाणों सहित दो तूणीर, विजय नामक धनुष, अमेघ कवच आदि उन्हें दिए। उस समय परशुरामकृत शिव की स्तुति में परिगणित नाम हैं — सकलाध्यक्षः, सकलाधीशः, सकलावासः, सकलदेवारिगणनाशः, सकललोकैकपाली, पाशी,

कालकूटविषाशी, त्रिपथगाफेनभासितार्द्धन्दुमौली, महाभोगीन्द्रहारः, भस्मसंच्छन्नदेहः, गिरिजाकुचकाशमीरविरञ्जितमहोरः, योगिध्येयस्वरूपः, अचिन्त्यतेजाः, स्वभक्तहृदयाम्भोजकर्णिकामध्यवर्त्ती, सकलागमसिद्धान्तसाररूपः, निखिलयोगेन्द्रबोधनः, अखिलव्याप्तमहिमा, स्थूलसूक्ष्मात्मा, विश्वविज्ञानरूपी, सुरासुरश्रेणिमौलिपुष्पार्चिताङ्गी, रजोगुणात्मा, विश्वसृष्टिविधायी, जगदादिः, विश्वात्मा, लोकस्थितिव्यापारकारी, सत्त्वविज्ञानरूपः, तमोगुणविकारः, जगत्संहारकारी, परापरविद्, बुद्धिबुद्धिप्रबोधः, बुद्धीन्द्रियविकारी। (ब्रह्माण्ड, मध्य, उप, 25/2-30)

एक बार शिव परशुराम की भक्ति की परीक्षा लेने के लिए व्याध के रूप में उनके निकट गए तथा व्यर्थ ही वाद-विवाद में उन्हें उलझा लिया। व्याध ने जब उन्हें मातृहन्ता आदि कहा तो परशुराम को उनके व्याध होने पर सन्देह हुआ। पद्मासन लगाकर ध्यान के माध्यम से शिव को पहचान कर परशुराम ने भक्तिभाव से उनका स्तवन किया। शिव की आज्ञा से परशुराम जब तीर्थयात्रा करके लौट आए तो शिव ने उन्हें दिव्य अस्त्र देकर देवशत्रु दैत्य-दानवों का विनाश करने को कहा। परशुराम ने अपने आराध्य के आदेश का पालन किया और राक्षसवध करके पुनः तपोलीन हो गए। (वही, मध्य, उप, 23/17-81, 24/1-86)

क्षत्रिय-विध्वंस के गुरु-दायित्व का निर्वाह करने के उपरान्त ब्रह्मा की आज्ञा से परशुराम शिव को नमन करने के लिए कैलाश पर्वत पर गए और अपने आराध्य के समीप भीतर जाने लगे तो गणेश ने उन्हें रोक दिया। सामान्य विवाद ने युद्ध का रूप धारण कर लिया जिसका परिणाम था गणेश के एक दांत का टूटना। माता पार्वती ने इस पर शिव के अत्यधिक प्रिय पात्र- उनके पुत्र तुल्य शिष्य परशुराम के इस कृत्य के लिए शिव पर आक्षेप लगाया और पुत्र सहित गृहत्याग के लिए उद्यत हो गई। शिव की स्थिति अत्यधिक विचित्र थी- एक ओर प्राणवल्गुभा पत्नी का क्रोध और दूसरी ओर प्रियपात्र परशुराम का भविष्य। अनन्योपाय होकर शिव ने कृष्ण का स्मरण किया। तब राधा सहित कृष्ण ने आकर समझा बुझाकर पार्वती को शान्त किया और शिव ने परशुराम को अजेयता का वर दिया। (वही, मध्य, उप, 42/1-56)

यह भी माना जाता है कि कार्तवीर्य द्वारा पिता का वध तथा माता का पति की अनुगामीनी बनने पर बालक परशुराम पितृघातक के वध की अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण करने के लिए ब्रह्मा के आदेश से नमन करने के लिए पहले शिवलोक गए और वहां सभा में बैठे हुए शिव के समक्ष पहुंचे। उस समय शिव के साथ माता पार्वती, गणेश और स्कन्द भी थे। परशुराम ने भक्तिभाव से शिवस्तुति की और शिव के चरण कमलों में गिर गए। तब शिव ने प्रसन्न होकर उन्हें शुभाशीष प्रदान किया। मान्यता है कि परशुरामकृत उस

देवादिदेव महादेव शिव

शिवस्तुति का भक्तिपूर्वक पाठ करने वाला निष्पाप होकर शिवलोक जाता है। उस स्तुति में परिगणित शिव नाम हैं — अक्षयबीजः, निरीहकः, वाग्बुद्धिमनसां दूरः, सारात्सारः, ज्ञानमात्रेण साध्यः, सिद्धैर्निषेवितः, आद्यन्तमध्यहीनः, विश्वतन्त्रः, अतन्त्रः, स्वतन्त्रः, तन्त्रबीजकः, ध्यानासाध्यः, दुराराध्यः, अतिसाध्यः, भास्करस्वरूपः, शशिरूपः, हुताशनः, जलरूपः, वायुरूपः, संहर्ता, भयङ्करः। (ब्रह्मवे, गण, 29/सम्पूर्ण)

अन्धकासुर

शिव का एक प्रमुख गण है भृङ्गिरिति जो पूर्व में अन्धक नामक असुर था। उसका जन्म शिव से ही हुआ था तथापि वह शिव विरोधी हो गया था। एक दिन मन्दराचल पर क्रीड़ा करती हुई पार्वती ने शिव की आंखों को अपनी हथेलियों से बन्द कर दिया था जिससे चारों ओर अन्धकार छा गया। पार्वती के हाथों से गिरते मद जल और शिव के ललाट से गिरते स्वेद कण के मिश्रण से भयानक मुख वाला क्रोधी प्राणी उत्पन्न हुआ। शिव ने पार्वती से कहा, 'यह अन्धक है जिसकी उत्पत्ति का कारण तुम ही हो अतः इसकी रक्षा करो।' पार्वती ने उसे पुत्र मान लिया। अनन्तर पुत्र-प्राप्ति के लिए तप करते हिरण्याक्ष को शिव-पार्वती ने अन्धक को पुत्ररूप में दे दिया। (शिव, रुद्र, युद्ध, 42/13-40)

एक मान्यता के अनुसार अन्धकासुर से भयभीत इन्द्र शिव की शरण में गए तो उन्हें अभय देकर शिव ने महाकाल का रूप धारण करके एक पैर पृथिवी पर टिकाया। उनके उस पैर के भार से वह स्थान दबकर जलाशय बन गया जो शिवपद नामक पवित्र तीर्थ बन गया। (स्कन्द, आव, अव, 36/13-20)

शिव ने अन्धक की कठोर तपस्या से प्रसन्न होकर उसे स्वयं अपने तथा विष्णु के अतिरिक्त अन्य सभी देवों से अजेय रहने का वर दिया। (वही, आव, रेवा, 45/7-38) शिव ने उसे अजेयता के साथ जल से न गलने और अग्नि से न जलने का भी वर दिया। (वामन, 9/3-4) वर से मत्त अन्धक ऐसा दुराचरी हुआ कि पार्वती का ही अपहरण करने को उद्यत हुआ। उस समय नन्दी ने उसे रोका और पार्वती शिव के समीप जाकर ही सुरक्षित हुई। (पद्म, सृष्टि, 81/10-20)

यह भी माना जाता है कि जब कामान्ध अन्धक पार्वती का हरण करने आया तो विष्णु वहां प्रकट हुए एवं समस्त देवताओं के साथ मिलकर अन्धक के साथ युद्ध करके पराजित हुए। तब विष्णु को यह बोध हुआ कि अन्धक को केवल शिव ही पराभूत कर सकते हैं अतः उन्होंने निम्न अभिधानों से शिव का स्तवन किया जिससे प्रसन्न होकर वे अन्धक का वध कर दें — अनन्तः, हर्ता सर्वलोकानाम्, कालात्मा,

देवादिदेव महादेव शिव

ऐश्वरीतनुः, महादेवः, कालमूर्तिः, सनातनः, अग्निः, सर्वभावानामन्तः, सर्वगः, अन्तकः, लोककर्ता, धाता, हरिः, अव्ययः, ब्रह्मा, महादेवः, धाम परमम्, पद्म परमम्, ओङ्कारमूर्तिः, योगात्मा, त्रयीनेत्रः, त्रिलोचनः, महाविभूतिः, विश्वेशः, अनन्तः, जगत्पतिः, कालाग्निः, रुद्रः। (कूर्म, पूर्व, 16/131-189)

एक बार अन्धक शिव के आवास कैलाश पर्वत पर जाकर उसे बारम्बार हिलाने लगा जिससे पर्वत के शिखर धराशायी होने लगे। इस पर शिव ने बाणों से आच्छादित कर उसे नीचे गिरा दिया। तब क्रुद्ध होकर उठकर अन्धक शिव को अपने बगल में दबाकर उन्हें पीड़ित करने लगा जिससे शिव मूर्च्छित हो गए। मूर्च्छा भङ्ग होने पर शिव ने उसे अपने त्रिशूल की नोक से ऊपर उठाकर घुमाना प्रारम्भ किया। इससे उसके शरीर से जो रक्तबिन्दु गिरे उनसे अनेक अन्धक उत्पन्न होने लगे। शिव ने देवी चामुण्डा का स्मरण किया जिन्होंने उन नूतन असुरों का वध कर दिया। तब शिव के प्रति भक्तिभाव का उदय होने से अन्धक ने शिव का स्तवन किया जिससे प्रसन्न होकर शिव ने उसे अपना गण भृङ्गीश बना लिया। (स्कन्द, आव, रेवा, 48/2-90)

यह भी माना जाता है कि शिव के साथ वीरतापूर्वक युद्ध करने पर भी अन्ततः शिव द्वारा अन्धकासुर को अपने शूल से बीँध लेने पर वह असुर सहस्र वर्षों तक उसी में बिद्ध रहा तथा मृत्यु को प्राप्त नहीं हुआ। अन्ततोगत्वा शिव की शरण ग्रहण कर उसने उनका जो स्तवन किया उसमें प्रयुक्त नाम हैं—शम्भुः, भवनाशहेतुः, देववरः, भूमूर्तिः, जलमूर्तिः, अग्निमूर्तिः, नभोमूर्तिः, अर्कमूर्तिः, सोममूर्तिः, यज्जामूर्तिः, अष्टमूर्तिः, भवभावनः, भवमयहरः, हरः, परमः उदारः, सुखकरणः, निखिलसुरसारः, जितमरुत्, अभिमतवितरणपारः, भक्तवत्सलः। (पद्म, सृष्टि, 46/2-91)

एक विवरण के अनुसार स्वयं शिव ने अन्धकासुर का वध करने के लिए त्रिशूल मारा जो उस असुर के रक्त से रञ्जित हो गया। तब वह त्रिशूल हाटकेश्वर क्षेत्र में भोगवती नदी में प्रविष्ट हुआ तथा स्वयं को प्रक्षालित कर पुनः शिव के हाथों में लौट आया। उधर चामुण्डा द्वारा अन्धक से उत्पन्न अन्धकों को नष्ट कर देने पर शिव ने प्रसन्न होकर चामुण्डा को शिवा बना दिया। (स्कन्द, आव, अव, 37/4-5, 38/4-5, 34)

यह भी माना गया है कि ब्रह्मा से अमरत्व-प्राप्त अन्धक द्वारा अमरावती पर अधिकार कर लेने पर वृषभारुद्ध शिव ने अन्धक के साथ सहस्र वर्ष पर्यन्त युद्ध करके उसे अपने त्रिशूल से बीँध दिया किन्तु वह तब भी स्वस्थ रहा तो शिव ने उसे त्रिशूल से भेदकर आकाश में छत्रवत् धारण कर लिया। सहस्र वर्ष तक इसी अवस्था में रहने के पश्चात् उसे शिव महिमा का बोध हुआ तो उसने दैत्यभाव का त्याग कर अमरावती

देवादिदेव महादेव शिव

से अपना अधिकार समेट लिया और शिव का भक्त हो गया। शिव ने उसे भृङ्गिरीटि नाम से अभिहित कर नन्दी के समान अपने प्रिय गणपति का पद दे दिया। (वही, नागर, 228/23-40, 229/1-30)

अन्धक असुर को पराजित कर शिव ने जब उसे अपने त्रिशूल पर स्थापित कर दिया तब निष्पाप हुए अन्धक ने निम्न नामों से शिव की स्तुति की - भगवान्, एकः, ईशतत्त्वम्, पुरातनः, पुण्यम्, अनन्तरूपः, कालः, कविः, योगवियोगहेतुः, दंष्ट्राकरालः, दिविनृत्यमानः, हुताशवक्त्रः, ज्वलनार्करूपः, सहस्रपादाक्षिशिरोभिर्युक्तः, रुद्रः, आदिदेवः, अमरपूजिताङ्गी, विभागहीनः, अमलतत्त्वरूपः, अग्निरेकः, बहुधाभिपूज्यः, बाह्यादिभेदैरखिलात्मरूपः, पुराणः पुरुषः, आदित्यवर्णः, तमसःपरः, अन्तकः, योगिगणानुजुष्टः, अन्तरात्मा, बहुधानिविष्टः, देहादिविशेषहीनः, आत्मतत्त्वः, परमात्मा, अक्षरः, ब्रह्मपरः, पवित्रः, आनन्दरूपः, प्रणवाभिधानम्, ईश्वरः, वेदविदां प्रसिद्धः, स्वयम्भुवः, ईशः, विशेषहीनः, इन्द्ररूपः, वरुणः, अग्निरूपः, हंसः, प्राणः, मृत्युः, अन्तः, यज्ञः, प्रजापतिः, भगवान्, एकरूपः, नीलग्रीवः, नारायणः, जगतामनादिः, पितामहः, प्रपितामहः, वेदान्तगुह्यः, सदाशिवः, परमेश्वरः, परः, तमसः परस्तात्, परमात्मा, पञ्चनवान्तरायः, त्रिशक्त्यातीतः, निरञ्जः, सहस्रशक्त्यासनसंस्थितः, त्रिमूर्तिः, अनन्तपदः, आत्ममूर्तिः, जगन्निवासः, जगन्मयः, जनानां हृदि संस्थितः, फणीन्द्रहारः, मुनीन्द्रसिद्धार्चितपादपद्मः, ऐश्वर्यधर्मासनसंस्थितः, परान्तः, भवोद्भवः, सहस्रचन्द्रार्कसहस्रमूर्तिः, मनः, सोमः, सुमध्यमः, देवः, हिरण्यबाहुः, अग्निचन्द्रार्कविलोचनः, अम्बिकायाः पतिः, मृडः, गुह्यः, गुह्यान्तरायः, वेदान्तविज्ञानविनिश्चितः, त्रिकालहीनः, अमलधामधामा, महेशः, शिवः। (कूर्म, पूर्व, 16/194-206)

यह भी विवरण उपलब्ध है कि शिव से पराजित अन्धक ने वहां से पालयन कर शिवरूप धारण कर पार्वती के समीप गमन किया किन्तु देवी ने उसे पहचान लिया। तब शिव ने उसे शूल से विद्ध कर दिया। शिव ने अनुग्रह करके अन्धक का दैत्यभाव समाप्त कर दिया जिससे उसने शिव तथा पार्वती के चरणों में भक्ति की याचना की और शिव की स्तुति की। शिव ने प्रसन्न होकर उसे अपना गण बना लिया और पार्वती का पुत्र बनाकर उसे पार्वती के हाथों सौंप दिया। उससे भक्तिविह्वल हो अन्धक ने माता पार्वती का भी स्तवन किया। उस समय शिव के त्रिशूल से विद्ध अन्धक ने शिव के नेत्रों से उत्पन्न अग्नि द्वारा शुद्ध होने पर निष्पाप होकर निम्न नामों से उनकी स्तुति की - भैरवः, भीममूर्तिः, त्रिलोकगोप्ता, शितशूलधारी, विशार्द्धबाहुः, भुजगेशहारः, सुरासुरैर्वन्दितपादपीठः, त्रैलोक्यमातुर्गुरुः, वृषाङ्कः, त्रियुगः, त्रिधर्मा, त्रिपुष्करः, त्रय्यारुणिः, त्रिश्रुतिः, अव्ययात्मा, त्रिणाचिकेतः, त्रिपदप्रतिष्ठः, षडङ्गवित्,

देवादिदेव महादेव शिव

विषयेष्वलुब्धः, महाजयः, मङ्गल्यः, ध्रुवः, प्राणाधिपः, गीर्वाणपतिः, अव्यग्रः, त्रैविद्यः, जितक्रोधः, जितारिः, विजितेन्द्रियः। (वामन, 69/78-95, 70/52-93)

यह भी माना गया है कि अपने शूल से गूँथे हुए अन्धक के दैत्यभाव त्याग देने पर शिव ने उसे वर देना चाहा तो उसने शिवभक्ति की ही याचना की तो शिव ने उसे दुर्लभ भक्ति प्रदान की और अपना गाणपत्य भी दिया। शिव के सम्मानित गणपति बने हुए अन्धक को इन्द्र आदि देवों ने प्रणाम किया। (लिङ्ग, पूर्व, 93/20-26)

ऐसा विवरण भी उपलब्ध है कि शिव के पाशुपत अस्त्र से घायल अन्धक के रक्त से जो सहस्र अन्धक उत्पन्न हुए, उन्हें मारने के लिए शिव ने केलीश्वरी देवी को आदेश दिया। शुक्राचार्य ने केलीश्वरी देवी को प्रसन्न कर लिया जिससे स्वस्थ अन्धक पुनः शिव से युद्ध करने लगा। (स्कन्द, नागर, 149/68-88, 151/1-2) शिव ने उसे शूल से बाँधकर कहा, 'मैं तुम्हें मारना नहीं चाहता। पापहीन होकर तुम मेरे गणत्व को प्राप्त करो।' उस समय अन्धक ने वर मांगा, 'जो व्यक्ति त्रिशूल में फंसे मेरे साथ आपकी प्रतिमा बनाकर स्थापित करे आप उसे मुक्ति प्रदान करें।' शिव द्वारा गाणपत्य प्रदान किये जाने पर अन्धक प्रसन्नचित्त से शिव-पार्वती के समक्ष मधुर गीत गाने लगा। उसका रटन (स्वर) भृङ्ग-रटन (भौरों के गुनगुनाने) के समान कर्णमधुर था अतः त्रिपुरारि शिव ने उसे भृङ्गीरट नाम प्रदान किया। (वही, नागर, 151/36-42) अन्धक की स्तुति से प्रसन्न शिव ने उसे पार्वती की भक्ति का वर भी प्रदान किया। तब शिव के अपने घर पहुंचने पर पार्वती आक पुष्प लेकर उनके स्वागत में बाहर आई तो शिव ने अन्धक को उनका पुत्र बनाकर पार्वती के हाथों सौंप दिया। (वामन, 69/78-95)

वामन पुराण के अनुसार शिव का जब अन्धक के साथ युद्ध हो रहा था तब अन्धक ने एक बार अवसर प्राप्त करके शिव के सिर पर गदा से प्रहार किया। इस आघात से ब्रह्माण्ड के आधार शिव तो स्थिर रहे किन्तु उनके सिर के चारों ओर से रक्त प्रवाहित होने लगा। उस रक्त की पूर्व धारा से विद्याराज, दक्षिण दिशा से कृष्णकाय कालराज, पश्चिम दिशा से कामराज, उत्तर दिशा से सोमराज और घाव के मध्य भाग से स्वच्छन्दराज नामक पांच भैरव उत्पन्न हुए। अन्त में शिव ने जब त्रिशूल से बाँधकर अन्धक को ऊपर उठाया तो प्रवाहित होते अन्धक के रक्त से शिव भी रक्तरञ्जित हो गए। इस परिश्रम से उनके ललाट पर उत्पन्न स्वेदकणों से एक कन्या और चेहरे के स्वेद कणों से एक बालक उत्पन्न हुआ। शिव ने उस कन्या का नाम चर्विका और बालक का कुज रखा। शिव के वर से कुज कालान्तर में ग्रहाधिपति बना। (वामन, 67/35-48)

गुणनिधि अथवा कुबेर

शिवभक्त गुणनिधि का उल्लेख भी प्रासङ्गिक प्रतीत होता है। गुणनिधि शिव का एक परम भक्त था। शिव ने कृपालु होकर उसे अभीष्ट दर्शन करने की दृष्टि प्रदान की तो उसने नेत्र खोलकर सर्वप्रथम शिव के समीप आसीना देवी पार्वती को देखा। शिव के इतने निकट उन्हें देखकर मुग्धभाव से वह सोचने लगा कि पार्वती ने अवश्य अत्यधिक कठोर तप किया होगा जो उन्हें शिव का नैकट्य प्राप्त हुआ है। देवी पार्वती ने गुणनिधि की उस मुग्ध दृष्टि का अनुचित अर्थ लगाया अर्थात् उसे अपने प्रति कुदृष्टि समझ लिया और कुपित होकर अपने प्रभाव से उसके एक नेत्र को नष्ट कर दिया। पार्वती ने जब अपना अनुभव और कृत्य शिव को बताया तब शिव ने वस्तुस्थिति को स्पष्ट करते हुए समझाया, 'गुणनिधि तुम्हारा पुत्र है। वह तो अपनी दृष्टि से तुम्हारे वैभव का ही गुणगान कर रहा था।' इसके उपरान्त शिव ने गुणनिधि को यक्षों का अधिपति होने और अपनी निकटता का वर दिया तथा पार्वती की शरण में जाने का उपदेश भी। पार्वती ने भी पूर्ण वत्सलता से अपने नवप्राप्त पुत्र को स्वीकार किया और उसका नाम कुबेर रखा। (शिव, रुद्र, सती, 19/9-31)

बाणासुर

परमेश्वर शिव आशुतोष और भक्तवत्सल ही नहीं, वे भक्त के लिए कुछ भी कर सकते हैं, अपने आराध्य से विरोधिता भी। इसी का ज्वलन्त दृष्टान्त है परम विष्णु-भक्त प्रह्लाद का प्रपौत्र, विरोचन का पौत्र तथा बलि का पुत्र बाण। वह एक ऐसा विरल सौभाग्यशाली असुर था जिसे शिव का संरक्षण, स्नेह तथा आत्मीयता प्रचुर मात्रा में प्राप्त थी। एक बार बाण ने वाद्य बजाकर और ताण्डव नृत्य करके शिव को प्रसन्न किया और तभी उसे शिव से सहस्र भुजाओं की प्राप्ति हुई थी। बाण का यह असुरभाव ही था कि सहस्र भुजाओं के गर्व से गर्वित उसने अपने परम आराध्य शिव से ही कह दिया, 'त्रिलोक में आपके समान कोई श्रेष्ठ योद्धा नहीं है। मैं अपना समकक्ष किसी योद्धा को नहीं देखता हूँ क्योंकि वे सभी मुझसे भीत होकर पलायन कर जाते हैं।' इस पर अपने स्नेहपात्र बाण को शिव ने धिक्कारते हुए शीघ्र भुजाओं के कटकर गिरने का शाप दे दिया। (वही, रुद्र, युद्ध, 51/19-20, 52/5-15) यह भी माना जाता है कि बाण ने गर्व से भरकर शिव से कहा था, 'यदि ऐसा युद्ध प्राप्त हो जो मेरी भुजाओं को चरितार्थ कर सके तभी उचित होगा अन्यथा तो मेरी भुजाएं भारमात्र हैं।' उसकी इस उद्वेगता के उत्तर में शिव ने कहा, 'तुम्हारी मयूर पताका भङ्ग होने पर तुम्हारी युद्ध-अभिलाषा पूर्ण होगी।' (ब्रह्म, 206/2-4; विष्णु, 5/33/1-4) बाण को शिव ने अपना

देवादिदेव महादेव शिव

कवच भी प्रदान किया था। (ब्रह्मवै, ब्रह्म, 19/49-51)

बाणासुर नित्यप्रति सुसंयत होकर शिवस्तुति करता था। वह जिस स्तोत्र का पाठ करता था, शिवांश दुर्वासा भी उसी स्तोत्र का पाठ करते थे। उस स्तोत्र का भक्तिपूर्वक पाठ करने वाले के लिए संसार में कुछ भी दुर्लभ नहीं माना जाता है। उस स्तुति में प्रयुक्त शिवनाम हैं - सुराणां सारः, सुरेशः, नीललोहितः, योगीश्वरः, योगबीजम्, योगिनां गुरोर्गुरुः, ज्ञानानन्दः, ज्ञानरूपः, ज्ञानबीजम्, सनातनः, तपसां फलदाता, सर्वसम्पदादाता, तपोरूपः, तपोबीजम्, तपोधनधनम्, वरः, वरेण्यः, वरदः, सिद्धगणैः इड्यः, वरैःइड्यः, भुक्तिमुक्तीनां कारणम्, नरकार्णवतारणम्, आशुतोषः, प्रसन्नास्यः, करुणामयसागरः, हिमचन्दनकुन्देन्दुकुमुदाम्भोजसंनिभः, ब्रह्मज्योतिस्वरूपः, भक्तानुग्रहविग्रहः, बहुरूपकः, जलरूपः, अग्निरूपः, आकाशरूपः, वायुरूपः, चन्द्ररूपः, सूर्यरूपः, महत्प्रभुः, भक्तजीवनम्, भक्तानुग्रहकारकः, अपरिच्छिन्नः, वाङ्मनसोपरः, व्याघ्रचर्माम्बरधरः, वृषभस्थः, दिगम्बरः, त्रिशूलपट्टिशधरः, सस्मितः, चन्द्रशेखरः। (ब्रह्मवै, ब्रह्म, 19/55-79)

शिव ने जब देवों को उद्धिग्न करने वाले तारकाक्ष आदि के साथ त्रिपुर का दहन कर दिया तो बाणासुर ने अपने आराध्य की प्रशंसा करते हुए निम्न नामों से उनकी स्तुति की थी- सर्वहरः, भवभीतिभयार्तिहरः, कुसुमायुधदेहविनाशकरः, प्रमदाप्रियकामकः, पार्वतीशः, परमार्थसारः, विरचितभीमभुजङ्गहारः, निर्मलभस्मविलिप्तगात्रः, मन्त्रमूलः, जगदेकपात्रः, विषधरकपिलजटाकलापः, भैरवविधृतपिनाकचापः, विषमनयनपरिमुक्तसङ्गः, धृतगाङ्गतरेङ्गः, जगतां प्रशस्तः, सुरववेशः, सुरलोकसारः, सर्वसकलनिर्दग्धसारः, कीर्तनीयः, जगतां पवित्रः, वृषाङ्कः, बहुविधचरित्रः, विरचितनरकङ्कालमालः, वरवृषभगमनः, सकललोकदुरितानुशमनः, सिद्धसुरासुरविनतचरणः, रौद्रभवजलधितरणः, सुरेश्वरमाननीयः, सूक्ष्मरूपः, सञ्चिन्तनीयः, दग्धत्रिपुरः, विश्वसत्त्वः, सकलशास्त्रपरमार्थतत्त्वः, दुःखबोधसंसारतारः, कलिकलुषमहार्णवघोरतारः, सुरासुरदेवगणेशः, हयवानरसिंहगजेन्द्रमुखः, अतिह्रस्वस्थूलसुदीर्घतमः, निरञ्जनः, साम्बः, सुलोचनकान्तिहरः, ब्रह्मरूपः, इन्द्रः, सुरनाथः, क्षितिः, दीक्षा, आकाशम्, गुरुः। (स्कन्द, आव, रेवा, 28/84-92)

अस्तु! शिव ने जो शीघ्र युद्ध प्राप्त करने की भविष्यवाणी की थी, वह बाण के जीवन में वास्तव में सार्थक हो गई। अपनी पुत्री उषा के साथ सम्बद्ध कृष्ण-पौत्र अनिरुद्ध को अपने भवन में आबद्ध करने के कारण बाण का कृष्ण के साथ भयावह युद्ध हुआ। उस समय स्वयं महादेव शिव पार्वती, कार्तिकेय, गणेश, भैरवी, भद्रकाली, भैरव तथा शिवगणों को लेकर आ गए और उन्होंने बाण को युद्ध से विमुख करने का

देवादिदेव महादेव शिव

प्रयास किया। बाण के युद्ध से विमुख न होने पर शिव अपने भक्त की रक्षा के लिए उद्यत हुए और तभी पुत्र कार्तिकेय पर सेनापति का दायित्व सौंप कर युद्ध करने लगे। (ब्रह्मवै, श्रीकृष्ण, उत्तर, 115/9-13, 33-50) शिव ने अपने प्रमुख गण नन्दी को बाण का सारथि बना दिया। जब कृष्ण ने बाण के वध के लिए सुदर्शन चक्र उठा लिया तो स्वयं शिव ने कृष्ण से बाण को प्राण-दान दिलवाया। (विष्णु, 5/33/27-46) शिव ने कृष्ण से बाण की केवल भुजाओं को ही काटने का अनुरोध किया और कृष्ण को यह भी कह दिया कि वे शिव पर जृम्भण अस्त्र का प्रयोग करके यह कार्य सम्पन्न करें। (शिव, रुद्र, युद्ध, 53/18-58) शिव ने पूर्व में बाण को मृत्युहीन रहने का वर दिया हुआ था अतः उन्होंने कृष्ण के हाथों न केवल उसके प्राणों की रक्षा की, अपितु उसे बाण के अभीष्ट अक्षय गाणपत्य, उषा तथा अनिरुद्ध के पुत्र का शोणितपुर में आधिपत्य, विष्णु आदि के प्रति भक्तिभाव, दुष्ट दैत्य भाव का विनाश और शिव के प्रति अनाविल भक्ति का भी वर दिए। (वही, रुद्र, युद्ध, 55/18-42, 56/2-19; ब्रह्म, 206/38-46)

यह भी माना जाता है कि युद्ध के मध्य शिव ने कृष्ण से कहा, 'यह बाणासुर अपराधी नहीं है। मेरा आश्रय प्राप्त करके यह अभिमानी हो गया है। मैंने ही बाण को वर दिया था, अतएव मैं ही इसके लिए क्षमाप्रार्थी हूँ।' इस पर कृष्ण ने उत्तर दिया, 'आपने जिसे अभय दिया मैं भी उसे अभय दे रहा हूँ। मैं जो हूँ, आप भी वही हैं। अविद्यामोहित जन ही हम दोनों में भेद मानते हैं।' (विष्णु, 5/33/44-48)

यह विवरण भी उपलब्ध है कि बाण को आधार बनाकर शिव का कृष्ण के साथ अति भयानक युद्ध हुआ जिसमें शिव-वध के लिए कृष्ण द्वारा चलाए वैष्णवास्त्र का शिव ने पाशुपत अस्त्र से निवारण किया। कृष्ण के मोहनास्त्र के वशीभूत हो शिव मोहित हो गए। जब वे पुनः सचेत हुए तो क्रोधाभिभूत होने से उनके सिर से वीरभद्र प्रकट हुआ था। तब शिव के माहेश्वर ज्वर का कृष्ण के वैष्णव ज्वर के साथ संघर्ष हुआ था। (स्कन्द, आव, अव, 49/27-42)

वृकासुर

शिव के भक्त बाण से सर्वथा विपरीत था शिवभक्त दैत्य वृक। उसने कठोर तप करके शिव को सन्तुष्ट किया और उनसे वर पाया कि वह जिस किसी के भी सिर पर हाथ रख देगा, वह तत्क्षण भस्म हो जाएगा। वर प्राप्त करते ही कृतघ्नता की पराकाष्ठा स्वरूप वृक ने शिव के सिर पर ही हाथ रखने का प्रयास किया तो शिव को वहां से पलायन करना पड़ा। वृक को अपने पीछे आते देखकर शिव ने कृष्ण का स्मरण किया जिन्होंने अपनी माया से वृक को ऐसा मोहित किया कि उसने अपने ही सिर पर हाथ

देवादिदेव महादेव शिव

रख दिया जिससे वह भस्म हो गया और तब शिव निश्चिन्त हुए। (ब्रह्मवै, श्रीकृष्ण, पूर्व, 36/25-39)

त्रिपुराधिपति

त्रिपुर के विध्वंसक शिव त्रिपुरारि हैं। वस्तुतः कल्याणकारी और कल्याणनामा शिव जहां भक्तों के पालक, उनके संरक्षक हैं, वहीं दुष्टों के दलनकर्ता तथा उनके संहारक भी हैं। शिव के द्वारा विनष्ट होने वाले असुरों में से अत्यधिक विख्यात हैं तीन असुर भाई तारकाक्ष, कमलाक्ष और विद्युन्माली जो तारक असुर के पुत्र थे। ब्रह्मा से उन असुरों ने ऐसे तीन पुरों का वर प्राप्त किया था जिनमें समस्त समृद्धियां थीं और वे देवों द्वारा भी अमेद्य थे। केवल विशेष समय में ही यदि तीनों पुर मिलित हों, तभी शिव उन त्रिपुरों को विनष्ट कर सकते थे। मय ने उन त्रिपुरों का निर्माण किया था। (महा, कर्ण, 24/4-18; शिव, रुद्र, युद्ध, 1/7-78)

इस वर प्राप्ति तथा अमृतपूर्ण कुम्भ के स्वामी बनकर जब उन असुरों ने अत्यधिक उपद्रव करना प्रारम्भ किया तब समस्त देवताओं ने उनके अत्याचारों से सन्तुष्ट होकर शिव की शरण में आकर आत्मत्राण के लिए शिवस्तुति की। उस स्तवन में प्रयुक्त शिवनाम हैं — देवातिदेवः, धन्वी, अतिमन्युः, प्रजापतिमखन्धः, स्तुतः, स्तुत्यः, स्तूयमानः, मृत्युः, विलोहितः, नीलग्रीवः, अमोघः, मृगाक्षः, प्रवरायुधयोधी, दुर्वारणः, शुक्रः, ब्रह्म, ब्रह्मचारी, अप्रमेयः, नियन्ता, चर्मवासाः, तपोनित्यः, व्रती, कृत्तिवासा, कुमारपिता, प्रवरायुधधारी, प्रपन्नार्तिविनाशः, ब्रह्मद्विट्सङ्घघाती, गवांपतिः, ससैन्यः, उग्रतेजाः। (महा, कर्ण, 24/23-51)

सर्वसृष्टिविधायी, स्थितिकृत्, हरस्वरूपः, भूतसंहारकारी, अमिततेजाः, अवस्थारहितः, महाभूतात्मभूतः, महाभारसहिष्णुः, तृष्णाहरः, निर्वैराकृतिः, भूरितेजाः, महादैत्यमहारण्यनाशी, दाववह्निः, दैत्यद्रुमकुठारः, महादनुजनाशः, सर्वास्त्रधारकः, रुद्ररूपी, मार्गातीतः, गुणस्वरूपः, त्रिलोकीनन्दनः, विषादी, कामारिः, विषभक्षणः, नारायणस्वरूपः, नारायणतनूद्भवः, महानरकहारी, पापापहारी, क्षणादिकालरूपः, स्वभक्तबलदायी, नानारूपः, दैत्यचक्रविमर्दी, सहस्रावयवः, धर्मरूपः, सत्त्वम्, सत्त्वात्मा, वेदवेद्यस्वरूपः, वेदस्वरूपः, वेदवक्त्रः, सदाचाराध्वगम्यः, सदाचाराध्वगामी, सत्यमयः, सत्यगम्यः, ब्रह्मजः, तपसा फलदायी, स्तुतिसम्प्रीतचेताः, श्रुत्याचारप्रसन्नः, स्तुत्याचारप्रियः, चतुर्विधस्वरूपः जलस्थलजरूपी। (शिव, रुद्र, युद्ध, 2/12-55)

उक्त स्तवन से प्रसन्न होकर शिव ने उन दैत्यों को वध्म मानते हुए देवताओं को परामर्श दिया कि वे शिव के आधे तेज से सम्पन्न होकर स्वयं ही अपने शत्रुओं का वध

देवादिदेव महादेव शिव

कर दें। देवता इससे भीत हो गए कि उनसे शिव का तेज सम्भाला नहीं जाएगा अतः उन्होंने अनुरोध किया कि शिव ही देवताओं का आधा तेज ग्रहण कर लें। शिव ने इस प्रस्ताव को मान लिया और तभी स्वयं तेजस्वी शिव देवों के तेज से सम्पन्न होकर अप्रतिरोध्य हो गए। तब स्वयं ब्रह्मा शिव के सारथि बने। धनुष पर प्रत्यक्षा चढ़ाकर उसे पाशुपत अस्त्र से युक्त कर शिव ने उन तीनों पुरों के एकत्रित होने के लिए ध्यान किया क्योंकि वर के अनुसार विशेष मुहूर्त में उन तीनों पुरों के एक सीध में आकर एकत्रित होने पर ही उन्हें नष्ट किया जा सकता था, अन्यथा नहीं। शिव के ध्यानस्थ होने पर काल की प्रेरणा से वे तीनों पुर एकत्रित हो गए। तब शिव ने धनुष की डोर खींची और तीनों पुर भस्म होकर पश्चिम समुद्र में निमज्जित हो गए। (महा, कर्ण, 24/56-121)

शिव द्वारा त्रिपुर विनष्ट करने से पूर्व हुआ यह था कि देवताओं की प्रार्थना पर शिव ने उनसे स्पष्ट कह दिया था, 'जब तक त्रिपुर के अध्यक्ष पुण्यात्मा एवं भगवद् भक्त हैं, कोई बुद्धिमान् उनका वध नहीं करेगा। मेरे भक्तों को मैं नहीं मार सकता हूँ।' (शिव, रुद्र, युद्ध, 3/1-6) इसके उपरान्त देवों की प्रवेष्टा से यतिराज के प्रभाव से त्रिपुर से समस्त वेदधर्म दूर कर दिये गए। दैत्यों की अधर्म-निष्ठा को जानकर शिव उनका वध करने को सम्मत हुए थे। (वही, रुद्र, युद्ध, 5/53-54, 6/35)

यह विवरण भी उपलब्ध है कि तब विश्वकर्मा ने संसार के हित के लिए विष्णु की आज्ञा से शिव के लिए विशेष रथ का निर्माण किया। ब्रह्मा उनके सारथि, देवगण रश्मि धारण करने वाले और ओङ्कार कशा बने। उस रथ के चार अश्व चारों वेद हुए। अपने गणों से परिवृत शिव उस रथ पर आरूढ़ हुए। (वही, रुद्र, युद्ध, 7/43-44, 8/24-27, 9/3, 39) त्रिपुर को एकत्रित करने के लिए शिव ने गणेश का पूजन किया तो वे तीनों पुर एक सीध में आए। तभी पाशुपात अस्त्र से वे पुर भस्म हुए। उल्लेखनीय है कि तारकासुर ने भस्म होने से पूर्व शिव को स्मरण किया एवं जन्म जन्मान्तर में शिव के प्रति भक्ति की याचना की। (वही, रुद्र, युद्ध, 10/11-34)

यह चित्रण भी उपलब्ध है कि गर्वित शिव स्वयं को सर्वसर्वा और असुरों को नगण्य मानकर युद्ध करने गए तो उस निराधार स्थान में एक मास तक शिव का उन असुरों के साथ युद्ध हुआ। बली असुर ने शिव के अस्त्र काट दिये, रथ तोड़ दिया तथा अन्य अस्त्रों को भी नष्ट कर दिया और अन्त में उन्हें भूतल पर पटक दिया। उस समय शिव ने विष्णु द्वारा दिये हुए स्तोत्र का पाठ किया और भक्तिपूर्वक उनका आवाहन किया। शिवप्रेमी विष्णु ने तत्काल वृषभ का रूप धारण कर शिव को सींगों से उठाकर अपने ऊपर आरूढ़ किया और शत्रुनाशक अपना कवच और शूल शिव को

देवादिदेव महादेव शिव

प्रदान किया। तभी शिव ने असुरों को नष्ट किया और साथ ही अपने गर्व के नष्ट हो जाने से विष्णु का बारम्बार स्तवन किया। (ब्रह्मवै, श्रीकृष्ण, पूर्व, 36/42-54)

शिव ने त्रिपुर का विध्वंस करने के लिए देवताओं को अपना तेज बेना चाहा परन्तु उन्होंने उसे सम्भालने में असमर्थ होने के कारण उस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया तथा शिव को अपना अपना आधा तेज ग्रहण करने के लिए सम्मत करा लिया। उस समय से ही देवों के तेज से अत्यधिक तेजस्वी बने हुए शिव महादेव कहलाने लगे। (महा, कर्ण, 24/115-121)

जलन्धर

शिव के हाथों मुक्ति प्राप्त करने वाला सर्वाधिक प्रसिद्ध असुरराज है जलन्धर। शिव के अंश अर्थात् उनके क्रोधोद्भूत नेत्राग्नि से वह उत्पन्न हुआ था। स्वयं ब्रह्मा ने ही उसे शिव के अतिरिक्त अन्यो से अवध्य होने का वर दिया था। समुद्र में उत्पन्न हुआ दानवाधिपति समुद्र को पिता मानता था अतः समुद्र-मन्थन करने वाले देवराज पर उसने आक्रमण कर दिया था। (शिव, रुद्र, युद्ध, 15/4-7, 25-64; स्कन्द, वैष्णव, कार्तिक, 15/4-20)

जलन्धर का नाम जालन्धर भी मिलता है जिसे ब्रह्मा ने अजेयता और स्वर्ग से पाताल तक भोग करने का वर दिया था। (पद्म, उत्तर, 3/45-52) युद्ध में विष्णु को भी विजित करने वाले जलन्धर को विनष्ट करने के लिए ही स्वयं देवर्षि नारद ने उसे शिव-वल्लभा पार्वती के प्रति प्रलुब्ध किया जिससे जलन्धर ने शिव को सन्देश भिजवाया कि स्त्रीरत्न पार्वती का वास्तविक अधिकारी वह स्वयं है, भिक्षुक शिव नहीं। (शिव, रुद्र, युद्ध, 18/5-47, 19/5, 26-27; स्कन्द, वैष्णव, कार्तिक, 17/8-19)

शिव ने जब जान लिया कि जलन्धर सामान्य अस्त्र-शस्त्रों से मारा नहीं जा सकता तब देवताओं के अंशों से अस्त्रों का निर्माण करवाया। जलन्धर के साथ युद्ध में वीरभद्र के पराभूत हो जाने पर शिव रणक्षेत्र में आए किन्तु जलन्धर ने रुद्रमोहिनी माया से उन्हें आच्छादित कर दिया और स्वयं शिव का रूप धरकर पार्वती के पास जा पहुंचा किन्तु पार्वती ने उसे पहचान लिया और वहां से अन्तर्धान हो गई। (वही, वैष्णव, कार्तिक, 18/6-15, 20/17-26)

यह विवरण भी मिलता है कि शिव ने जलन्धर के ध्वजा, छत्र और धनुष को काट दिया तथा जलन्धर की गदा के जब दो टुकड़े कर दिए तब शिव को अपनी माया से मोहित कर वह शिवरूप धारण कर पार्वती के निकट गया किन्तु उसकी दुराशा दुराशा ही रही एवं पार्वती वहां से चली गई। (शिव, रुद्र, युद्ध, 22/2-41) सर्वज्ञ

देवादिदेव महादेव शिव

शिव भी जलन्धर द्वारा निर्मित माया-पार्वती के निष्प्राण देह को देखकर पत्नी के प्रति प्रेमाधिक्य के कारण उसे ही सत्य मान विलाप करने लगे तो ब्रह्मा ने उसे आसुरी माया बताया। सामयिक रूप में मोहग्रस्त हुए शिव को ब्रह्मा ने प्रबोधित करते हुए कहा, 'आप तो शोक, मोह, माता-पिता, कलत्र, पुत्र आदि सम्पकों से असम्पृक्त हैं। आप अज हैं, किसी जनक से आपका जन्म नहीं हुआ है। आप एक में ही अनेक हैं। ऋषि गण आपको ध्येय मान आपके पादमूल को गन्तव्य मानते हैं। आप तो अन्यो के लिए दुखबोध्य हैं। यह मोह आपके लिए नहीं है। यह आपकी भार्या नहीं अपितु मायाजन्मा है। आप युद्ध करके हमारी रक्षा कीजिए।' इससे शिव प्रबुद्ध हुए, मोहमुक्त हुए और तब शिव ने अपनी क्रोधाग्नि से सैकड़ों दैत्यों को नष्ट कर दिया। इस पर जलन्धर ने शिव से अपने रौद्ररूप का संहार कर अस्त्र-शस्त्रों के द्वारा सामान्य योद्धा के समान युद्ध करने का अनुरोध किया। असुर की इस निर्भीकता से प्रसन्न दयालु शिव ने उसे सायुज्य मुक्ति का वर दिया और युद्ध करने को कहा जिससे शिव अपने बाणों से ही उसे शिवलोक पहुंचा दें। जलन्धर ने शिव पर प्रथम प्रहार नहीं किया तो शिव ने ही उस पर शरप्रहार किया और तब शिव के साथ उसका भयावह युद्ध हुआ। कोटि भुजाओं वाले जलन्धर ने जब शिव को अपनी भुजाओं में आबद्ध कर लिया तो शिव ने उसकी भुजाओं को काट दिया। इस पर वह सिर से ही शिव पर प्रहार करने लगा। तब शिव ने स्वनिर्मित सुदर्शन चक्र से जलन्धर का सिर काटकर उसे रुद्रलोक में पहुंचा दिया। उसके सिर से निकला तेज शिव में ही विलीन हो गया था। (पद्म, उत्तर, 17/64-69, 18/13-105)

माना जाता है कि पार्वती के परामर्श पर विष्णु ने रूप बदलकर जलन्धर-पत्नी वृन्दा का शीलभङ्ग किया था और तब जलन्धर शिव के हाथों उनके द्वारा निर्मित सुदर्शन चक्र से सिर काटे जाने पर मारा गया था। (शिव, रुद्र, युद्ध, 22/46-50, 23/3-51, 24/45-49; स्कन्द, वैष्णव, कार्तिक, 20/28-29, 21/1-25, 22/9-14)

अन्यान्य भक्त - एक विहङ्गावलोकन

वस्तुतः शिव का परिचय उनके भक्तों के आख्यान-उपाख्यान से व्याप्त है। यदि यह कहा जाए कि शिव हैं ही भक्तों के लिए तो भी सम्भवतः अनुचित नहीं होगा। उल्लेखनीय है कि देवादिदेव महादेव कब अपने भक्तों की किस रूप में परीक्षा लेते हैं, यह सुनिश्चित नहीं है। इसी का दृष्टान्त है - एक बार गलित कुष्ठी बनकर वे एक ब्राह्मण के आवास में पहुंचे और वहां उपस्थित ब्राह्मणों के साथ बैठकर भोजन करने की इच्छा व्यक्त की किन्तु उनके बाह्य रूप को देखकर उन ब्राह्मणों ने घृणा से मुंह फेर लिया और उन कुष्ठिरूपी शिव को धिक्कारते हुए वहां से लौटा दिया। उन ब्राह्मणों का

देवादिदेव महादेव शिव

वक्तव्य था, 'तुम्हारी दृष्टिमात्र से हमारा भोजन अखाद्य हो जाएगा।' शिव ने कहा, 'ऐसा ही हो' और आकाश में अदृश्य हो गए। इसके उपरान्त जब वे ब्राह्मण भोजन करने बैठे तो उनके विस्मय की सीमा न रही क्योंकि उनका भोजन कीड़ों से भरा होने के कारण वास्तव में अखाद्य हो गया था। तब उन्हें उन कुष्ठी के शिव होने की आशङ्का हुई तो वे उनके पीछे मन्दिर में जा पहुंचे। वहां उन ब्राह्मणों ने स्थाणु के समान निश्चल उन ब्राह्मण को देखा तो उनकी स्तुति की और उस अखाद्य भोजन को पुनः खाने योग्य बनाने की प्रार्थना की। आशुतोष शिव ने उन सभी को आश्वासन दिया कि वह भोजन अमृत तुल्य हो गया है। उस समय से ही वह देवालय मुण्डि नाम से प्रसिद्ध हुआ। (स्कन्द, आव, रेवा, 211/2-22)

वस्तुतः वर प्रदाता शिव अपनी इच्छा से वर-प्रदान से पूर्व भक्त की परीक्षा भी लेते हैं और उसको पूर्ण संरक्षण भी प्रदान करते हैं। इसी का दृष्टान्त है पाण्डव अर्जुन का प्रसङ्ग। एकान्त पर्वत पर तपस्यारत अर्जुन के समीप जब मूक दैत्य सूकर का वेष धारण कर आया तो किरात के रूप में देवादिदेव महादेव वहां प्रकट हो गए और सूकर को लक्ष्यविद्ध करने को उद्यत अर्जुन को रोकते हुए उसे अपना लक्ष्य बताया। अर्जुन ने शिव को न पहचानते हुए सूकर पर बाण चलाया। उसी समय शिव ने भी उसे लक्ष्यविद्ध किया। इसके उपरान्त उन दोनों के मध्य सूकर पर अपना अपना अधिकार जताते हुए विवाद हुआ जो रोमाञ्चक युद्ध में परिणत हो गया। शिव ने अर्जुन के धनुष को ही जब निगल लिया तो अर्जुन भयभीत हो गए किन्तु तब भी युद्ध समाप्त नहीं हुआ। हाथों से ही आघात करते हुए वे अपना पराक्रम प्रदर्शित करते रहे। अन्त में शिव के आघात से अर्जुन के मूर्च्छित हो जाने पर शिव ने उनके पराक्रम से तुष्ट होकर उन्हें दिव्य दृष्टि तथा देवों से भी अपराजेयता का वर दिया। अपने आराध्य को समक्ष देखकर भावविह्वल अर्जुन ने उनसे क्षमा-याचना की। अर्जुन की याचना पर शिव ने पाशुपत अस्त्र के धारण, सञ्चालन और लौटाने में समर्थ अर्जुन को पाशुपत अस्त्र भी प्रदान किया। शिव ने अपने भक्त अर्जुन का स्पर्श कर उनको निष्पाप भी कर दिया, उन्हें गाण्डीव धनुष दिया एवं स्वर्ग जाने का आदेश भी दिया। (मह, आर, 40/1-61, 41/सम्पूर्ण)

यह भी माना जाता है कि भीलों का राजा बनकर शिव अर्जुन की भक्ति की परीक्षा लेने भीलरूपी गणों से घिरकर आए थे। उनके बाण ने सूकर की पूंछ को और अर्जुन के बाण ने उसके मुख को विद्ध किया था जो क्रमशः पूंछ से घुसकर मुख से और मुख से घुसकर पूंछ से निकले थे। स्वभाविक था कि सूकर रूपी दैत्य का वध हो गया तो दोनों सूकर को अपने-अपने बाण से मारा गया मानने लगे। इसी बात पर विवाद

देवादिदेव महादेव शिव

आरम्भ हुआ जिसने युद्ध का रूप धारण कर लिया। अर्जुन के समस्त अस्त्र जब कट गए तो उन्होंने शिव को पैरों से पकड़ कर घुमाना प्रारम्भ किया। तब शिव ने अर्जुन को अपने रूप के दर्शन करवाए जिससे अर्जुन अपने आचरण के कारण स्वयं की ही भर्त्सना करने लगे। उस समय शिव ने अर्जुन को अभीष्ट वर दिया, उसके सिर पर वरद हस्त धारण किया और तब अन्तर्धान हो गए। (शिव, शत, 39/26-53; 40/11-21, 41/1-59)

भक्तों को उनका अभीष्ट देने में शिव कभी कार्पण्य नहीं करते हैं। एक बार कतिपय महर्षियों ने प्रभास क्षेत्र में सङ्गलेश्वर लिङ्ग के समीप जाकर दीर्घकाल तक कठोर तपस्या की। शिव ने उन्हें दर्शन तो नहीं दिया किन्तु अपना सारूप्य प्रदान करते हुए उन सभी को त्रिनेत्र बना दिया। इससे वे महर्षि परस्पर एक दूसरे को शिव मानकर स्तुति आदि करने लगे। कालान्तर में शिव के प्रत्यक्ष होने पर महर्षियों ने उस स्थान में गङ्गा को ले आने की प्रार्थना की। भक्त-वत्सल शिव उन सभी को अत्यधिक पावन मानते थे। अतः उनकी इच्छा का सम्मान रखते हुए गङ्गा को वहां प्रवाहित कर दिया। उस जल में रहने वाले मत्स्य ऋषियों के कृपाकटाक्ष से धन्य होकर त्रिनेत्रधारी हो गए। शिव ने उस कुण्ड के मत्स्यों को सदा त्रिनेत्रधारी होने का वर दे दिया। इस प्रकार शिव ने भक्तों की असम्भव मांग को भी पूरा कर दिया। (स्कन्द, प्रभा, प्रभा, 30/17-30)

इसी भांति देवदारु वन के ऋषियों से शापित होने के उपरान्त शिव ने गजरूप धारण किया तो ऋषियों ने उन्हें न पहचान कर पकड़ लिया। इस पर गज ने उन सभी को नीचे गिरा दिया और डिण्डी के रूप में आ गए। ऋषियों ने उन्हें शिव जान अपने शाप देने के कारण उनसे क्षमा-याचना की एवं भूपतित शिवलिङ्ग की अनुकृति रूप, लिङ्ग का निर्माण कर उनका स्तवन करने लगे। शिव के वहां प्रत्यक्ष होने और उन ऋषियों की प्रार्थना करने पर शिव उस लिङ्ग में ही लीन हो गए। (वही, प्रभा, प्रभा, 308/28-58)

मानव ही नहीं, यक्ष कुबेर की तपस्या से प्रसन्न शिव ने उसे घनाध्यक्ष तथा यक्षपति के रूप में उसका अभीष्ट वर प्रदान किया था, मित्रता प्रदान की तथा उसकी नगरी अलका के समीप रहने का आश्वासन भी दिया। पार्वती ने ही उसे कुबेर नाम दिया। अलका के समीप ही कैलास में शिव का वास है। (शिव, रुद्र, सृष्टि, 19/24-33)

लोककल्याण को उद्गीव शिव की शरण में समस्या-जर्जरित सभी प्राणी पहुंचते हैं और शिव भी उन भक्तों की अभीष्ट पूर्ति करते हैं। इसी प्रकार निस्सन्तान असित मुनि आकाशवाणी से प्रेरित होकर शिवलोक गए और निम्न अभिधानों से शिव की

देवादिदेव महादेव शिव

स्तुति की - जगद्गुरुः, शिवः, शिवदः, योगीन्द्राणां योगीन्द्रः, गुरुणां गुरुः, मृत्योर्मृत्युः, मृत्युसंसारखण्डनः, मृत्योरीशः, मृत्युबीजः, मृत्युअयः, कालरूपं कलयतां कालः, कालेशः, कालादतीतः, कालस्थः, कालकालः, गुणातीतः, गुणाधारः, गुणबीजः, गुणात्मकः, गुणीशः, गुणिनां बीजः, गुणिनां गुरुः, ब्रह्मस्वरूपः, ब्रह्मज्ञः, ब्रह्मभावे तत्परः, ब्रह्मबीजः। (ब्रह्मवे, श्रीकृष्ण, पूर्व, 30/43-47)

बृहस्पति-भ्राता संवर्त ने मरुत राजा को मुअवान् पर्वत से स्वर्ण लाने के उद्देश्य से शिव को प्रसन्न करने के लिए स्तुति करने का निर्देश दिया। उन्होंने जो स्तुति सुनाई उसमें शिव के नाम हैं - शर्वः, वेधाः, रुद्रः, शितिकण्ठः, सुरूपः, सुवर्चा, कपर्दी, करालः, हर्यक्षः, वरदः, त्र्यक्षः, पूष्णो दन्तभिद्, वामनः, शिवः, याम्यः, अव्यक्तकेशः, सद्वृत्तः, शङ्करः, क्षेम्यः, हरिनेत्रः, स्थाणुः, पुरुषः, हरिकेशः, मुण्डः, कृशः, उत्तारणः, मास्करः, सुतीर्थः, देवदेवः, रंहस, उष्णीषी, सुवक्त्रः, सहस्राक्षः, मीढुष्, गिरिशः, प्रशान्तः, यतिः, चीरवासाः, बिल्वदण्डः, सिद्धः, सर्वदण्डधरः, मृगव्याधः, महान्, धन्वी, भवः, वरः, सौम्यवक्त्रः, पशुहस्तः, वर्षी, हिरण्यबाहुः, उग्रः, दिशाम्पतिः, पशुपतिः, भूतपतिः, वृषः, मातृभक्तः, सेनानी, मध्यमः, सुवहस्तः, पतिः, धन्वी, भार्गवः, अजः, कृष्णनेत्रः, विरूपाक्षः, तीक्ष्णदंष्ट्रः, तीक्ष्णः, वैश्वानरमुखः, महाद्युतिः, अनङ्गः, सर्वाङ्गः, प्रजावान्, शुक्राधिपतिः, पृथुः, कृत्तिवासाः, कपालमाली, सुवर्णमुकुटः, महादेवः, कृष्णः, त्र्यम्बकः, अनघः, क्रोधनः, नृशंसः, मृदुः, बाहुशाली, दण्डी, तप्ततपः, क्रूरकर्मा, सहस्रशिराः, सहस्रचरणः, स्वधास्वरूपः, बहुरूपः, दंष्ट्री, पिनाकी, महादेवः, महायोगी, अव्ययः, त्रिशूलपाणी, वरदः, त्र्यम्बकः, भुवनेश्वरः, त्रिपुरघ्नः, त्रिनयनः, त्रिलोकेशः, महौजा, प्रभवः सर्वभूतानाम्, धारणः, धरणीधरः, ईशानः, शङ्करः, सर्वः, शिवः, विश्वेश्वरः, भवः, उमापतिः, पशुपतिः, विश्वरूपः, महेश्वरः, विरूपाक्षः, दशभुजः, तिष्यगोवृषभध्वजः, उग्रः, स्थाणुः, शिवः, घोरः, शर्वः, गौरीशः, ईश्वरः, शितिकण्ठः, अजः, शुक्रः, पृथुः, पृथुहरः, हरः, विश्वरूपः, विरूपाक्षः, बहुरूपः, उमापतिः, देवः, अनङ्गाङ्गहरः, हरः, शरण्यः, महादेवः, चतुर्मुखः। (महा, आश्व, 8/12-30)

माण्डि का पुत्र कालभीति काल के प्रकोप से मातृगर्भ से भूमिष्ठ ही नहीं होना चाहता था। शिव की मध्यस्थता से विभूतियों द्वारा आश्वस्त करने पर ही उसने जन्म ग्रहण किया था। उसी ने शिवलिङ्ग की उपासना करके शिवस्तुति की तो प्रसन्न शिव लिङ्ग से प्रत्यक्ष हुए तथा कालभीति को उसका अभीष्ट उस लिङ्ग में अपना अवस्थान आदि का वर दिया। कालभीति द्वारा की गई शिवस्तुति के नाम हैं - पापस्य कालः, भवपङ्ककालः, कलकलः, कालमार्गकालः, महाकालः, श्रीकालकण्ठः, भवकालरूपः, सर्वविघ्नेश्वरः, प्रपितामहः, तत्पुरुषः, रुद्रदेवेशः, अघोरवक्त्रः, त्रितयः, सद्योभिजातः,

देवादिदेव महादेव शिव

अनादिभवः, ज्येष्ठरुद्रः, कलाविकारी, बलङ्करः, बलप्रमाथी, भूतहन्ता, मनोन्मनः, पुष्टिवर्धनः, त्र्यम्बकः। (स्कन्द, माहे, कौमा, 40/10-115)

शिवभक्त पाण्ड्यराजा शङ्कर पर जब ब्रह्महत्या और स्त्रीहत्या लग गई तो उसने उन पापों से मुक्ति हेतु शिव-स्तवन किया और अग्नि में प्रवेश करने को उद्यत हुआ। तभी उसके मुख से ब्रह्महत्या निकल गई जो नीलवस्त्र धारिणी और अति भयङ्करी थी। वहां प्रकट हुए शिव की आज्ञा से भैरव ने ब्रह्महत्या का वध कर दिया। शिव ने शङ्कर को निष्पाप घोषित करते हुए राज्य सम्भालने का आदेश और वर दिया। शङ्करकृत शिवस्तुति की नामावलि है - रुद्रः, ईशानः, रामनाथः, उमापतिः, त्रिपुरघ्नः, महादेवः, कालकूटविषादनः, दयासिन्धुः, गङ्गाधरः, विरूपाक्षः, त्रिलोचनः, कामारिः, कामसंदायी, राघवेश्वरः, धूर्जटिः, मार्कण्डेयभयत्राणः, मृत्युञ्जयः, शिवाव्ययः, गिरिजाधरः, रुद्राक्षमालाभरणः, चन्द्रशेखरः, सूर्यदन्तभिद्, भारतीनासिकाच्छिद्, रामेश्वरः, आनन्दः, सच्चिदानन्दः, वृषध्वजः। (वही, ब्राह्म, सेतु, 48/91-115)

कृपानिधान शिव अपने किसी भक्त को कष्ट में नहीं रहने देते। भृगुवंशीय जन्मान्ध सुचरित मुनि ने दस वर्ष तक कठोर तप करके शिव को प्रसन्न किया। शिव ने सुचरित मुनि को उनकी अभीष्ट दृष्टिशक्ति प्रदान की तो गद्गद सुचरित ने प्रत्यक्ष हुए शिव की निम्न अभिधानों से स्तुति की - महेशानः, ब्रह्मादिपूज्यः, त्रिपुरान्तकः, यमान्तकः, उमेशः, कामान्तकः, अमलः, संसारवैद्यः, भूतपालः, त्रियम्बकः, भक्तरक्षणदीक्षितः, कारुण्यविग्रहः, संसारमोचकः, परमानन्दविग्रहः, गङ्गाधरः, मृडाव्ययः, गर्भः। (वही, ब्राह्म, सेतु, 29/21-28)

परम शिवभक्त राजा श्वेत के जीवन काल का अवसान होने पर जब काल उसका वध करने आया तो शिव के नाम जपने वाले श्वेत की रक्षा के लिए आए शिव ने काल को मारकर श्वेत को जीवनदान दिया। तब श्वेत ने निम्न अभिधानों से शिव-स्तवन किया - रुद्रः, शान्तः, स्वज्योत्स्नः, आत्मवेधा, निरन्तरः, सूक्ष्मः, ज्योतिषां पतिः, त्राता, जगन्नाथः। (वही, माहे, केदार, 32/37-44)

यह भी वर्णन मिलता है कि कालपाश में आबद्ध होकर भी शिवनाम जपने में रत श्वेत राजा ने शिव को अपने समक्ष उपस्थित देखकर निम्न नामों से उनका स्तवन किया - विश्वशम्भुः, धीमान्, अपवर्गदायी, महाविभूतिः, विभागहीनरूपी, नराधिपः, गणेश्वरः, प्रपन्नदुःखशासनः, अनादिनित्यभूतिः, वराहशृङ्गधारी, वृषध्वजः, कपालमाली, महानगः। (कूर्म, उत्तर, 36/29-32)

शिवभक्तों में अनेक ऐसे भक्त हैं जो आर्त होकर अथवा अर्थार्थी होकर शिवस्तवन

देवादिदेव महादेव शिव

नहीं करते अपितु शिव के किसी कृत्य से चमत्कृत होकर, अथवा उनके प्रति अपनी कृतज्ञता को व्यक्त करने हेतु अथवा अपने आराध्य की महिमा का गुणगान करने के लिए शुद्धभाव से उनका स्तवन करते हैं। ऐसे कतिपय दृष्टान्त प्रस्तुत हैं —

यज्ञस्थल पर कपाली रूपधारी शिव के आने पर उन्हें किसी ने नहीं पहचाना तथा वहां से जाने को कहने लगे। तब शिव ने अपनी शक्ति से वहां असंख्य कपालों को उपस्थित कर दिया। इस चमत्कार से यज्ञकर्ता मुनियों ने उन्हें शिवरूप में पहचान लिया और निम्न नामों से उनकी स्तुति की — मूलप्रकृतिः, अजितः, महात्मा, अनावृतः, देवः, निःस्पृहः, आद्यः बीजः, प्रवर्ती, अनन्तरः, एकः, अव्यक्तः, नानाविचित्रभुजङ्गाङ्गदभूषणः, सर्वेश्वरः, विरजः, वरः, विश्वात्मा, परमकारणकारणः, फुल्लारविन्दविपुलायतलोचनः, अदृश्यः, अव्यक्तः, अनादिः, अव्ययः, अक्षरं ब्रह्मः, सर्वगः, आदिदेवः। (स्कन्द, प्रभा, प्रभा, 103/13-15)

जैमिनि मुनि की प्रार्थना पर ताण्डव नृत्य करते हुए शिव का मुनि ने जो स्तवन किया उसमें से कुछ नाम हैं — साम्बः, सदसस्पतिः, पादभिन्नः, लोकः, मौलिभिन्नाण्डभित्तिः, भुजभ्रान्तादिगन्तः, क्वणननूपुरयुग्मः, विलसत्कृत्तिवासाः, अस्थिभूषः, पात्रं सर्वस्य जगतः, गोत्रपतिः, क्षेत्रपतिः, मङ्गलम्, धनपतिः, अन्नपतिः, आत्माधिपतिः, मीढुष्टमः, अष्टाङ्गः, अतिहृद्यः, विलष्टभक्तेष्टदायी, इष्टिघ्नः, सुतुष्टः, पुष्टानां पतिः, पञ्चभूताधिपतिः, कालाधिपतिः, आत्माधिपतिः, दिशां पतिः, विश्वकर्ता, विश्वभर्ता, विश्वहर्ता, अग्निनेत्रः, तत्पुरुषः, भूतिभूषः, भक्तानां भीतिभङ्गप्रदायी, सहस्राम्बः, सहस्राभीषुः, सुकपोलः, भवक्लेशनिमित्तोरुभयच्छेदकृत्, आषाढः, सहमानः, आनन्दसन्दोहः, लास्यसुन्दरः, समस्तजगतां नाथः, सुजङ्घः, सुन्दरः, क्षौमः, रक्षोभूतक्षतिक्रमः, यक्षेशेष्टः, अर्द्धालकः, अस्थ्युत्पलदलसजः, अर्द्धपुलक्षणः, कृष्णापिङ्गलः, सकृत्प्रणतसंसारमहासागरतारकः, जगतस्तस्थुषस्पतिः, नेता मरुताम्, जेता, अपराजितः, अन्तकनेता, मन्दाकिनीधरः, सुरनियन्ता, कमलकान्तिः, वासुकिज्यः, विष्किरः, धराधरसुतालीलासरोजाहतबाहुः, घृणानिधिः, सुभासः, शुक्रशोचिः, महामयूखः, महाभुजः, महाशरीरः, महाम्बरः, महाकिरीटः, मुख्यः, बुध्नयः, विकारः, विकारी, भवोद्भवः, बहुप्रजः, अत्यन्तविचित्ररूपः, सुरेशोरुकिरीटनानारत्नावृतताष्टपदविष्टरः, भस्माङ्गरागः, सर्पाधिराजौषधिनाथयुद्धक्षुभ्यज्जटा— मण्डलगह्वरः, सुन्दरताण्डवः, मुरारिनेत्रार्चितपादपद्मः, उमाङ्गिलाक्षापरिरक्तपाणिः, हिरण्यदन्तः, शुचिवर्णः, आशाम्बरः, अम्बराङ्गः, यूपः, अन्तस्थः, महानन्दः, अशोकदुःख, यमारिः, हिरण्यरूपः, हिरण्यसंदृक्, श्रीपतिवन्द्यपादः, भूतिभासितोरः, भवाभिभूतिभीतिसङ्गी, विश्वपः, सुरपतिपतिः, प्रजपतिपतिः, क्षितिपतिपतिः, वन्दनमस्तकाहतस्वनाद्यसंघृष्टकिरीटमस्तकः, कवीनामनुपमश्रवस्तमः,

देवादिदेव महादेव शिव

सुब्रह्मण्यः। (नारद, उत्तर, 73/29-133)

नागराज-कन्या रत्नावली तथा उसकी सखियों ने पैलिपिल तीर्थ में शिव की अर्चना आदि करके सुप्त अवस्था में समक्ष आविर्भूत शिव को देख जिन नामों से उनकी स्तुति की उनमें से कतिपय नाम हैं - जालन्धरहरः, कन्दर्पदर्पहृत्, त्रैलोक्यजनकः, त्रैलोक्यवर्धनः, त्रैलोक्यवन्दितः, भक्तजनाधीनः, त्रिपथगापाथः प्रक्षालितजटाटटः, चन्द्रकलाज्योतिर्विद्योतित- जगत्त्रयः, सर्पफणारत्नप्रभाभासितविग्रहः, अद्रिराजतनयातपः, क्रीतार्धदेहकः, श्मशाननिलयः, वाराणसीप्रियः, आनन्दवनाध्यासी, प्राणिनिर्वाणदायकः, विश्वपतिः, शर्वशर्वरीपरिवर्जितः, नृत्यप्रियः, गीतविशारदः, प्रणवसद्वासः, धाममहानिधिः, प्रणतसर्वदः, विधिः, सर्वविधिज्ञः, वाचस्पतिः, आदिवर्जितः। (स्कन्द, काशी, उत्तर, 76/104-115)

अपने कुकर्भों के कारण वेन राजा को ऋषियों द्वारा मार दिया गया। तब वह म्लेच्छों के मध्य उत्पन्न हुआ एवं क्षयरोग एवं कुष्ठ से पीड़ित हो गया। वेनपुत्र धार्मिक राजा पृथु देवर्षि नारद के उपदेशानुसार वेन को तीर्थों में ले गया। स्थाणु तीर्थ में स्नान करने से वेन में वैराग्य का उदय हुआ। इस भांति स्थाणु तीर्थ के माहात्म्य से अपना उद्धार हो जाने से दिव्य देह प्राप्त कर स्थाणु को प्रणाम कर वेन ने निम्न अभिधानों से उनकी स्तुति की - चन्द्रभूषणः, विश्वस्य जगतः पतिः, सर्वशत्रुनिषूदनः, बलिविष्टम्भः, यक्षेश्वरप्रियः, शङ्कुकर्णः, महाकर्णः, कुम्भकर्णः, अर्णवालयः, गजेन्द्रकर्णः, गोकर्णः, पाणिकर्णः, शतजिह्वः, शतावर्तः, शतोदरः, शताननः, महामूर्तिः, उग्ररूपी, अन्धकासुरहन्ता, पशुपतिः, त्रिजटः, त्रिशीर्षः, त्रिशूलासक्तपाणिः, मुण्डः, चण्डः, अण्डः, उत्पतिहेतुः, डिण्डिमासक्तहस्तः, डिण्डिमुण्डः, ऊर्ध्वकेशदंष्ट्रः, शुष्कः, विकृतः, धूम्रलोहितकृष्णः, नीलग्रीवः, अप्रतिरूपः, विरूपः, सूर्यमालः, स्वरूपध्वजमाली, मानातिमानः, पटुतरः, गणेन्द्रनाथः, संक्रन्दनः, वृषस्कन्धः, पर्णधारपुटः, कनकवर्चाः, स्तुतः, स्तुत्यः, स्तुतिस्थः, सर्वभक्षः, सर्वभूतशरीरी, सितोदग्रपताकी, नम्यः, नम्रः, कटकटः, कृशनाशः, शयितः, उत्थितः, स्थितः, धावमानः, कुटिलः, नर्तनशीलः, लयवादित्रशाली, नाट्योपहारलुब्धः, मुखवादित्रशाली, ज्येष्ठः, श्रेष्ठः, बलातिबलघाती, कालनाशः, संसारक्षयरूपी, हिमवद्दुहितुःकान्तः, भैरवः, दशबाहुः, चित्तिभस्मप्रियः, कपालासक्तपाणिः, विभीषणः, भीष्मः, भीमव्रतधरः, विकृतवक्त्रः, पूतोग्रदृष्टिः, पक्वाममांसलुब्धः, तुम्बिवीणाप्रियः, वृषाङ्कवृक्षः, गोवृषाभिरुत्, कटङ्कटः, परपरः, सर्वरिष्टः, विरक्तरक्तः, भावनः, अक्षमाली, विभेदभेदभिन्नः, छाया, तपनः, अघोरघोररूपः, घोरघोरतरः, शान्ततमः, बहुनेत्रकपालः, एकमूर्तिः, क्षुद्रः, लुब्धः, यज्ञभागप्रियः, पञ्चालः, सिताङ्गः, यमनियामी, चित्रोल्घण्टः, घण्टाघण्टनिघण्टी, सहस्रशतघण्टः, घण्टामालाविभूषी, प्राणसंघट्टगर्वः, किलिकिलिप्रियः,

देवादिदेव महादेव शिव

हुंकारः, पारः, हुंकारप्रियः, समसमः, गृहवृक्षनिकेती, गर्भमांसशृगालः, तारकः, तरः, यज्ञः, यजी, हुतः, प्रहुतः, यज्ञवाहः, हव्यः, तप्यः, तपनः, पयः, तुण्डानां पतिः, अन्नदः, अन्नपतिः, नानान्नभोजी, सहस्रशीर्षः, सहस्रचरणः, सहस्रोद्यतशूलः, सहस्राभरणः, बालानुचरगोप्ता, बाललीलाविलासी, बालः, वृद्धः, क्षुब्धः, क्षोभणः, गङ्गालुलितकेशः, मुञ्जकेशः, षट्कर्मतुष्टः, त्रिकर्मनिरतः, नग्नप्राणः, कृशः, स्फोटनः, धर्मार्थकाममोक्षाणां कथ्यः, धर्मार्थकाममोक्षाणां कथनम्, साङ्ख्यः, साङ्ख्यमुख्यः, साङ्ख्ययोगमुखः, विरथरथ्यः, चतुष्पथरथः, कृष्णाजिनोत्तरीयः, व्यालयज्ञोपवीती, वक्त्रसन्धानकेशः, हरिकेशः, त्र्यम्बिकाऽम्बिकानाथः, व्यक्ताव्यक्तः, कामकामदकामघ्नः, तृप्तातृप्तविचारी, सर्वदः, पापघ्नः, कल्पसङ्ख्याविचारी, महासत्त्वः, महाबाहुः, महाबलः, महामेघः, महाप्रख्यः, महाकालः, महाद्युतिः, मेघावर्तः, युगावर्तः, चन्द्रार्कपतिः, अन्नम्, अन्नभोक्ता, पक्वभुक्, पावनोत्तमः, जरायुजः, अण्डजः, स्वेदजः, उद्भिदजः, देवदेवेशः, शरी, गदी, खट्वाङ्गी, शरासनी, छेत्ता, भेत्ता, प्रहर्ता, मन्ता, नेता, दशलक्षणसंयुक्तः धर्मः, कालपुष्पफलप्रदः, गायत्री, प्रणवः, लोहितः, हरितः, नीलः, कृष्णः, पीतः, सितः, कटुः, कपोतः, मेचकः, सवर्णः, अवर्णः, कर्ता, हर्ता, उपप्लवः, चित्रमानुः, स्वर्भानुः, शिक्षा, हौत्रम्, त्रिसौपर्णम्, पवित्रं पवित्राणाम्, मङ्गलानां मङ्गलम्, तिन्दुकः, गिरिजः, वृक्षः, मुद्गम्, अखिलजीवनम्, प्राणाः, सत्त्वम्, रजः, तमः, प्रतिपत्पतिः, उन्मेषः, निमेषः, क्षुतम्, जृम्भितम्, लोहितान्तर्गतः, दृष्टिः, महावक्त्रः, शुचिरोमा, हरिश्मश्रुः, ऊर्ध्वकेशः, चलाचलः, गीतवादित्रनृत्यज्ञः, गीतवादित्रकप्रियः, मत्स्यः, जालः, जलौकाः, केलिकला, कलिः, अकालः, विकालः, दुष्कालः, मृत्युकर्ता, यक्षभयङ्करः, संवर्तकः, अन्तकः, संवर्तकबलाहकः, घण्टा, घण्टी, महाघण्टी, चिरी, माली, मातलिः, त्रिमुण्डधृक्, ब्रह्मकालयमाग्नीनां दण्डी, चातुर्होत्रप्रवर्तकः, चातुराश्रम्यनेता, चातुर्वर्ण्यकरः, नित्यमक्षप्रिय, धूर्तः, गणाध्यक्षः, रक्तमाल्याम्बरधरः, गिरिकः, गिरिकप्रियः, शिल्पम्, शिल्पिनां श्रेष्ठः, सर्वशिल्पप्रवर्तकः, भगनेत्राङ्कुशः, नमस्कारः, गूढव्रतः, गुह्यतपाः, तारकाः, तारकामयः, सन्धाता, पृथिव्याधरणोऽपरः, व्रतचर्यम्, आर्जवम्, भूतात्माभूतकृत्, अदीक्षितः, कान्तः, दुर्दान्तः, दान्तसम्भवः, चन्द्रावर्तः, युगावर्तः, बिन्दुः, कामः, अणुः, कर्णिकारस्रजप्रियः, नन्दीमुखः, भीममुखः, सुमुखः, दुर्मुखः, महोरगपतिः, अधर्महा, महादेवः, दण्डधारः, गणोत्कटः, गोनर्दः, गोप्रतारः, गोवृषेश्वरवाहनः, त्रैलोक्यगोप्ता, गोमार्गः, मार्गः, स्थिरः, श्रेष्ठः, विक्रोशः, क्रोशः, दुर्वारणः, दुर्विषहः, दुःसहः, दुरतिक्रमः, दुर्द्धर्षः, दुष्प्रकाशः, दुर्दर्शः, दुर्जयः, शशाङ्कानलशीतोष्णः, क्षुत्तृष्णा, निरामयः, व्याधिहा, व्याधिनाशनः, समूहः, समूहस्य हन्ता, शिखण्डी, पुण्डरीकवनालयः, दण्डधारः, उग्रदंष्ट्रः, कुलान्तकः, विषापहः, सोमपाः, मरुत्पतिः, अमृताशी, ब्रह्मवाक्, घृतच्युतः, नपुंसकम्, देवदंष्ट्रा, विश्वकृत्,

देवादिदेव महादेव शिव

विश्वहर्ता, निमिषोन्मेषकर्ता, भक्तानुकम्पी, लम्बोदरशरीरी, कमण्डलुनिषङ्गः, रुद्रात्मा, तोयात्मा, अम्बुशायी। (वामन, 47/21-163)

मुनि शङ्कुकर्ण के कहने पर वाराणसी में स्नान तथा कपदी शिव के दर्शन से पिशाच के मुक्त होने पर शङ्कुकर्ण ने जो शिवस्तुति की उसमें परिगणित नाम हैं — कपदी, परतः परः, गोप्ता, एकः, पुरुषः पुराणः, योगेश्वरः, आदित्यः, अग्निः, कपिलाधिरूढः, ब्रह्मसारः, हृदिसन्निविष्टः, हिरण्यमयः, योगी, आदिमान्, दिविष्टः, महामुनिः, ब्रह्ममयः, पवित्रः, सहस्रपादाक्षिशिरोभियुक्तः, सहस्ररूपः, तमसःपरः, ब्रह्मपारः, भगवान्, ईशः, प्रणम्यः, अलिङ्गः, आलोकविहीनरूपः, स्वयंप्रभुः, चित्पतिः, एकरूपः, ब्रह्मपारः, परमेश्वरः, परमस्वरूपः, विदेहः, ब्रह्मविज्ञानम्, अभेदः, प्रधानपुरुषः, गुहेशः, स्थाणुः, गिरिशः, हरिः, इन्दुमौलिः, पिनाकी। (पद्म, स्वर्ग, 35/35-44)

नित्यः, परतः परः, गोप्ता, एकः, पुरुषः पुराणः, योगेश्वरः, ईशिता, आदित्यः, अग्निः, कलिलाधिरूढः, ब्रह्मपारः, हृदिसन्निविष्टः, हिरण्यमयः, योगी, आदिहीनः, रुद्रः, शरणम्, दिविस्थः, महामुनिः, ब्रह्मपरः, पवित्रः, सहस्रपादाक्षिशिरोभियुक्तः, सहस्रबाहुः, तमसः परः, हिरण्यगर्भाधिपतिः, त्रिनेत्रः, जगतः प्रसूतिः, जगतः विनाशः, अलिङ्गः, आलोकविहीनरूपः, स्वयंप्रभुः, चित्पतिमा, एकरुद्रः, अनन्यः, विदेहः, ब्रह्मविज्ञानम्, अभेदः, अनेकस्वरूपः, ज्योतिषि सन्निविष्टः, कालः, बृहत्, महेशः, इन्दुमौलिः। (कूर्म, पूर्व, 32/36-45)

महाभारत युद्ध में अदृश्य रूप से अर्जुन के शत्रुओं का मर्दन करने वाले शूलपाणि शिव की महिमा को प्रतिपादित करते हुए व्यास द्वारा परिगणित शिव के नाम हैं — प्रजापतीनां प्रथमः, तैजसः, विभुः, भुवनम्, भूः, भुवः, देवः, सर्वलोकेश्वरः, प्रभुः, वरदः, सर्वादिः, भुवनेश्वरः, जटिलः, त्र्यक्षः, महाभुजः, शिखी, चौरवासाः, दाता, शान्तः, शितिकण्ठः, कनिष्ठः, सुवर्चाः, कपदी, करालः, हर्यक्षणाः, याम्यः, अव्यक्तकेशः, सद्वृत्तः, काम्यः, हरिनेत्रः, स्थाणुः, पुरुषः, हरिकेशः, मुण्डः, कृशः, उत्तरणः, भास्करः, सुतीर्थः, देवदेवः, रंहस्, बहुरूपः, शर्वः, प्रियः, प्रियवासाः, उष्णीषी, सुवक्त्रः, सहसाक्षः, मीढूः, गिरिशः, प्रशान्तः, पति, चौरवासाः, हिरण्यबाहुः, उग्रः, दिशां पतिः, पर्जन्यपतिः, भूतपतिः, वृक्षपतिः, अपां पतिः, वृक्षैरावृतकायः, सेनानी, मध्यमः, सुवहस्तः, देवः, धन्वी, भार्गवः, विश्वपतिः, सहस्रशिरा, सहस्रनयनः, सहस्रबाहुः, सहस्रचरणः, भुवनेश्वरः, उमापतिः, विरूपाक्षः, दक्षयज्ञनिर्बहणः, अव्यग्रः, वृषावर्तः, वृषनाभः, वृषध्वजः, वृषदर्पः, वृषपतिः, वृषशृङ्गः, वृषर्षभः, वृषाङ्गः, वृषभोदरः, वृषभः, वृषभेक्षणः, वृषायुधः, वृषशरः, वृषभूतः, महोदरः, ब्रह्मण्यः, ब्राह्मणप्रियः, त्रिशूलपाणिः, खड्गचर्मधरः, पिनाकी, खण्डपरशुः, लोकपतिः, ईश्वरः, शरण्यः, सुरेशः, वैश्रवणः, सखाः, सुवासाः, सुव्रतः, सुधन्वी,

देवादिदेव महादेव शिव

सुवहस्तः, सुखधन्वः, धन्वी, धन्वन्तरः, धनुः, धन्वाचार्यः, उग्रायुधः, सुरवरः, बहुधन्वी, त्रिपुरघ्नः, वनस्पतीनां पतिः, नराणां पतिः, यज्ञानां पतिः, पूष्णः दन्तविनाशः, पिङ्गः, स्वर्णकेशः। (महा, द्रोण, 173/9-39)

अर्जुन को युगधर्म का उपदेश देते हुए कलियुग में लोगों के आराध्य महादेव शिव का विवेचन करते समय व्यास द्वारा की गयी शिवस्तुति के नाम हैं—रुद्रः, महान्, देवदेवः, शूली, त्र्यम्बकः, त्रिनेत्रः, योगिनां गुरुः, महादेवः, वेधाः, शम्भुः, स्थाणुः, परमेष्ठी, सोमः, रुद्रः, महाग्रासः, हेतुः, विरूपाक्षः, शरण्यः, ब्रह्मचारी, महादेवः, महायोगी, ईशानः, अम्बिकापतिः, योगिनां योगदाता, योगमायासमावृतः, योगिनां गुरुः, योगिनामाचार्यः, योगिगम्यः, पिनाकी, संसारतारणः, रुद्रः, ब्रह्मा, ब्रह्मणोधिपः, शाश्वतः, सर्वगः, शान्तः, ब्रह्मण्यः, ब्राह्मणप्रियः, कपर्दी, कालमूर्तिः, अमूर्तिः, परमेश्वरः, एकमूर्तिः, महामूर्तिः, वेदवेद्यः, दिवस्पतिः, नीलकण्ठः, विश्वमूर्तिः, व्यापी, विश्वरेताः, कालाग्निः, कालदहनः, कामदः, कामनाशनः, गिरिशः, देवः, चन्द्राययवभूषणः, विलोहितः, लेलिहानः, आदित्यः, परमेष्ठी, उग्रः, पशुपतिः, भीमः, भास्करः, परमं तपः। (कूर्म, पूर्व, 30/44-52)

आशुतोष शिव प्रसन्न होकर वर देते हैं, यह तो ठीक है किन्तु एक आख्यान ऐसा भी उपलब्ध होता है जिसमें वरदाता शिव की परिहास-प्रियता का पता चलता है— एक ऋषिकन्या पति की अभिलाषिणी होकर कठोर तप करने लगी। शिव जब वर देने को उद्यत हुए तो उस अज्ञातनामा कन्या ने उत्तेजना के वशीभूत होकर एकबार के स्थान पर उनसे पांच बार पति देने की प्रार्थना की। इस पर शिव ने उसे सर्वगुणसम्पन्न पांच पति प्राप्त करने का वर दिया। ऐसे वर से विस्मित कन्या ने जब एक ही पति की इच्छा की तो शिव ने कह दिया, 'तुमने मुझ से पांच बार पति की याचना की अतः तुम्हारे पांच पति होंगे।' वही कन्या आगामी जन्म में पञ्च पाण्डवों की पत्नी द्रौपदी हुई। (महा, आदि, 157/8-13)

इसी आख्यान का एक किञ्चित् परिवर्तित रूप यह भी है कि वनवासी राम के साथ वन में गई सीता को अपने पास सुरक्षित रखकर अग्निदेव ने छाया सीता का निर्माण कर राम के साथ भेज दिया था और दशानन-वध के उपरान्त उस छाया-सीता को अग्नि-परीक्षा के माध्यम से लौटाकर वास्तविक सीता को राम के हाथों सौंप दिया था। इस भाँति राम के प्रयोजन की पूर्ति के उपरान्त वह छाया सीता एकाकिनी तथा अत्यधिक व्याकुल हो गई। तब राम और अग्नि की आज्ञा से उसने कठोर तप किया। शिव के प्रत्यक्ष होने पर कामातुर होकर उसने बारम्बार अर्थात् पांच बार शिव से पति की याचना की तो रसिकेश्वर शिव ने उसे आगामी जन्म में पञ्च पाण्डव रूपी पांच पति प्रदान किये। स्पष्ट है कि वही छाया सीता द्रुपद-कन्या द्रौपदी

देवादिदेव महादेव शिव

बनी थी। (ब्रह्मवै, श्रीकृष्ण, उत्तर, 116/18-22)

जहां शिव ने द्रौपदी को पांच पतियों को प्राप्त करने का वर दिया वही उससे बहुत पहले रावण को उन्होंने ही दशानन बनाया था। हुआ यह था कि एक बार शिव को प्रसन्न करने के लिए रावण ने हवन करते हुए अपनी देह का प्रायः समस्त भाग हवन-कुण्ड में अर्पित कर दिया। ब्रह्मा की कृपा से उसकी मृत्यु तब भी नहीं हुई। शिव ने प्रसन्न होकर रावण से उसी भांति का मैत्री-सम्बन्ध स्थापित कर लिया जैसा सम्बन्ध रावण के वैमात्रेय अग्रज कुबेर के साथ उनका था। उसी समय आशुतोष शिव ने रावण को एक सिर के प्रतिदान में दस सिर प्रदान किए और उसके शरीर को वज्र के समान कठोर बना दिया। (भविष्य, प्रति, 4/15/31-38)

शिव ने रावण को अपने से दो गुने अर्थात् दस सिरों के साथ विज्ञान, ज्ञान के अतिरिक्त युद्ध में अजेयता का वर भी दिया और उसे त्रिकूट का राजा बना दिया। (स्कन्द, माहे, केदार, 8/33-36)

शिव अवतार

अज, अनादि, अनन्त, अपार शिव स्वयंभू हैं, अज्ञेय हैं तथापि उनकी दिव्यता, उनका अलौकिक होना यही है कि वे अवतरित भी होते हैं। यूं तो दुर्वासा ऋषि, नन्दी शिव के अंश अवतार तथा महावीर हनुमान् को उनका अवतार माना जाता है परन्तु उनके अन्यत्र अवतरित होने अथवा जन्म लेने का भी आख्यान प्रख्यात है। उन्हीं को क्रमशः प्रस्तुत किया जा रहा है।

नील

सुरभी गौ से वृषरूप में जन्म लेने वाले शिव का नाम है नील। नीलरूप में शिव के अवतरित होने का आख्यान अतीव अद्भुत है। हुआ यह कि जब नर्मदा-तटवासी ब्राह्मणों ने शिव की अनुगामिनी बनी अपनी पत्नियों के कारण क्रुद्ध होकर शिव को लिङ्गपतन का शाप दे दिया तो उस शाप से सन्त्रस्त अतः भीत शिव गोलोक चले गए। वहां सुरभी को देखकर शिव ने आत्मत्राण के लिए गोमाता सुरभी की स्तुति की, उनकी परिक्रमा की तथा शरीर की दग्धता को उपशमित करने के लिए उनके शरीर में लीन हो गए। सुरभी ने भी तब आत्मलीन शिव को गर्भ रूप में धारण कर लिया। दूसरी ओर शिव के अदृश्य हो जाने से लोकों में व्याकुलता व्याप्त हो गई। (स्कन्द, नागर, 258/20-46)

देवर्षियों ने जब शिव को सुरभी के माध्यम से अवतरित हुआ जान लिया तब वे देवों के साथ गोलोक पहुंचे और वहां उन्होंने गौओं के समूह के साथ इधर-उधर विचरण करते हुए नील नामक वृषभ को देखा। नील का मुख लोहित वर्ण का, पूंछ पाण्डुर वर्णी, खुर तथा विषाण श्वेत वर्ण के थे। उन्हें देख महर्षियों को इस ज्ञान की उपलब्धि हुई कि जो देव महेश्वर हैं, वे ही वृष हैं। चतुष्पाद, धर्मरूप नील पञ्चमुखी हर ही हैं जिनके दर्शनमात्र से ही वाजपेय यज्ञ का फल प्राप्त होता है। नील के पूजित होने पर समस्त जगत् पूजित होता है। उसे कोमल घास प्रदान करने से सारा विश्व तृप्त होता है। उसकी देह में सदा विश्वव्यापी जनार्दन का वास है। अतः उसकी नित्य वेद-मन्त्रों से अर्चना की जानी चाहिए।

देवादिदेव महादेव शिव

इस भांति उसके महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए महर्षियों ने निम्न नामों से नील की स्तुति की— देवः, विश्वगोप्ता, सनातनः, विघ्नहर्ता, ज्ञानदः, धर्मरूपः, मोक्षदः, धनदः, श्रीदः, सर्वव्याधिनिषूदनः, कनकप्रदः, तेजसां धाम, सौरभेयः, महाबलः, धृतकैलासः, वेदस्तुत्यः, वेदमयः, वेदात्मा, वेदवित्तमः, वेदवेद्यः, वेदयानः, वेदरूपः, गुणाकरः, गुणत्रयेभ्योः परः, वृषः, सर्वलोकानां गतिः, पिता, परमेश्वरः, तृप्तिदः, विश्वव्यापकः, ब्रह्मः, धर्ममयः, नित्यम्, अच्छेद्यः, अमेद्यः, अप्रमेयः, महायशाः, अशोच्यः, अदाह्यः।

सोमपायी ब्राह्मणों से संस्तुत नील प्रसन्न हुए। तब शिव के प्रति अपराधी उन ब्राह्मणों ने विधान दिया कि यदि किसी की मृत्यु के एकादश दिन वृषदान न किया जाए तो उसका प्रेतत्व निश्चित होता है। ऋषियों ने उन महावृष नील के वाम भाग में चक्र और दक्षिण भाग में शूल का चिह्न बनाकर उन्हें गौओं के मध्य विचरण करने के लिए छोड़ दिया। (वही, नागर, 259/35-74)

रुद्र

देवादिदेव महादेव शिव का एक रूप रुद्र है जिसे जन्म लेने वाला माना गया है। काली के सहयोग से रुद्र कार्य करते हैं। रुद्र रूप में उनका कार्य है प्रलय करना। (शिव, रुद्र, सृष्टि, 9/51-52) रुद्र के अवतरित होने के सम्बन्ध में मान्यता है कि महान् तप करके ब्रह्मा ने शिव से अपना पुत्र बनने का वर मांगा था तो शिव ब्रह्मा के भाल से आविर्भूत हुए। वह शिशु रोकर ब्रह्मा से अपने लिए एक नाम की मांग करने लगा तो रोदन करने के कारण ब्रह्मा ने उसका नाम रुद्र रख दिया। (स्कन्द, काशी, उत्तर, 93/3-10)

गुणरूप रुद्र अपने शरीर से ब्रह्मा तथा विष्णु के अशक्य कार्य को लोकों के कल्याण के लिए सम्पन्न करते हैं। तात्त्विक दृष्टि से रुद्र में और ब्रह्मा तथा विष्णु में अन्तर न होने पर भी कार्यभेद से उनके विविध रूप एवं विविध नाम हैं। (वही, रुद्र, सृष्टि, 10/5-6) वास्तव में समस्त देवों की गति, द्वन्द्वरहित निर्विकारी शिव के पूर्ण अंश हैं रुद्र। (वही, रुद्र, सती, 1/3-4) रुद्र तथा मूल शिव अथवा सदाशिव के पार्थक्य अथवा अंश-अंशी रूप को इस भांति स्पष्ट किया जा सकता है कि विष्णु का एक वर्ष रुद्र का एक दिन होता है और उन रुद्र की स्थिति के जब सौ वर्ष व्यतीत हो जाते हैं तब सदाशिव के मुख से मात्र एक श्वास निर्गत होता है। (वही, रुद्र, सृष्टि, 10/19-20) रुद्र तथा शिव के भेद को स्पष्ट करते हुए ब्रह्मा बताते हैं, 'मैं, रुद्र तथा विष्णु गुण हैं, शिव सदा निर्गुण हैं। (वही, रुद्र, सृष्टि, 16/37)

देवादिदेव महादेव शिव

एक मान्यता यह भी है कि प्रलयाग्नि के रूप में पूर्णरूपेण जलाने वाले, तीक्ष्ण, उग्र, प्रतापवान् तथा मांस, मज्जा, रक्त आदि का सेवन करने वाले शिव ही रुद्र हैं। (महा, अनु, 146/7)

पहले ही स्पष्ट किया जा चुका है कि ऐसे शिवांश रुद्र को अज नहीं, अपितु उत्पन्न हुआ माना जाता है। एक मान्यता के अनुसार सात प्रजापतियों— मरीचि, अत्रि, अङ्गिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु और वसिष्ठ के क्रोध से ब्रह्मा ने रुद्र को उत्पन्न किया था। (ब्रह्म, 1/45)

अन्य मान्यता के अनुसार जब ब्रह्मा के पुत्र सनक, सनन्द आदि सृष्टिकार्य से विमुख हो गए तब प्रजापति ब्रह्मा के क्रोध से उत्पन्न ज्वालाओं से तीनों लोक प्रदीप्त हो गए। तब उनकी वक्र-भृकुटि और क्रोध से प्रदीप्त ललाट से मध्याह्नकालीन सूर्य के समान तेजस्वी रुद्र आविर्भूत हुए। वे अर्धनारीश्वर रूप में थे। ब्रह्मा के निर्देश पर उन्होंने अपने नर और नारी रूप को अलग-अलग किया। रुद्र के उस नर रूप से आगे एकादश रुद्र उत्पन्न हुए एवं नारी रूप से सौम्य, शान्त, अशान्त आदि रूपों में नारियां उत्पन्न हुईं। (विष्णु, 1/7/9-13)

वाराह पुराण के अनुसार सृष्टि के आदि में सृजन की अभिलाषा होने पर भी सृजन करने की विधि से अनभिज्ञ अतः क्रुद्ध ब्रह्मा के क्रोध से रुद्र का जन्म हुआ। ब्रह्मा ने रुद्र को गौरी समर्पित की तथा सृष्टि करने को कहा। 'तपोहीन सृष्टि नहीं कर सकता' ऐसा मानकर रुद्र जल में निमज्जित होकर तप करने लगे। दीर्घ समय उपरान्त जब वे जल से बाहर आए तब तक भूमण्डल में वृक्ष आदि सभी वस्तुओं की सृष्टि सम्पन्न हो चुकी थी। यह देख रुद्र ने सोचा, 'मुझसे कहा सृष्टि करो, तो यह सृष्टि किसने कर दी?' इस चिन्तन के साथ ही रुद्र भयङ्कर क्रोध करके नाद करने लगे। उनके नाद से भूत, वेताल, प्रेत, पूतना आदि करोड़ों की संख्या में उत्पन्न हो गए। (वाराह, 2/3-7, 18/25)

रुद्र के सम्बन्ध में यह उपाख्यान भी प्राप्त है— कल्प के आदि में अपने समान पुत्र का ध्यान करते हुए ब्रह्मा के अङ्क में नीललोहित वर्ण का एक कुमार प्रकट हुआ। उसी समय वह कुमार उच्च स्वर से रोदन करने लगा तो ब्रह्मा ने उससे रोने का कारण पूछा। इस पर उसने ब्रह्मा से अपना नाम पूछा तो रोदन करने के कारण ब्रह्मा ने उसका रुद्र नाम रखा तथा रोदन करने से रोका। इसके उपरान्त भी उस रुद्र ने सात बार और रोदन किया तो ब्रह्मा ने उसके सात और नाम निश्चित किए— भव, शर्व, ईशान, पशुपति, भीम, उग्र और महादेव। ब्रह्मा ने उन सभी के स्थान भी निश्चित किए— सूर्य, जल, पृथ्वी, वायु, अग्नि, आकाश, यजमान और चन्द्र। (विष्णु, 1/8/2-7)

देवादिदेव महादेव शिव

उक्त आठों रुद्र के पुत्र हैं क्रमशः शनैश्चर, शुक्र, लोहिताङ्ग, मनोजव, स्कन्द, सर्ग, सन्तान और बुध। (वही, 1/8/10-11)

रुद्र को सामान्य रूप से ब्रह्मा का पुत्र भी माना जाता है जो रोते हुए ही उत्पन्न हुए थे अतः रुद्र नाम से परिचित हुए। (अग्नि 20/20) यह भी माना गया है कि सर्वव्यापक और सार्वकालिक शिव विविध रूपों में विविध कालों में व्यक्त होते हैं। पूर्वकाल में वे रुद्र नाम से परिचित हुए थे जिनकी पत्नी सुवर्चला और पुत्र शनैश्चर हुआ। (वायु, 27/49)

गरुड पुराण का मानना है कि रुद्र ब्रह्मा की मानसी सृष्टि है जिन्हें ब्रह्मा ने धर्म, सनक, सनन्द, सनातन आदि के साथ ही उत्पन्न किया था। (गरुड, 5/2, 6)

मनु और शतरूपा की पुत्री प्रसूति की दक्ष से उत्पन्न पुत्रियों में से ग्यारह पुत्रियां रुद्र को समर्पित की गईं। रुद्र-पत्नियों के नाम हैं— कला, कलावती, काष्ठा, कालिका, कलहप्रिया, कन्दली, भीषणा, रास्ना, प्रमोचा, भूषणा और शुकी। इन पत्नियों से रुद्र के अनेक पुत्र हुए जो शिव के पार्षद हुए। (ब्रह्मवे, ब्रह्म, 9/4-14)

शिव – अन्य अवतार

आदिदेव शिव के ब्रह्मा से उत्पन्न रुद्र के विवरण के साथ ही शिव के अन्य अवतारों का उल्लेख करना अप्रासङ्गिक नहीं होगा। यह ठीक है कि शिव-अवतार, हनुमान् तथा शिव के अंशावतार दुर्वासा, नन्दी आदि तो अति प्रसिद्ध हैं ही। उनके अतिरिक्त भी शिव के विभिन्न कल्पों में अवतरित होने का वर्णन उपलब्ध है जिसमें उनके शिष्यों तथा पुत्रों का भी उल्लेख मिलता है। नन्दीश्वर के शब्दों में तो सर्वेश्वर शिव के असंख्य अवतार हैं तथापि कल्पनुसार शिव अवतारों को परिगणित किया जा रहा है।

सद्योजातः

श्वेतलोहित नामक उन्नीसवें कल्प में परम ब्रह्म का ध्यान करते हुए ब्रह्मा से सद्योजात उत्पन्न हुए जो शिखायुक्त तथा श्वेत-लोहित वर्ण के कुमार थे। सद्योजात शिव के ज्ञाता हुए — ब्रह्मापुत्र सुनन्द, नन्दन, विश्वनन्दन और उपनन्दन।

वामदेव

बीसवें रक्त कल्प में रक्तिम माला तथा वस्त्रों से शोभित, रक्ताक्ष तथा रक्तभूषण वामदेव नामक शिव अवतार ब्रह्मा से उत्पन्न हुए जिनको जानने वाले थे विरजा, विवाह, विशोक और विश्वभावन।

देवादिदेव महादेव शिव

तत्पुरुष

पीतवास नामक इक्कीसवें कल्प में पूर्वोक्त रूप से शिव का तत्पुरुष नामक अवतार हुआ जो प्रौढ़, महातेजस्वी, पीताम्बर थे।

अघोर

शिव नामक कल्प में ब्रह्मा से कृष्णवर्ण के महावीर, कृष्णवर्ण के वस्त्र-आभूषण आदि धारण करने वाले अघोर नामक शिव-उत्पन्न हुए। ब्रह्मा की सृष्टि के वर्द्धन हेतु अघोर ने घोर नामक योग किया।

ईशानः

विश्वरूप नामक कल्प में ब्रह्मा से नाद करने वाली सरस्वती के उपरान्त शिव ईशान नाम से उत्पन्न हुए जिनका समस्त आवरण आदि शुभ्रवर्ण का था। उन्होंने अपनी शक्ति से जटी, मुण्डी, शिखण्डी और अर्धमुण्ड - चार बालकों को उत्पन्न किया। (शिव, शत, 1/1-50)

अष्टमूर्ति

शर्व, भव, रुद्र, उग्र, भीम, पशुपति, ईशान एवं महादेव नामक शिव की आठ मूर्तियां मानी जाती हैं। भूमि, जल, अग्नि, वायु, आकाश, क्षेत्रज्ञ, सूर्य तथा चन्द्रमा उक्त आठों मूर्तियों से व्याप्त रहते हैं। (बही, शत, 2/1-5)

श्वेतः

कलियुग के प्रथम द्वापर में छागल पर्वत पर शिव का श्वेत नामक मुनि का अवतार होता है। जब श्वेत, शिखर, श्वेताश्व और श्वेतलोहित उनके शिष्य होते हैं जो ध्यानयोग से शिवलोक को प्राप्त करते हैं। (वायु, 23/115-118)

सुतारः

लोक-कल्याण हेतु महादेव कलि के द्वितीय द्वापर में सुतार नाम से अवतरित होते हैं जिनके दुन्दुभि, शतरूप, ऋचीक और केतुमान् नामक पुत्र उत्पन्न होते हैं। (बही, 23/119-122)

दमनः

तृतीय द्वापर में महादेव दमन नाम ग्रहण करते हैं। उस समय भी उनके चार पुत्र होते हैं - विशोक, विकेश, विशाप एवं शापनाशन। ये सभी रुद्रलोक को प्राप्त करते हैं। (बही, 23/123-125)

देवादिदेव महादेव शिव

सुहोत्री

चतुर्थ द्वापर में शिव का नाम सुहोत्री तथा पुत्रों का नाम सुमुख, दुर्मुख, दुर्दम और दुरतिक्रम होता है। (वही, 23/126-127)

कङ्कः

सविता नामक व्यास के होने पर पञ्चम द्वापर में शिव कङ्क कहलाते हैं जबकि उनके पुत्रों के नाम होंगे सनक, सनन्द, ऋतु तथा सनत्कुमार होते हैं। (वही, 23/129-132)

लोकाक्षिः

षष्ठ द्वापर, जब मृत्यु नामक व्यास होते हैं, तब लोकाक्षि नाम से शिव की प्रसिद्धि होती है तथा सुधामा, विरजा, शङ्खपाद और रव नामक उनके महात्मा तथा निष्पाप शिष्य होते हैं। (वही, 23/133-135)

जैगीषव्य

सप्तम द्वापर के शिव योगी जैगीषव्य कहलाते हैं तथा उनके पुत्र सारस्वत, सुमेधा, वसुवाह और सुवाहन होते हैं। (वही, 23/136-139)

ऋषभ

नवम द्वापर के शिव ऋषभ होते हैं तथा वेदज्ञ, तपस्वी पराशर, गार्ग्य, भार्गव एवं अङ्गिरा पुत्र होते हैं।

ध्यातव्य है कि अगले दो द्वापरों के शिव-अवतारों का नाम उपलब्ध नहीं है। दशम द्वापर के पुत्र हैं बलबन्धु, निरामित्र, केतुमृङ्ग और तपोधन जो रुद्रलोक को जाते हैं। एकादश द्वापर के शिवपुत्र होते हैं लम्बोदर, लम्ब, लम्बाक्ष और लम्बकेशक जो उग्र नामक महानाद करने वाले एवं लोक प्रसिद्ध होते हैं। (वही, 23/143-153)

अत्रिः

द्वादश द्वापर में शततेजा व्यास होते हैं जब शिव का नाम अत्रि एवम् उनके पुत्रों के नाम सर्वज्ञ, समबुद्धि, साध्य और सर्व होते हैं। (वही, 23/154-157)

वालिः

त्रयोदश द्वापर के शिव वालि होते हैं जो गन्धमादन पर्वत के वालखिल्य आश्रम में रहते हैं तथा उनके पुत्र होते हैं सुधामा, काश्यप, वसिष्ठ और विरजा। (वही, 23/158-161)

देवादिदेव महादेव शिव

गौतमः

चौदहवें द्वापर में अङ्गिरावंशीय गौतम नाम से शिव तथा अत्रि, उग्रतपा, श्रावण एवं श्रविष्ठ नामक उनके चार पुत्र होते हैं। (वही, 23/162-165)

वेदशिराः

पञ्चदश द्वापर में वेदशिरा नामक शिव के तपस्वी पुत्र होंगे कुणि, कुणिबाहु, कुशरीर और कुनेत्रक। (वही, 23/166-169)

गोकर्णः

सोलहवें कलियुगी द्वापर के गोकर्ण नामक महादेव के काश्यप, उशाना, च्यवन और बृहस्पति पुत्र होंगे। (वही, 23/170-173)

गुहावासी

सत्रहवें द्वापर में गुहावासी शिव के उत्तथ्य, वामदेव, महाकाल और महालय नामक पुत्र होते हैं। (वही, 23/176-180)

शिखण्डी

अठरहवें द्वापर में शिखण्डी पर्वत पर शिखण्डी नामक महादेव के वाचश्रवा, ऋचीक, शावास और दृढव्रत नामक चार तपस्वी पुत्र होंगे। (वही, 23/181-184)

जटामाली

उन्नीसवें द्वापर में जब भरद्वाज मुनि व्यास होते हैं, उस समय जटामाली नामक शिव का अवतार होता है। उनके क्रौशिल्य, काक्षीव और कुथुमि नामक ऊर्ध्वरेता पुत्र होते हैं। (वही, 23/185-188)

अट्टहासः

बीसवें द्वापर में, जब लोग अट्टहासप्रिय होते हैं, शिव का नाम अट्टहास तथा उनके पुत्रों के नाम सुमन्तु, बर्बरि, सुबन्धु और कुशिकन्धर होते हैं। (वही, 23/185-194)

दारुकः

इक्कीसवें द्वापर के दारुक नामक शिव के पुत्र होते हैं प्लक्ष, दाक्षायणि, केतुमाली और बक। (वही, 23/195-197)

देवादिदेव महादेव शिव

लाङ्गली

बाइसवें द्वापर के शिव लाङ्गली एवं उनके चार पुत्र सुधार्मिक, मधुपिङ्गाक्ष, तुल्यार्थि और श्वेतकेतु होते हैं। (वही, 23/198-201)

श्वेतः

तेईसवें द्वापर में शिव नामक शिव के कालअर पर्वत पर ऊसिंज, बृहदुथ्य, देवल और कवि नामक चार तेजस्वी पुत्र होते हैं। (वही, 23/203-205)

शूली

चौबीसवें द्वापर में शूली नामक महायोगी शिव के पुत्र होते हैं शालिहोत्र, अग्निवेश, युवनाश्व और शरद्वसु। (वही, 23/206-207)

दण्डी मुण्डीश्वरः

पचीसवें द्वापर में वसिष्ठ के व्यास होने पर शिव दण्डी मुण्डीश्वर कहलाते हैं तथा उनके योगी महात्मा पुत्र होते हैं छगल, कुम्भकर्ण, कुम्भ और प्रवाहुक। (वही, 23/208-211)

सहिष्णुः

छब्बीसवें द्वापर में पराशर व्यास के समय सहिष्णु नामक शिव के पुत्र होते हैं उलूक, वैद्युत, शर्वक और आश्वलायन। (वही, 23/212-213)

सोमशर्मा

सत्ताईसवें द्वापर में सोमशर्मा नामक ब्राह्मण श्रेष्ठ के रूप में अवतरित शिव के अक्षपाद, कणाद, उलूक और वत्स नामक पुत्र होते हैं। (वही, 23/214-216)

नकुली

अट्ठाईसवें द्वापर में श्रीकृष्ण वासुदेव के समय नकुली नाम से शिव ब्रह्मचारी होते हैं जिनके कुशिक, गार्ग्य, मित्रक और रुष्ट नामक चार पुत्र हैं। (वही, 23/217-223)

प्रथमतः यह उल्लेखनीय है कि वायुपुराण में वर्णित विभिन्न द्वापरों के शिव-अवतारों के नाम कहीं कहीं पर शिव-पुराण में प्रदत्त नामों से नहीं मिलते हैं यथा चतुर्थ द्वापर में सुहोत्री का सुहोत्र, अष्टम द्वापर का शिव-अवतार जहां अनुलिखित है, वहीं शिव-पुराण में उन्हें दधिवाहन नाम से परिचित करवाया गया है। एकादश अवतार का नाम तप दिया गया है। त्रयोदश द्वापर के बालि का नाम बलि तथा उन्नीसवें अवतार लाङ्गली का लाङ्गलीभीम उपलब्ध होता है। अट्ठाईसवें द्वापर में नकुली नामक शिव-अवतार

देवादिदेव महादेव शिव

का अभिधान लकुली मिलता है। (शिव, शत, 4/सम्पूर्ण; 5/1-49)

इनके अतिरिक्त भी शिव के अन्य अनेक अवतारों का विवरण उपलब्ध है जिनमें से भैरव एक प्रमुख अवतार है।

भैरव:

भैरव को महादेव शिव का पूर्णरूप ही माना जाता है। ब्रह्मा तथा विष्णु जिस समय शिवमाया से मोहित होकर गर्वोन्मत्त हो गए थे तथा शिव के ऐश्वर्य को ही नकारने लगे थे, तब शिव ने अपने क्रोध से भैरव को उत्पन्न किया था। साक्षात् कालरूप होने के कारण वे ही कालराज, कालभैरव, आमर्दक, पापभक्षण आदि सार्थक अभिधानों से जाने जाते हैं। उसी के अनन्तर शिव ने ब्रह्महत्या को भी उत्पन्न किया। इन्हीं भैरव ने ब्रह्मा के पञ्चम सिर का छेदन किया था। (शिव, शत, 9/सम्पूर्ण)

वीरभद्र:

शिवपुराण के अनुसार वीरभद्र भी शिव-अवतार हैं जिन्होंने दक्षयज्ञ का विध्वंस किया था।

शार्दूल

दिति-पुत्रों हिरण्याक्ष तथा हिरण्यकशिपु में से हिरण्याक्ष को जिस समय वाराह-अवतारी विष्णु ने मार दिया तब हिरण्यकशिपु ने तप करके ब्रह्मा से अवध्यता का वर प्राप्त कर लिया तथा देवों को वशीभूत करके राज्य करने लगा। उसके अत्याचारों के प्रतीकार हेतु विष्णु ने नृसिंह रूप धारण कर उसका वध कर दिया। तदुपरान्त सर्वत्र शान्ति विराजित होने पर भी नृसिंह भगवान् का क्रोध कथमपि शान्त नहीं हो पा रहा था। अनन्योपाय हो देववृन्द शिव की शरण में गए। शरणागत को अपनी आत्मा से भी अधिक चाहने वाले शिव ने शान्तिदूत बनाकर वीरभद्र तथा नन्दीश्वर को भेजा किन्तु उनके प्रयास के असफल हो जाने पर और नृसिंह के शिव-महिमा को विस्मृत कर भयङ्कर हो जाने पर शिव शार्दूल रूप में अवतरित हुए। उनकी सहस्र भुजाएं थी। वे जटाशोभित, चन्द्रमौलि, पंखों तथा चोंच से शोभित, दीर्घभुजा तथा चार चरणों से युक्त त्रिनयन, भयानक आकार वाले थे। वे नृसिंह के समक्ष अवतरित हुए। उन्होंने अपनी पूंछ से उनके पैरों तथा दोनों भुजाओं से उनकी भुजाओं को बांधकर उन्हें आकाश में ले गए। उसी समय विष्णु का गर्व खण्डित हो गया तभी वे शिव की स्तुति करने लगे। देवगण ने भी उन शरभरूपी शिव का स्तवन किया। (शिव, शत, अध्याय 10-12 सम्पूर्ण)

गृहपति

विश्वानर नामक शिवभक्त मुनि पत्नी शुचिष्मती की प्रेरणा से वाराणसी में वीरेश लिङ्ग की पुत्रकामना से आराधना करने लगा। उसमें से अष्टवर्षीय बालक के रूप में प्रकट होकर शिव ने उसको अभीष्ट वर दिया कि वे स्वयं विश्वानर के पुत्ररूप में उत्पन्न होंगे। पुत्र उत्पन्न होने पर उनका नाम गृहपति रखा गया तथा स्वयं ब्रह्मा ने उनका जातकर्म आदि संस्कार किए। नारद द्वारा उनको मृत्यु-भय दिखलाने पर उन्होंने काशी जाकर कठोर तप किया। उससे प्रसन्न होकर स्वयं शिव ने प्रत्यक्ष होकर उन्हें अग्निपद का भागी बनने का वर दिया। शिव ने कहा, 'तुम सभी देवताओं का मुख बनोगे। समस्त प्राणियों के भीतर रहने वाले अग्नि बनो। तुम्हारे द्वारा स्थापित लिङ्ग अग्नीश्वर कहलायेगा।' (शिव, शत, 13/35-47, 15/8-55; स्कन्द, काशी, पूर्व, 11/5-162)

शिव-दश अवतार

शिव के ऊपर वर्णित अवतारों की परम्परा में अन्य भी अनेक अवतारों का उल्लेख मिलता है। उस विस्तार में न जाते हुए शिवपुराण अनुसार उनके आद्य दस अवतारों को ही संक्षिप्त में प्रस्तुत किया जा रहा है -

महाकाल - सज्जनों को मुक्ति तथा मुक्ति देने वाले महाकाल नामक अवतार हैं जिनकी शक्ति महाकाली भी भक्तों का अभीष्ट पूर्ण करती हैं।

तार - तार (तारक) नामक उनका दूसरा अवतार तारा नामक शक्ति के साथ भक्तों को सुख, मुक्ति, मुक्ति प्रदान करते हैं।

भुवनेश बाल - शिव के उक्त अवतार भुवनेशी बाला के साथ सर्वदा सुखद हैं।

श्री विद्येश षोडश - श्री विद्या षोडशी नामक अपनी शक्ति के साहचर्य में श्री विद्येश षोडश भक्तों को भोग, मोक्ष और सुख आदि देते हैं।

भैरव - भैरवी गिरिजा नाम्नी अपनी शक्ति के साथ भैरव उपासकों की कामनाओं की पूर्ति करते हैं।

छिन्नमस्तक - छिन्नमस्तका के साथ छिन्नमस्तक शिव भक्तों के लिए कामप्रद हैं।

धूमवान् - सप्तम अवतार धूमवान् धूमवती के साहचर्य में उपासकों की कामनाओं को पूर्ण करते हैं।

बगलामुख - महानन्दा बगलामुखी के साथ बगलामुख शिव सुख-प्रदाता हैं।

देवादिदेव महादेव शिव

मातङ्ग — मातङ्गी शिवानी के साथ मातङ्ग शिव सर्वकामफल—प्रदाता हैं।

कमल — अपने भक्तों का परिपालन करने वाली कमला के साथ कमल समस्त भुक्ति तथा मुक्ति के प्रदाता हैं। (वही, शत, 17/1-11)

नन्दीश्वर के कथन को स्मरण करते हुए कि शिव के असंख्य अवतार हैं, अधिक विस्तार में न जाते हुए शिव पुराण में उल्लिखित उनके अवतारों में से केवल कुछ नामों को परिगणित करते हुए इस प्रसङ्ग की इति की जाती है — यज्ञेश्वर, कपाली, पिङ्गल, भीम, विरूपाक्ष, विलोहित, शास्ता, अजपाद, अहिर्बुध्न्य, शम्भु, चण्ड, भव, महेश, वृषेश्वर, पिप्पलाद, वैश्यनाथ, द्विजेश्वर, यतिनाथ, कृष्णदर्शन, अवधूतेश्वर, भिक्षुवर्य, सुरेश्वर, जटिल, ब्रह्मचारी, सुनर्तकनट, साधुद्विज, अश्वत्थामा, किरात आदि। (वही, शत, अध्याय 1 - 42)

शिव – नाम

शिव के इस परिचयात्मक प्रस्तुति के उपरान्त उनके कवच आदि का परिचय अपेक्षित है। वस्तुतः नामी और नाम में कोई पार्थक्य नहीं होता है अतः नामी के समान नाम भी महत्वपूर्ण है। इसी कारण वाङ्मय में महेश्वर महादेव के पूर्व उल्लिखित सहस्रनामों तथा उनके स्तुतियों के अतिरिक्त अष्टोत्तरशतनाम, नामावलि, अष्टोत्तरमूर्ति, कवच तथा विभिन्न तीर्थों में अर्चनीय शिवनाम भी उपलब्ध हैं। उनको क्रमशः प्रस्तुत करना ही उचित ही होगा।

सहस्रनाम

पौराणिक साहित्य में देवों में से केवल शिव तथा विष्णु ही दो देव हैं जिनके सहस्रनाम उपलब्ध हैं। उन दोनों के ही चार-चार सहस्रनाम मिलते हैं।

महादेव के जो चार सहस्रनाम उपलब्ध हैं वे प्रसङ्ग के अनुरूप उस-उस स्थान पर पहले ही उल्लिखित कर दिये गए हैं। सार रूप में स्पष्ट करना उचित ही होगा कि स्वयं ब्रह्मा ने भक्तिभाव से शिव के दस सहस्र नामों में से मथकर जिन सहस्र नामों को निकाला था वह स्तवराज कहलाता है। उसे पहले तण्डि ने और अनन्तर उपमन्यु ने वासुदेव कृष्ण को सुनाया था। यह अष्टोत्तर सहस्रनाम है। (मह, अनु, 17/30-150)

ब्रह्मा से सुनकर तण्डि ने इसी का पाठ किया जिसमें नूतन तीन सौ पचपन नाम हैं पर यह भी सहस्रनाम ही कहलाता है। (लिङ्ग, पूर्व, 65/54-168)

इन दोनों के अतिरिक्त अन्य दो सहस्रनाम के वक्ता विष्णु हैं जिनमें से एक को उन्होंने सुदर्शन चक्र प्राप्त करने के लिए पढ़ा था। (वही, पूर्व, 98/27-159)

दूसरे सहस्रनाम में से प्रत्येक शिवनाम का उच्चारण करते हुए वे एक-एक कमल भी शिव को अर्पित करने लगे। अन्त में एक कमल के अभाव में अपना एक नेत्र ही समर्पित कर दिया तथा शिव का साक्षात्कार किया। (शिव, कोटि, 35/1-132)

शतनाम

कार्तिक शुक्ला त्रयोदशी को शिव-अर्चना के उपरान्त की जाने वाली शिव-स्तुति, जिसका पाठ कर प्रदक्षिणा करने वाला शिवलोक को जाता है, के शतनाम निम्नाङ्कित हैं— रुद्रः, शार्दूलः, यज्ञान्तः, दुर्गः, भीमः, ऋषभः, अव्ययः, दुर्गपारः, नीलकण्ठः, मितः, महेशः, दुर्गावयवसाक्षी, कपदर्दी, सिद्धः, हरः, लिङ्गरूपः, सुरेशः, परमेष्ठी, त्रिनेत्रः, लिङ्गम्, व्योमकेशः, वेदगीतः, त्रिवेदः, लिङ्गानां पतिः, वृषध्वजः, गुप्तः, वेदाङ्गः, प्रभावरूपः, सोमः, वेदगुह्यः, अर्थः, प्रभावार्थः, सोमनाथः, दीर्घः, अर्थस्वरूपः, कारणकारणः, दिगम्बरः, दीर्घरूपः, परमार्थः, मृत्युञ्जयः, भृङ्गः, दीर्घार्थः, विश्वरूपः, भवस्वरूपी, उमाकान्तः, महीयान्, विश्वः, त्रियम्बकः, तपोमयः, व्योमरूपः, शङ्करः, शितिकण्ठः, व्याप्तः, कल्याणः, कालः, भर्गी, शिपिविष्टः, विशिष्टः, कालावयवरूपी, गौरीयुज्ज, व्यालप्रियः, शिष्टः, अरूपः, मङ्गलहेतुः, व्यालपतिः, परमात्मा, व्यालपतिः, गजकृत्तिधरः, विरूपः, महीधरः, अन्धकासुरभेदी, सूक्ष्मसूक्ष्मः, व्योमः, नीललोहितशुक्लः, श्मशानवासी, पशूनां पतिः, चण्डमुण्डप्रियः, कृत्तिवासाः, त्रिपुरघ्नः, भक्तिप्रियः, शशाङ्कशेखरः, सिंहः, देवः, रुद्रभूमिश्रितः। (नारद, पूर्व, 122/50-67) (ध्यातव्य है कि शतनाम कहने पर भी नाम मात्र नब्बे हैं।)

अष्टोत्तरशतनाम

अधीत वाङ्मय में शिव के दो अष्टोत्तरशतनाम उपलब्ध हैं। शिवविरोधी वचनों से क्रुद्ध वीरभद्र द्वारा आक्रान्त नृसिंह विष्णु ने शिव के जिन अष्टोत्तरशतनाम का पाठ किया वे हैं—रुद्रः, शर्वः, महाग्रासः, विष्णुः, उग्रः, भीमः, क्रोधः, मनुः, भवः, शर्वः, शङ्करः, शिवः, कालकालः, कालः, महाकालः, मृत्युः, वीरः, वीरभद्रः, क्षयद्वीरः, शूली, महादेवः, महान्, पशूनां पतिः, एकः, नीलकण्ठः, श्रीकण्ठः, पिनाकीः, अनन्तः, सूक्ष्मः, मृत्युमनुः, परः, परमेशः, परात्परतरः, परात्परः, विश्वः, विश्वमूर्तिः, विष्णुकलत्रः, विष्णुक्षेत्रः, भानुः, कैवर्तः, किरातः, महाव्याधः, शाश्वतः, भैरवः, शरण्यः, महाभैरवरूपी, नृसिंहसहर्ता, कामकालपुरारिः, महापाशौघसंहर्ता, विष्णुमायान्तकारी, त्र्यम्बकः, त्र्यक्षरः, शिपिविष्टः, मीढुषः, मृत्युञ्जयः, शर्वः, सर्वज्ञः, मखारिः, मखेशः, वरेण्यः, वह्निरूपीः, महाघ्राणः, जिह्वः, प्राणापानप्रवर्ती, त्रिगुणः, त्रिशूलः, गुणातीतः, योगी, संसारः, प्रवाहः, महायन्त्रप्रवर्ती, चन्द्राग्निसूर्यः, मुक्तिवैचित्र्यहेतुः, वरदः, अवतारः, सर्वकारणहेतुः, कपाली, करालः, पतिः, पुण्यकीर्तिः, अमोघः, अग्निनेत्रः, लकुलीशः, शम्भुः, भिषक्तमः, मुण्डः, दण्डी, योगरूपी, मेघवाहः, देवः, पार्वतीपतिः, अव्यक्तः, विशोकः, स्थिरः, स्थिरधन्वीः, स्थाणुः, कृत्तिवासाः, पञ्चार्थहेतुः, वरदः, एकपादः, चन्द्रार्धमौलिः, अध्वरराजः, वयसां पतिः, योगीश्वरः, नित्यः, सत्यः, परमेष्ठी, सर्वात्मा, सर्वेश्वरः। (लिङ्ग, पूर्व, 96/76-94)

देवादिदेव महादेव शिव

द्वितीय अष्टोत्तरशतनाम में परिगणित शिवनाम हैं — शम्भुः, शिवः, ईशः, शशिशेखरः, शूलपाणिः, गङ्गाधरः, अन्धकरिपुः, हरः, नीलकण्ठः, भूतेशः, खण्डपरशुः, मृडः, चण्डिकेशः, गौरीपतिः, गिरिशः, शङ्करः, चन्द्रचूडः, मृत्युञ्जयः, उग्रः, विषमेक्षणः, कामशत्रुः, ईशानः, कृत्तिवसनः, त्रिदशैकनाथः, श्रीकण्ठः, दिग्वसनः, शान्तः, पिनाकपाणिः, सर्वेश्वरः, त्रिपुरसूदनः, देवदेवः, त्र्यक्षः, उरगाभरणः, बालः, मृगाङ्गमौलिः, भूतेशः, मन्मथरिपुः, प्रमथाधिनाथः, शूली, गिरीशः, रजनीशकलावतंसः, भर्गः, त्रिनेत्रः, भवः, भूतपतिः, पुशरिः, कर्पूरगौरः, वृषभध्वजः, भालनेत्रः, स्थाणुः, त्रिलोचनः, पिनाकधरः, स्मरारिः, विश्वेश्वरः, त्रिपथगार्द्रजटाकलापः। यमराज का कहना है कि प्रस्तुत अष्टोत्तरशतनाम की सुचारु माला कण्ठ में धारण करने वालों को यम का भय नहीं होता है। यमदूत ऐसे व्यक्तियों का स्पर्श नहीं करते हैं। (स्कन्द, काशी, पूर्व, 8/98-108)

नामावली

शिव की एक नामावली उपलब्ध है। महाभारत युद्ध के उपरान्त सोये हुए पाण्डवपुत्र आदि का वध करने को प्रस्तुत अश्वत्थामा ने महादेव शिव का अर्चन किया। उसमें प्रयुक्त शिव-नाम हैं — उग्रः, स्थाणुः, शिवः, रुद्रः, शर्वः, ईशानः, ईश्वरः, गिरिशः, वरदः, देवः, भवः, भावनः, अव्ययः, शितिकण्ठः, अजः, शक्रः, क्रथः, क्रतुहरः, हरः, विश्वरूपः, विरूपाक्षः, बहुरूपः, उमापतिः, श्मशानवासी, दृप्तः, महागणपतिः, प्रभुः, खट्वाङ्गधारी, मुण्डः, जटिलः, ब्रह्मचारी, त्रिपुरघाती, स्तुतः, स्तुत्यः, स्तूयमानः, अमोघः, चर्मवासाः, विलोहितः, नीलकण्ठः, अपृक्तः, दुर्निवारणः, शुक्रः, विश्वसृक्, ब्रह्म, ब्रह्मचारी, व्रतवान्, तपः, नित्यः, अनन्तः, तपतां गतिः, बहुरूपः, गणाध्यक्षः, त्र्यक्षः, पारिषदप्रियः, गणाध्यक्षेक्षितमुखः, गौरीहृदयवल्लभः, कुमारपिता, पिङ्गः, गोवृषोत्तमवाहनः, तनुवासा, अत्युग्रः, उमाभूषणतत्परः, परः परेभ्यः, परमः, इष्वस्त्रोत्तमभर्ता, चन्द्रमौलिविभूषितः, दिगन्तः, दक्षिणः, हिरण्यकवचः। (महा, सौप्तिक, 7/1-11)

कवच

शिव भगवान् का जो कवच उपलब्ध है उसमें शिव के विविध अभिधानों से विभिन्न अङ्गों अथवा दिशाओं या स्थानों की रक्षा प्रार्थनीय है। उक्त कवच ब्रह्माण्ड-विजय कहलाता है जिसे स्वयं नारायण विष्णु ने देवर्षि नारद को बताया था —

शिवनाम	—	रक्षणीय अङ्ग	शिवनाम	—	रक्षणीय अङ्ग
शिवः	—	मस्तक, भाल	भूतनाथः	—	पैर
संहारकर्ता	—	कान	सर्वेश्वरः शर्वः	—	पैर

देवादिदेव महादेव शिव

शिवनाम	—	रक्षणीय अङ्ग	शिवनाम	—	रक्षणीय अङ्ग
पञ्चवक्त्रः	—	दांत	भूतेशः	—	पूर्व दिशा
महेशः	—	अधर	शङ्करः	—	आग्नेय
त्रिनेत्रः	—	केश	रुद्रः	—	दक्षिण
महादेवः	—	वक्ष	स्थाणुः	—	नैऋत्य
रुद्रः	—	नाभि	खण्डपरशुः	—	पश्चिम
ईश्वरः	—	पृष्ठ	चन्द्रशेखरः	—	वायव्य
मृत्युञ्जयः	—	भौंह, बाहु, अधोभाग	गिरिशः	—	उत्तर
ईशानः	—	पार्श्व	मृडः	—	ऊर्ध्वदिशा
ईश्वरः	—	उदर, ईशान दिशा	महेश्वरः रुद्रः	—	नितम्ब
पिनाकी	—	जल, स्थल, अन्तरिक्ष,	(ब्रह्मवै, गण, 35/121-135)		
स्वप्न, जागरण।					

शिव का एक अन्य कवच भी उपलब्ध है जो स्वयं महेश्वर शिव ने बाणासुर को प्रदान किया था। वह निम्नाङ्कित है—

शिवनाम	—	रक्षणीय अङ्ग	शिवनाम	—	रक्षणीय अङ्ग
शम्भुः	—	मस्तक	वृषभवाहनः	—	स्कन्ध
महेश्वरः	—	मुख	नीलकण्ठः	—	वक्षस्थल
नीलकण्ठः	—	दन्तपङ्क्ति	दिगम्बरः	—	पृष्ठ
हरः	—	अधरोष्ठ	विश्वेशः	—	सर्वाङ्ग
चन्द्रचूडः	—	कण्ठ	स्थाणुः	—	स्वप्न, जागरण।
(ब्रह्मवै, ब्रह्म, 19/49-51)					

शिव के अग्रिम कवच में अङ्गों के नाम नहीं बताये गए हैं। इसमें ऋषभ ऋषि ने शिव अर्चना का विधान बताते हुए उनका कवच के साथ स्तवन बताया। उसकी नामावलि है — सकलतत्त्वात्मकः, सकलतत्त्वविहारः, सकललोकैककर्ता, सकललोकैकभर्ता, सकललोकैकहर्ता, सकललोकैकगुरुः, सकललोकैकसाक्षी, सकलनिगमगुह्यः, सकलवरप्रदः, सकलदुरितार्तिभञ्जनः, सकलजगदभयङ्करः,

देवादिदेव महादेव शिव

सकललोकैकशङ्करः, शशाङ्कशेखरः, शाश्वतनिजाभासः, निर्गुणः, निरुपमः, नीरूपः, निराभासः, निरामयः, निष्प्रपञ्चः, निष्कलङ्कः, निर्द्वन्द्वः, निःसङ्गः, निर्मलः, निर्गमः, नित्यरूपविभवः, निरुपमविभवः, निराधारः, नित्यशुद्धबुद्धपरिपूर्णसच्चिदानन्दाद्वयः, परमशान्तप्रकाशतेजोरूपः, महारुद्रः, महारौद्रः, भद्रावतारः, दुःखदावदारणः, महाभैरवः, कालभैरवः, कल्पान्तभैरवः, कपालमालाधरः, खट्वाङ्गखड्गचर्मपाशाङ्कुशडमरु-
शूलचापबाणगदाशक्तिभिण्डिपालतोमरमुसलमुद्गपट्टिशपरशुपरिघमुशुण्डीशतघ्नी-
चक्राद्यायुधभीषणकरसहस्रः, मुखदंष्ट्राकरालः, विकटाट्टहासविस्फारितब्रह्ममण्डलः, नागेन्द्रकुण्डलः, नागेन्द्रहारः, नागेन्द्रवलयः, नागेन्द्रचर्मधरः, मृत्युञ्जयः, त्र्यम्बकः, त्रिपुरान्तकः, विरूपाक्षः, विश्वेश्वरः, विश्वरूपः, वृषवाहनः, विषमूषणः, विश्वतोमुखः।
(स्कन्द, ब्राह्म, ब्रह्म, 12/28)

अष्टोत्तरशतमूर्ति

शिव की अष्टोत्तरशत मूर्तियों की तालिका भी उपलब्ध है। परमात्मा शिव की निम्नलिखित अष्टोत्तरशत मूर्तियों का ध्यान करने से व्यक्ति महाभय से मुक्त हो जाता है - अन्धकः, धैर्यसम्पन्नः, दानवेशः, तपस्वी, महादेवः, विरूपाक्षः, चन्द्रार्द्धकृतशेखरः, अमृतः, शाश्वतः, स्थाणुः, नीलकण्ठः, पिनाकी, वृषभाक्षः, महाज्ञेयः, पुरुषः, सर्वकामदः, कामारिः, कामदहनः, कामरूपः, कपर्दी, विरूपः, गिरिशः, भीमः, सग्वी, रक्तवासाः, योगी, कालदहनः, त्रिपुरघ्नः, कपाली, गूढव्रतः, गुप्तमन्त्रः, गम्भीरः, भावगोचरः, अणिमादिगुणाधारः, त्रिलोक्यैश्वर्यदायकः, वीरः, वीरहणः, घोरः, मांसलः, पट्टः, महामांसादः, उन्मत्तः, भैरवः, महेश्वरः, त्रैलोक्यद्रावणः, लुब्धः, लुब्धकः, यज्ञसूदनः, कृत्तिकानां सुतैर्युक्तः, कृत्तिवासाः, गजकृत्तिपरीधानः, क्षुब्धः, भुजगभूषणः, दद्यालम्बः, वेतालः, शाकिनिपूजितः, अघोरः, घोरदैत्यघ्नः, घोरघोषः, वनस्पतिः, भस्माङ्गः, जटिलः, शुद्धः, भेरुण्डशतसेवितः, भूतेश्वरः, भूतनाथः, पञ्चभूताश्रितः, खगः, क्रोधितः, निष्ठुरः, चण्डः, चण्डीशः, चण्डिकाप्रियः, तुङ्गः, गरुत्मान्, नित्यम्, आसवभोजनः, लेलिहानः, महारौद्रः, मृत्युः, मृत्योरगोचरः, मृत्योर्मृत्युः, महासेनः, श्मशानारण्यवासी, रागः, विरागः, रागान्धः, वीतरागशताचितः, सत्त्वः, रजः, तमः, धर्मः, अधर्मः, वासवानुजः, सत्यम्, असत्यम्, सद्रूपः, असद्रूपः, अहेतुकः, अर्द्धनारीश्वरः, भानुः, भानुकोटिशतप्रभः, यज्ञः, यज्ञपतिः, रुद्रः, ईशानः, वरदः। (शिव, रुद्र, युद्ध, 49/3-18)

श्रीकण्ठमातृकान्यास

शिव अर्धनारीश नाम से सम्पूर्ण मनोरथों को देने वाले श्रीकण्ठमातृकान्यास के देवता हैं। इस न्यास में शिव के शक्ति सहित इक्यावन युग्मों की स्थापना की जाती है।

देवादिदेव महादेव शिव

वस्तुतः अर्धनारीश देवता से सम्पूर्ण मनोरथों की प्राप्ति के लिये श्रीकण्ठमातृका न्यास का विनियोग करने का विधान है। इसके ऋषि दक्षिणामूर्ति तथा छन्द गायत्री है। इस विधान में अर्धनारीश शिव के देवता होने के कारण श्रीकण्ठ शिव तथा उनकी शक्तिरूपिणी इक्यावन युगम स्थापित करने का विधान है। इसमें शिव का बन्धूकपुष्पशोभित तथा स्वर्णवर्ण युक्त रूप, जिनके हाथों में वरमुद्रा, अक्षमाला, अङ्कुश तथा पाश है तथा जो अर्धेन्दुशेखर, त्रिनेत्रधारी तथा देवों के वन्दनीय हैं, का ध्यान करना चाहिए। इस न्यास में शिव के जिन इक्यावन युगों की स्थापना की जाती है वह तालिका प्रस्तुत है—

शिव—नाम	मातृका—नाम	शिव—नाम	मातृका—नाम
श्रीकण्ठेशः	पूर्णदरी	अनन्तेशः	विरजा
सूक्ष्मेशः	शाल्मली	त्रिमूर्तीशः	लोलाक्षी
महेश्वरेशः	वर्तुलाक्षी	अधीशः	दीर्घघोणा
भारभूतीशः	दीर्घमुखी	तिथीशः	गोमुखी
स्थावरेशः	दीर्घजिह्वा	युगधरेशः	कुण्डोदरी
क्षिप्येशः	उर्द्धकेशी	भौतिकेशः	विकृतास्या
सद्येशः	ज्वालामुखी	अनुग्रहेशः	उत्कामुखी
अक्रूरेशः	आस्या	महासेनेशः	विद्या
क्रोधीशः	महाकाली	चण्डेशः	सरस्वती
पञ्चान्तकेशः	सिद्धगौरी	शिवोत्तमेशः	त्रैलोक्यविद्या
एकरुद्रकेशः	मन्त्रशक्तिः	कूर्मेशः	कमठी
एकनेत्रकेशः	भूतमाता	चतुर्वक्त्रेशः	लम्बोदरी
अजेशः	द्राविणी	सर्वेशः	नागरी
सोमेशः	खेचरी	लाङ्गलीशः	मर्यादा
दारुकेशः	रूपिणी	अर्धनारीशः	वारुणी
उमाकान्तः	काकोदरी	आषाढीशः	पूतना
दण्डीशः	भद्रकाली	अत्रीशः	योगिनी

देवादिदेव महादेव शिव

शिव-नाम	मातृका-नाम	शिव-नाम	मातृका-नाम
मीनेशः	शङ्खिनी	मेषेशः	तेजिनी
लोहितेशः	कालरात्रिः	शिखीशः	कुजनी
छलगण्डेशः	कपर्दिनी	द्विरण्डेशः	वज्रा
महाबलेशः	जया	बलीशः	सुमुखेश्वरी
भुजङ्गेशः	रेवती	पिनाकीशः	माधवी
खड्गीशः	वारुणी	बकेशः	वायवी
श्वेतोरस्केशः	विदारिणी	भृग्वीशः	सहजा
लकुलीशः	लक्ष्मी	शिवेशः	व्यापिनी
संवर्तकेशः	महामाया	(नारद, पूर्व, 66/106-122½)	

शिवनाम – तीर्थक्षेत्र

अर्चनीय देव का प्रत्येक नाम ही महत्त्वपूर्ण तथा कल्याणप्रद होने पर भी स्थान विशेष में विशेष नाम का महत्त्व भी विशिष्ट होता है। इसी कारण विभिन्न तीर्थों में देवी पार्वती के साथ शिव पृथक् – पृथक् अभिधान से पूजित तथा स्मरणीय हैं। ऐसी दो तालिका स्कन्द पुराण के माहेश्वर तथा नागर खण्ड में उपलब्ध हैं जिन्हें क्रमशः प्रस्तुत किया जा रहा है।

तीर्थनाम	शिवनाम	देवीनाम	सन्दर्भ
बदरिका	त्र्यम्बकः		2/25
नैमिषम्	देवदेवः	सारङ्गधारिणी	2/25
अमरेशम्	ओङ्कारः	चण्डिका	2/26
पुष्करम्	रुजोगन्धिः	पुरुहूता	2/27
आषाढी	आषाढेशः	रतीशा	2/28
दण्डिमुण्डी	मुण्डी	दण्डिका	2/29
लाकुलम्	लाकुलीशः	सर्वमङ्गला	2/30
भारभूतिः	भारः	भूतिः	2/31

देवादिदेव महादेव शिव

तीर्थनाम	शिवनाम	देवीनाम	सन्दर्भ
अरालकेश्वरम्	सूक्ष्मः	सूक्ष्मा	2/32
गया	प्रपितामहः	मङ्गला	2/33
कुरुक्षेत्र	स्थाणुः	स्थाणुप्रिया	2/34
कनखल	उग्रः	उग्रा	2/35
तालक	स्वयम्भूः	स्वयम्भुवी	2/36
अट्टहास	ईशः		2/37
कृत्तिवास	कृत्तिवासाः		2/37, 38
श्रीशैल	मल्लिकार्जुनः	भ्रमराम्बिका	2/38
सुवर्णमुखर	कालहस्ती	भृङ्गमुखरालका	2/40
काञ्ची	कामशासनः	कामाक्षी	2/41
व्याघ्रपुर	ईशानः		2/42
सेतुबन्ध	रामनाथः		2/44
गतप्रति	वृषभध्वजः		2/45
मध्यार्जुन	हरः	गौरी	2/46
सोमतीर्थ	सोमनाथः		2/48
सिद्धवट	ज्योतिर्लिङ्गम्		2/49
कमलालय	वल्मीकेशः		2/50
कङ्काट्रिः	हरः		2/51
द्रोणपुर	पार्वतीपतिः		2/52
ब्रह्मपुर	धूर्जटिः		2/53
श्रीकोटि	इन्दुशेखरः		2/54
गोकर्ण	शिवः		2/55
त्रिपुरान्तकक्षेत्र	त्रियम्बकः		2/56
कालाञ्ज	कालकन्धरः		2/57

देवादिदेव महादेव शिव

तीर्थनाम	शिवनाम	देवीनाम	सन्दर्भ
प्रभास	खण्डेन्दुशेखरः		2/59
वेदारण्य	प्रमथनायकः		2/60
हेमकूट	विषमचक्षुः		2/61
ज्वालामुख	कालरुद्रः	ज्वालामुखी	2/64
भद्रवटः	त्र्यम्बकः		2/65
न्यग्रोधारण्य	उग्रः	काली	2/66
गन्धमादन	मृत्युञ्जयः		2/67
गोपर्वत	शम्भुः		2/68
महातीर्थ	शम्भुः		2/70
मयूरपुर	माहेश्वरः		2/71
श्रीसुन्दर	देवदेवः		2/72
कुम्भकोण	शम्भुः		2/73
श्रीपाटल	गङ्गाधरः		2/75
कदम्बपुरी	शम्भुः		2/76
अविनाश	वृषध्वजः		2/77
रक्तकानन	रुद्रः		2/78
कैलास	त्र्यक्षः		2/80

(स्कन्द, माहे, अरुणा, उत्तर, 2/25-80)

शिव के अनेक नामों में से निम्न अड़सठ नाम अड़सठ विभिन्न तीर्थों में प्रसिद्ध एवं पूजित हैं—

शिव नाम	तीर्थ	शिवनाम	तीर्थ
महादेवः	वाराणसी	भवः	वस्त्रापथ
महेश्वरः	प्रयाग	उग्रः	कनखलः

देवादिदेव महादेव शिव

शिव नाम	तीर्थ	शिवनाम	तीर्थ
देवदेवः	नैमिष	शिवः	भद्रकर्ण
प्रपितामहः	गया	दण्डी	दण्डक
स्थाणुः	कुरुक्षेत्र	ऊर्ध्वरेताः	त्रिदण्डा
शशिशेखरः	प्रभास	चण्डीशः	कृमिजाङ्गल
अजागन्धिः	पुष्कर	कृत्तिवासः	एकाम्र
विश्वः	विश्वेश्वर	कपर्दी	छागलेय
महानादः	अट्टहास	नीलकण्ठः	कालिअर
महाव्रतः	महेन्द्र	श्रीकण्ठः	मण्डलेश्वर
महाकालः	उज्जयिनी	विजयः	काश्मीर
महोत्कटः	मरुकोट	जयन्त	मरुकेश्वर
महातेजः	शङ्खकर्ण	हरः	हरिश्चन्द्र
महाबलः	गोकर्ण	शङ्करः	पुरश्चन्द्र
महायोगः	रुद्रकोटी	जटी	वामेश्वर
महालिङ्गम्	स्थलेश्वर	सौम्यः	कुक्कुटेश्वर
हर्षः	हर्षित	भूतेश्वरः	भस्मगात्र
वृषभः	वृषभध्वज	अमरकण्टकः	ओङ्कार
ईशानः	केदार	त्र्यम्बकः	त्रिसन्ध्या
शर्वः	मध्यमकेश्वर	त्रिलोचनः	विरजा
सुपर्णाक्षः	सहस्राक्षः	दीप्तः	अर्केश्वरः
सुसूक्ष्मः	कार्तिकेश्वर	पशुपालकः	नेपाल
यमलिङ्गम्	दुष्कर्ण	कपाली	करवीरक
त्रिशूली	जागेश्वर	त्रिपुरान्तकः	जागेश्वर
रोहणः	अयोध्या	हाटकेश्वरः	पाताल

देवादिदेव महादेव शिव

नकुलीशः	कायारोहण	उमापतिः	देविका
शिव नाम	तीर्थ	शिवनाम	तीर्थ
भैरवाकारः	भैरव	अमरः	पूर्वसागर
भीमः	सप्तगोदावर	गणाधिपः	कैलास
स्वयम्भूः	निर्मलेश्वर	हिमस्थानम्	गङ्गाद्वार
गणाध्यक्षः	कर्णिकार		
जलप्रियः	जललिङ्ग	अनलः	वाडवाग्नि
भीमः	बदरिकाश्रम	कोटीश्वर	श्रेष्ठ
वाराहः	विन्ध्यपर्वत	विरूपाक्षः	हेमकूट
भूर्भुवः	गन्धमादन	वरदः	लिङ्गेश्वर
नरान्तकः	लङ्का ।	(स्कन्द, नागर, 109/5-21)	

शिव-लिङ्ग

शिव-लिङ्गों के परिचय के बिना महादेव शिव का परिचय अपूर्ण ही है। यह ठीक है कि शिव के अब तक के विवरण में प्रसङ्गतः लिङ्गों का नामोल्लेख तथा अन्य विवरण भी यत्र-तत्र आ चुका है तथापि लिङ्ग का विशद परिचय अपेक्षित है।

लिङ्ग – विशद परिचय

वस्तुतः जो शिव हैं वे ही लिङ्ग हैं, जो लिङ्ग है वे ही शिव हैं।

शिव लिङ्गरूप में सर्वदा और सर्वत्र पूजनीय हैं। वस्तुतः यह समस्त लोक ही लिङ्गमय है और सभी कुछ लिङ्ग में प्रतिष्ठित है। जो व्यक्ति अपनी सिद्धि चाहता है, उसे लिङ्ग की अर्चना करनी चाहिए। समस्त देव, दैत्य, दानव, यक्ष आदि लिङ्गमूर्ति शिव की पूजा करके ही सिद्ध हुए हैं। (लिङ्ग. पूर्व, 73/5-9) लिङ्ग को लिङ्ग कहा ही इस कारण जाता है क्योंकि उसी से सम्पूर्ण जगत् प्रकट होता है तथा उसी में विलीन हो जाता है। (स्कन्द, माहे, केदार, 7/23-24) ब्रह्मा से लेकर स्तम्बपर्यन्त उसमें लीन होता है, जगत् उसमें एक भाव से समाविष्ट होता है अतः वह लिङ्ग कहलाता है। (वही, आव, रेवा, 14/23-24) लिङ्ग शब्द की व्युत्पत्ति भी इसी प्रकार की गई है, 'लयनात् लिङ्गमित्येव प्रवदन्ति मनीषिणः' अर्थात् सभी कुछ का उसी में लीन हो जाने के कारण ही तत्त्ववेत्ता उसे लिङ्ग नाम से अभिहित करते हैं। (वही, माहे, केदार, 6/30) लिङ्ग का यह भी वैशिष्ट्य है कि सभी जितेन्द्रिय, शान्त तथा भक्तिसम्पन्न महात्माओं के लिए लिङ्ग सर्वत्र सुलभ होता है। (वही, माहे, केदार, 8/66) लिङ्ग अव्यक्त, आनन्द, ज्योति और अक्षयरूप है। वेदों ने शिव को लिङ्ग के कारण लिङ्गी कहा है। (कूर्म, पूर्व, 26/63) वे प्रत्येक लिङ्ग में विराजित होते हैं। (स्कन्द, काशी, उत्तर, 99/20) मान्यता है कि शिव ने लिङ्गरूप में कालकूट विष को ग्रहण करके समस्त जगत् को निरामय कर दिया था। (वही, माहे, केदार, 10/52) शिव से श्रेष्ठ भुक्ति-मुक्ति-प्रदायक अन्य कोई नहीं हैं अतः मुमुक्षुजनों द्वारा लिङ्गरूप में शिव सदा अर्चनीय होते हैं। (वही, माहे, केदार, 19/72)

लिङ्ग को निर्गुण जानना चाहिए क्योंकि तीनों गुण उसमें लीन हो जाते हैं। (वही, माहे, केदार, 20/12)

देवादिदेव महादेव शिव

शिव ही परमब्रह्म हैं अतः जब लिङ्ग ही शिव हैं तो लिङ्ग में ब्रह्म का वाचक ओम् मूर्तिमान् रूप से विराजित होता है। लिङ्ग के दक्षिण भाग में ओम् का प्रथम अक्षर अ, वाम भाग में उ, मध्य में म तथा अन्त में प्रतिध्वनि गुञ्जित होती है। (लिङ्ग, पूर्व, 17/50-51) यह भी मान्यता है कि लिङ्ग प्रधान (प्रकृतिरूप) और लिङ्गी (लिङ्ग का अधिष्ठान) परमेश्वर शिव हैं। (वही, पूर्व, 17/5) अतः समस्त सृष्टि का मूल आधार लिङ्ग ही है। इसी कारण माना जाता है कि समस्त पुरुष लिङ्गरूप और समस्त स्त्री पिण्डीभूत होती हैं। दूसरे शब्दों में समस्त चराचर जगत् शिवशक्ति होते हैं। इसी के साथ यह भी माना जाता है कि महेश्वर शिव लिङ्गरूप और विष्णु पीठिका रूप हैं। इसी कारण समस्त देवता भी लिङ्ग की पूजा करते हैं। उन देवों के भिन्न-भिन्न प्रकार के लिङ्ग आराध्य हैं। यथा—

ब्रह्मा के आराध्य — मणिमय लिङ्ग इन्द्र के आराध्य — रत्नमय लिङ्ग
चन्द्र के आराध्य — मुक्तामय लिङ्ग भानु के आराध्य — ताम्रमय लिङ्ग
कुबेर के आराध्य — स्वर्णमय लिङ्ग वरुण के आराध्य — आरक्त लिङ्ग
यम के आराध्य — नीलमय लिङ्ग नैऋत के आराध्य — रजतमय लिङ्ग
पवन के आराध्य — काश्मीर लिङ्ग। (स्कन्द, माहे, केदार, 8/17-24)

ऐसी धारणा है कि कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष के शनिवार की त्रयोदशी को प्रदोष काल में लिङ्गरूप सदाशिव की अर्चना करने से समस्त अर्थ सिद्ध होते हैं। (वही, माहे, केदार, 17/59-60)

लिङ्ग के प्रादुर्भाव के विषय में विवरण उपलब्ध है कि पूर्वकाल में जब ब्रह्माण्ड जलमय हो गया और समस्त स्थावर और जङ्गम नष्ट हो गया तब विष्णु निद्रामग्न थे। वहां ब्रह्मा आए तथा स्वयं को तीनों लोकों का रचयिता कहने लगे। इस पर विष्णु ने उनका विरोध किया और तब दोनों में विवाद आरम्भ हो गया। उन दोनों को प्रबुद्ध करने के लिए परम-लिङ्ग प्रादुर्भूत हुआ। वह अनादि, अनन्त और मध्यवर्जित था। तब ब्रह्मा ने विष्णु को आमन्त्रित किया कि विष्णु नीचे जाकर उस लिङ्ग के आदि का और ब्रह्मा ऊपर जाकर उसके अन्त का पता लगाए। दोनों को ही आदि-अन्त का पता नहीं चला अतः दोनों ही एक स्थान पर आकर मिलित हुए। उस समय विस्मित, भीत एवं शिव की माया से मोहित ब्रह्मा और विष्णु ने लिङ्गमूर्ति शिव का स्तवन किया।

तब विराटरूप में शिव उनके समक्ष प्रकट हुए तथा उनके भय को दूर किया वर दिए और ब्रह्मा पर अनुग्रह करके वहां से अन्तर्धान हो गए। तभी से लिङ्ग की अर्चना का प्रारम्भ हुआ। (कूर्म, पूर्व, 26/63-100)

देवादिदेव महादेव शिव

लिङ्ग के प्रथम बार पूजन के सम्बन्ध में यह आख्यान भी उपलब्ध है — देवदारुवन के वासी मुनियों ने काम्य कर्मों को सम्पन्न करते हुए सपरिवार अनेक यज्ञ और तप किए। उनको निष्काम कर्म की महत्ता समझाने के लिए विशाल तथा दिगम्बर रूप में शिव तथा मनोहारिणी अनुगामिनी नारी के रूप में विष्णु ने उस वन में प्रवेश किया। तब मुनियों की साध्वी पत्नियां शिव की अनुगामिनी बनीं और मुनियों के जितेन्द्रिय-पुत्र नारीरूपिणी विष्णु के पीछे चलने लगे। शिव की माया से भ्रमित मुनियों ने महादेव शिव को अनेक कटुवचन कहे तथा उस स्त्री (विष्णु) को व्यभिचारिणी कहकर उसका त्याग करने को कहा। तदनन्तर उन्होंने दिगम्बर हो विचरण करने वाले शिव के लिङ्ग को उखाड़ने का प्रयास किया। इस पर शिव ने कहा, 'मैं स्वयं ही लिङ्ग को उखाड़ देता हूँ।' लिङ्गपात के उपरान्त शिव और विष्णु अन्तर्धान हो गए। लिङ्गपात से जगत् में उपद्रव होने लगे। तब भयभीत उन मुनियों की ब्रह्मा ने भर्त्सना की तथा भूपतित उस लिङ्ग के समान एक माहेश्वर लिङ्ग बनाकर पत्नी तथा पुत्रों सहित आदरपूर्वक उसकी पूजा करने के लिए मुनियों को उपदेश दिया। तभी से वे ब्राह्मण विषय-वासनाओं और काम-द्वेष का परित्याग करके लिङ्ग की आराधना करने लगे। (कूर्म, उत्तर, 38/2-65, 39/2-8)

यह विवरण भी उपलब्ध है कि शिव एक बार ऋषि-पत्नियों के मध्य दिगम्बर होकर विचरण करने लगे तो साध्वी स्त्रियां भी शिव की माया से मोहित होकर उनका अनुगमन करने लगीं। जब ऋषिगण ने आकर अपनी पत्नियों की यह मनःस्थिति देखी तो क्रुद्ध होकर उन्होंने शिव को षण्ड होने का शाप दिया। शापित शिव का लिङ्ग तत्क्षण भूपतित हो गया और भूमि का स्पर्श प्राप्त करते ही बढ़ने लगा और शीघ्र ही ऊपर तथा नीचे दोनों ओर से बढ़ते हुए उसने सप्त पातालों और आकाश को आवृत्त कर लिया। उस ब्रह्माण्ड में द्वैतभाव नहीं रहा तथा सभी कुछ लिङ्गमय हो गया। (स्कन्द, माहे, केदार, 6/24-28) तभी से लिङ्ग की महिमा का प्रचार हुआ।

इस आख्यान का परिवर्तित रूप यह है कि लिङ्गपात के उपरान्त शिव ने तो स्वर्ग जाकर सुरभि का आश्रय लिया और उन ब्राह्मणों ने भूपतित लिङ्ग से अनादिकाल से सञ्चित वीर्य को धरती पर व्याप्त होते देखा। उन्होंने तब उस लिङ्ग को स्थापित किया तथा उस वीर्यजल से नदी बना दी। वह नदी नर्मदा कहलाई एवं लिङ्ग अमरकण्टक। उसी की पूजा प्रारम्भ हुई। उस लिङ्ग की पूजा करने से नरक का भय नष्ट होता है। (वही, नागर, 259/3-6)

लिङ्ग का आविर्भाव तथा उसकी अर्चना का प्रारम्भ जैसे भी हुआ हो, लिङ्गों की संख्या अत्यधिक है जिनमें से प्रायः प्रत्येक को प्रतिष्ठित किये जाने की पृष्ठभूमि में

देवादिदेव महादेव शिव

कोई न कोई उपाख्यान है। यथा—प्राचीन काल में करोड़ों—जितेन्द्रिय—महर्षि देवता का दर्शन करने के लिए रुद्रतीर्थ में गए। वहां जाकर रुद्र शिव के प्रथम दर्शन करने के लिए श्रद्धालु भक्त लालायित हो उठे। उनमें इस विषय पर विवाद भी हो गया। तब महादेव—शिव ने उनकी भक्ति पर प्रसन्न होकर कोटिरूप धारण कर लिए। तभी से कोटि रुद्रों से समृद्ध वह तीर्थ कोटितीर्थ के नाम से प्रसिद्ध हुआ। (कूर्म, उत्तर, 36/2-4)

आवन्त्य क्षेत्र के अनेक लिङ्गों में से चौरासी अतीव महत्त्वपूर्ण लिङ्गों का विवरण तो स्वयं शिव ने ही दिया है।

अवन्ती क्षेत्र के महाकालवन में प्रतिष्ठित लिङ्गों के नाम हैं — अगस्त्येश्वरः, गुहेश्वरः, दुण्डेश्वरः, डमरुकेश्वरः, अनादिकल्पेश्वरः, स्वर्णजालेश्वरः, त्रिविष्टपेश्वरः, कपालेश्वरः, कर्कोटेश्वरः, सिद्धेश्वरः, स्वर्गद्वारेश्वरः, लोकपालेश्वरः, कामेश्वरः, कुटुम्बेश्वरः, ईशानेशः, अप्सरेश्वरः, कल्कलेश्वरः, नागचण्डेश्वरः, दिवापापहरः, प्रतिहारेश्वरः, कुक्कुटेशः, मेघनादेश्वरः, महाकालेश्वरः, मुक्तेश्वरः, सोमेश्वरः, अनरकेश्वरः, जटेश्वरः, रामेश्वरः, च्यवनेशः, अखण्डेशः, पतनेशः, आनन्देशः, कन्थडेशः, इन्द्रेश्वरः, मार्कण्डेशः, शिवेश्वरः, कुसुमेशः, अक्रूरेशः, कुण्डेश्वरः, लुम्पेश्वरः, गङ्गेश्वरः, शूलेश्वरः, ओङ्कारेशः, कण्टकेशः, सिंहेश्वरः, रेवन्तेश्वरः, घण्टेश्वरः, प्रयागेश्वरः, सिद्धेश्वरः, मातङ्गेश्वरः, सौभाग्येशः, रूपेश्वरः, ब्रह्मेश्वरः, जल्पेश्वरः, केदारेश्वरः, पिशाचेश्वरः, सङ्गमेशः, दुर्धर्षेशः, चण्डादित्येश्वरः, करभेश्वरः, राजस्थलेश्वरः, वडलेश्वरः, अरुणेशः, पुष्पदन्तेश्वरः, अविमुक्तेश्वरः, हनुमन्तेश्वरः, विश्वेश्वरः, स्वप्नेश्वरः, सिद्धेश्वरः, नीलकण्ठेश्वरः, स्थावरीशः, कामेश्वरः, प्रतिहारेश्वरः, पशुपतीश्वरः, मनः कामेश्वरः, दुर्वासेश्वरः, नागचण्डेश्वरः, खर्परेशः, ब्रह्मेश्वरः, पातालेश्वरः, गुप्तेश्वरः, कपिलेश्वरः, योगयोगेश्वरः, भीमेश्वरः, धनुःसहस्रः, अग्नीश्वरः, देवेश्वरः, द्वादशार्कः, दशाश्वरमेधिकेश्वरः, गदाधरेश्वरः, वैजनाथः, सोमनाथेश्वरः, घुम्पेश्वरः, भीमशङ्करः, घण्टेश्वरः, ऊषरेश्वरः, चन्द्रादित्येश्वरः, केशवार्कः, शक्तिभेदेश्वरः, रामेश्वरः, वालीकेश्वरः, ज्वालेश्वरः, अभयेशः, विघ्नहस्तेश्वरः, चञ्चलेशः, पुरुषोत्तमः, वीरेश्वरः, कर्णेश्वरः, पृथुकेशः, आनन्देशः, कोटेश्वरः, अविमुक्तेश्वरः, हनुमत्केश्वरः, विमलेश्वरः, चन्द्रेश्वरः, बिन्दुकेशः, वालुकेश्वरः, बृहस्पतीश्वरः, असङ्ख्यातेश्वरः।

महाकालवन में जितने तीर्थ हैं उतने ही लिङ्ग हैं। वे सभी सब प्रकार से पूज्य और वन्द्य हैं। महात्माओं द्वारा वहां चार द्वारपाल माने गए हैं। उनके द्वार हैं —

पिङ्गलेश्वरः	— पूर्वद्वार,	कायावरोहणेश्वरः	— दक्षिणद्वार,
बिल्वकेश्वरः	— पश्चिमद्वार,	दर्दुरेश्वरः	— उत्तरद्वार

देवादिदेव महादेव शिव

रमणीय महाकालवन में वे तथा अन्य बहुत से त्रिभुवनेश्वर लिङ्ग नाम से रहते हैं। वहां साठ हजार साठ सौ करोड़ पवित्र लिङ्ग हैं। वे वास्तव में असंख्य हैं। उनमें से प्रमुख लिङ्गों का नामोल्लेख ऊपर किया गया है। (स्कन्द, आव, अव, 70/53-89)

इसी भांति काशी में अनेकों विनायकों आदि के साथ अनेक लिङ्ग भी स्थापित हैं। पुत्र-प्राप्ति की इच्छा से काशी गए विश्वानर मुनि ने समस्त गणों, विनायकों, केशवों की पूजा की। उपचारपूर्वक भक्तिसहित लिङ्गों की पूजा कर उन्होंने सोचा, 'कौन सा लिङ्ग शीघ्रता से सिद्धिप्रद होगा जहां मैं पुत्र की कामना से निश्चलतापूर्वक तप करूँ?' तब उन्होंने सभी लिङ्गों के जो नाम बोले वे हैं - ओङ्कारनाथम्, कृत्तिवासम्, कालेशम्, वृद्धकालेशम्, कलशेश्वरम्, केदारेश्वरम्, कामेशम्, चन्द्रेशम्, त्रिलोचनम्, ज्येष्ठेशम्, जम्बकेशम्, जैगीषव्येश्वरम्, दशार्श्वमेधम्, ईशानम्, द्रुमिचण्डेशम्, दृक्केशम्, गरुडेशम्, गोकर्णेशम्, गणेश्वरम्, दुण्ड्याशागजसिद्धम्, धर्मेशम्, तारकेश्वरम्, नन्दिकेशम्, निवासेशम्, पत्रीशम्, प्रीतिकेश्वरम्, पर्वतेशम्, पशुपतिम्, ब्रह्मेशम्, मध्यमेश्वरम्, बृहस्पतीश्वरम्, विभाण्डेश्वरम्, भारभूतेश्वरम्, महालक्ष्मीश्वरम्, मरुतेशम्, मोक्षेशम्, गङ्गेशम्, नर्मदेश्वरम्, मार्कण्डम्, मणिकर्णेशम्, रत्नेश्वरम्, योगिनीपीठम्, यामुनेशम्, लाङ्गलीशम्, श्रीमद्विश्वेश्वरम्, विभु, अविमुक्तेश्वरम्, विशालाक्षीशम्, व्याघ्रेश्वरम्, वराहेशम्, व्यासेशम्, वृषभध्वजम्, वरुणेशम्, विधीशम्, वसिष्ठेशम्, शनीश्वरम्, सोमेश्वरम्, इन्द्रेशम्, स्वर्लीनम्, सङ्गमेश्वरम्, हरिश्चन्द्रेश्वरम्, हरिकेश्वरम्, त्रिसन्ध्येशम्, महादेवम्, उपशान्तिशिवम्, भवानीशम्, कपर्दीशम्, कन्दुकेशम्, मखेश्वरम्, मित्रावरुणेशम्। (वही, काशी, पूर्व, 10/84-97)

अपने वैशिष्ट्यों के कारण भी लिङ्ग अनेक भांति के होते हैं और उन वैशिष्ट्यों के आधार पर उनका नामकरण भी हुआ है। महर्षि वसिष्ठ ने लिङ्गमूर्ति शिव का स्तवन करके गायत्री योग और निर्वाणरूप परमब्रह्म की प्राप्ति की थी। तब उन्होंने जो लिङ्ग-स्तुति की उसमें ऐसे ही विविध-शिवलिङ्गों के अभिधान परिगणित हुए हैं -

कनकलिङ्गम्, वेदलिङ्गम्, परमलिङ्गम्, व्योमलिङ्गम्, सहस्रलिङ्गम्, वह्निलिङ्गम्, पुराणलिङ्गम्, श्रुतिलिङ्गम्, पाताललिङ्गम्, ब्रह्मलिङ्गम्, रहस्यलिङ्गम्, सप्तद्वीपोर्ध्वलिङ्गम्, सर्वात्मलिङ्गम्, सर्वलोकाङ्गलिङ्गम्, अव्यक्तलिङ्गम्, बुद्धिलिङ्गम्, अहङ्कारलिङ्गम्, भूतलिङ्गम्, इन्द्रियलिङ्गम्, तन्मात्रलिङ्गम्, पुरुषलिङ्गम्, भावलिङ्गम्, रजोर्ध्वलिङ्गम्, सत्त्वलिङ्गम्, भवलिङ्गम्, त्रैगुण्यलिङ्गम्, अनागतलिङ्गम्, तेजोलिङ्गम्, वायुर्ध्वलिङ्गम्, भावलिङ्गम्, अथर्वलिङ्गम्, सामलिङ्गम्, यज्ञाङ्गलिङ्गम्, यज्ञलिङ्गम्, तत्त्वलिङ्गम्, देवानुगतलिङ्गम्। (अग्नि, 217/1-10)

द्वादश ज्योतिर्लिङ्ग

द्वादश ज्योतिर्लिङ्ग साक्षात् शिव के अवतार ही स्वीकार किये जाते हैं जो संख्या में बारह हैं। वे सभी सर्वविध रक्षा करने वाले होते हैं। उनके नाम हैं — सौराष्ट्र में सोमनाथ, श्रीशैल में मल्लिकार्जुन, उज्जयिनी में महाकाल, ओङ्कार में अमरेश्वर, हिमालय पर केदार, डकिनी में भीमशंकर, वाराणसी में विश्वेश, गौतमी तट पर त्र्यम्बक, अतिभूमि में वैद्यनाथ, दारुकावन में नागेश, सेतुबन्ध में रामेश और शिवालया में घुश्मेश। परमात्मा शम्भु के उक्त बारह अवतार समस्त मनुष्यों को दर्शन तथा स्पर्शमात्र के माध्यम से समस्त आनन्द प्रदान करते हैं। (शिव, शत, 42/1-5)

सोमनाथ

प्रजापति द्वारा शापित अतः दग्ध, रुग्ण, क्षीण बल सोम अर्थात् चन्द्र शाप से मुक्त होने के उद्देश्य से रेवा और उरि नदी के सङ्गम स्थल पर ब्रह्मा के आदेश से सौ वर्षों तक शिव का ध्यान करके तप करता रहा। सन्तुष्ट तथा वर देने को उद्यत शिव से सोम ने शापमुक्ति का वर मांगा। शिव ने आश्चर्य किया कि उस तीर्थ के सेवन से सोम निष्पाप हो गया है। इसके उपरान्त स्वस्थ सोम ने समस्त प्राणियों के मङ्गल के लिए सर्वपापहर और ब्रह्महत्या विनाशक लिङ्ग की स्थापना की जो सोम के नाम पर सोमनाथ कहलाए। (स्कन्द, आव, रेवा, 85/15-25)

सोमनाथ सोम के दुःखों का विनाश करने वाले तो हैं ही, वे अपने समस्त भक्तों का भी कुष्ठ आदि रोग नष्ट करते हैं। सौराष्ट्र देश में लिङ्ग रूप में स्थित सोमनाथ शिव के अवतार हैं। वहां चन्द्र कुण्ड है। उक्त महालिङ्ग के दर्शन से पापों का विनाश होता है तथा भक्त को भुक्ति के साथ मुक्ति भी प्राप्त होती है। (शिव, शत, 42/6-9)

यह भी मान्यता है कि वैश्रवण कुबेर ने न्यङ्कुमती के पूर्व की ओर उक्त लिङ्ग की स्थापना करके निम्न नामों से उनकी स्तुति की थी — देवः, अजः, पुराणः, उपेन्द्रः, इन्द्रावरराजजुष्टः, शशाङ्कसूर्यग्निसमाननेत्रः, वृषेन्द्रचिह्नः, प्रलयादिहेतुः, सर्वेश्वरैकत्रिबलैकबन्धुः, योगाधिगम्यः, जगतोऽधिवासः, विस्मयाधारः, अनन्तशक्तिः, ज्ञानोद्भवः, धैर्यगुणाधिकः, पिनाकपाशाङ्कुशशूलहस्तः, कपर्दी, मेघसमानघोषः, सकालकण्ठः, स्फटिकावभासः, शम्भुः, भुवनैकनाथः, कपाली, मालिनामादिदेवः, जटाधरः, भीमभुजङ्गहारः, प्रभासिता, सहस्रमूर्तिः, सहस्रशीर्षः, पुरुषः, विशिष्टः, अक्षरः, निर्गुणः, अप्रमेयः, सज्योतिः, एकः, दूरङ्गमः, वेद्यः, सर्वेषुहृत्स्थः, परमः पवित्रः, तेजोनिभः, बालमृगाङ्गमौलिः, रुद्रः, स्फुरदुग्रवक्त्रः, कालेन्धनः, कामदः, अस्तसङ्गः, धर्मासनस्थः, प्रकृतिद्वयस्थः, अतीन्द्रियः, विश्वभुजः, जितारिः, गुणत्रयातीतः, निरीहः,

देवादिदेव महादेव शिव

तमोमयः, वेदमयः, चिदंशः, प्रजापतीशः, पुरुहूतः, इन्द्रः, अनागतैकध्वनिरूपः, आद्यः, संसारपाशच्छिदुरः, विमुक्तः, निरुपमास्यः, बलप्रभावः, वामदेवः, अचिन्त्यः, देवेन्द्रवन्द्यः, कृपाकारुणिकः। (स्कन्द, प्रभा, प्रभा, 290/24-35)

मल्लिकार्जुन

शिव के प्रख्यात द्वादश ज्योतिर्लिङ्गों में से द्वितीय है मल्लिकार्जुन जो क्रौञ्चपर्वत पर अवस्थित है। इस लिङ्ग के आविर्भूत होने की पृष्ठभूमि यह है— देव कार्तिकेय जब समस्त भूमण्डल की परिक्रमा करके शिव-पार्वती के निकट लौटे तो देवर्षि नारद से उन्हें माता-पिता की परिक्रमा करने वाले गणेश के विवाह संस्कार सम्पन्न हो जाने का पता चला। स्वयं को वञ्चित अनुभव करके क्षुब्ध कार्तिकेय क्रौञ्च पर्वत पर जाकर तपस्या करने लगे। शिव-पार्वती के बारम्बार बुलाने पर भी जब वे नहीं लौटे तो पुत्रस्नेह से कातर स्वयं शिव एवं पार्वती पुत्र के निकट क्रौञ्च पर्वत पर गए। माता-पिता की आगमन-वार्ता को सुनकर कार्तिकेय उस स्थान से तीन योजन दूर चले गए। तब पुत्र मिलन की लालसा से शिव एवं पार्वती अपने स्वरूप त्याग कर एक ज्योतिरूप का आश्रय लेकर पुत्र के समीप गए। तभी से अमावस्या को शिव एवं पूर्णिमा को पार्वती पुत्र स्नेह से उस स्थान पर गमन करते हैं। उन्हीं का रूप वह ज्योतिर्लिङ्ग ही मल्लिकार्जुन नाम से प्रख्यात हुआ है। त्रिभुवन में प्रख्यात उस लिङ्ग के दर्शन से व्यक्ति समस्त पापों से मुक्त हो जाता है, उसकी समस्त कामनाओं की पूर्ति होती है और उसे अत्यधिक सुख की प्राप्ति होती है। (शिव, कोटि, 15/1-22)

महाकाल

महाकाल एक ज्योतिर्लिङ्ग का नाम है जो उज्जयिनी में विराजित है। प्राचीन काल में ब्राह्मणों का विद्वेषी तथा वेदों का विनाशक दूषण नामक एक दैत्य हुआ। वह वेद नामक ब्राह्मण के शिवभक्त पुत्र को मारने के लिए आया तो भक्तों के रक्षक शिव ने अपने हुक्म से ही दूषण को नष्ट कर दिया। तभी से शिव वहां ज्योतिर्लिङ्ग के रूप में विराजित हो गए। उन्हीं का नाम महाकाल है। (शिव, शत, 42/13-17)

यह भी वर्णन है कि दूषण से रक्षा के लिए देवों ने जब शिवपूजन प्रारम्भ किया तो दूषण के साथी उन्हें मारने आये। तभी वहां एक ज्योतिर्लिङ्ग के रूप में शिव प्रकट हुए और दैत्यों को नष्ट किया एवं स्वयं ही अपना नाम महाकाल बतलाया। (वही, कोटि, 16/5-40)

मान्यता है कि एक लिङ्ग ही तीन भागों में विभक्त होकर तीनों लोकों में व्याप्त है।

उन्हीं में से एक है महाकाल। उसके साथ अन्य दो हैं तारकेश और हाटकेश। महाकाल के दर्शन करने वाले को महापाप-स्पर्श नहीं करता है और यम से उन्हें कोई भय नहीं रहता है। (स्कन्द, काशी, पूर्व, 7/91-97)

रुद्रसर में स्नान करके कोटेश्वर शिव के दर्शन करके सनातन महाकाल के दर्शन करने का विधान है। उनके दर्शन से व्यक्ति रोगमुक्त और जरा के प्रकोप से सुरक्षित हो जाता है। (वही, आव, अव, 23/2, 17)

अमरेश्वरम्

शिव ने लिङ्ग को व्याप्त कर सर्वत्र स्थापित कर दिया। अमरावती में वह अमरेश्वर नाम से ख्यात हुआ। (स्कन्द, माहे, केदार, 7/28-35)

हाटकेश्वर क्षेत्र में प्रतिष्ठित लिङ्ग अमरेश्वर नाम से विख्यात हैं। दैत्यों द्वारा देवताओं के ध्वस्त होकर इधर-उधर भाग जाने पर देवमाता अदिति ने अत्यधिक दुःखी होकर शिवध्यानपरायण होकर महान् तप किया। दिन-रात तप करती अदिति के चार युग व्यतीत हो गये तो धरणीपृष्ठ को भेदकर एक शिवलिङ्ग प्रकट हुआ। अदिति ने अष्टांग प्रणाम कर उसकी स्तुति की। एक अदृश्य दिव्य वाणी ने अदिति से वर मांगने को कहा तो अदिति बोली, 'हे सुरश्रेष्ठ, दान्यों द्वारा मेरे पुत्र युद्ध में मारे गए हैं, उन्हें आप युद्ध में अवध्य बना दें।' भगवान् ने कहा, 'जो मेरे इस लिङ्ग का स्पर्श करके युद्ध में जाएंगे वे एक वर्ष तक के लिए अवध्य हो जाएंगे।' इससे सन्तुष्ट होकर अदिति अपने पुत्रों को लेकर वहां आई तथा लिङ्ग का दर्शन कराया। तत्पश्चात् सभी देव लिङ्ग को प्रणाम करके शस्त्र लेकर दैत्यों की ओर गए। उस युद्ध में विजयी इन्द्र ने अपना राज्य पुनः प्राप्त किया। कालान्तर में नारद से यह जानकर कि दैत्य भी उस लिङ्ग की पूजा करने लगे हैं, तैत्तिरीय करोड़ देवता आयुध लेकर उस लिङ्ग की रक्षा करने के लिए आ गए। देवों को देखकर सभी दैत्य भयभीत होकर दसों दिशाओं में भाग गए। देवों ने मन्त्रणा की, 'यदि हम इस क्षेत्र को त्यागकर सुरालय चले गए तो दानव आकर इस लिङ्ग की पूजा करेंगे। इससे वे हमारे समान अवध्य हो जाएंगे।' तब अष्ट वसु, द्वादशार्क, एकादश रुद्र, दो अश्विनी— ये सब उस लिङ्ग की रक्षा के लिए उस क्षेत्र में विराजित हो गए। शेष देवगण इन्द्र के साथ स्वर्ग को चले गए। उस लिङ्ग के दर्शन से प्राणियों की मृत्यु नहीं होती इसलिए वह तीनों लोकों में अमर या अमरेश्वर नाम से प्रसिद्ध हो गया। (स्कन्द, नागर, 145/8-43)

केदार

शिव के प्रख्यात द्वादश ज्योतिर्लिङ्गों में से एक है केदार जो हिमालय पर केदार

तीर्थ में विराजित है। केदार को केदारेश भी कहा जाता है। केदार शिव का पञ्चम अवतार माना जाता है। विष्णु के जो नर और नारायण नाम से दो अवतार हैं, उन्हीं के द्वारा पूजित हैं केदार जो भक्तों को अभीष्ट प्रदान करते हैं। (शिव, शत, 42/23-26) केदार को केदारेश के अतिरिक्त केदारेश्वर नाम से भी अभिहित किया जाता है। इस लिङ्ग के विषय में स्वयं शिव का मन्तव्य है कि जो व्यक्ति केदार जाने की मात्र इच्छा करता है, उसके सम्पूर्ण जन्म के पाप क्षण भर में नष्ट हो जाते हैं। अपने घर में रहकर सायंकाल 'केदार' नाम का तीन बार उच्चारण करने वाले को भी यात्रा का फल प्राप्त हो जाता है। माना जाता है कि कालान्तर में वसिष्ठ ऋषि की तपस्या से आकृष्ट होकर काशी जाते हुए शिव का केदार में कलामात्र रह गया है तथापि उनका प्रभाव अत्यधिक है। (स्कन्द, काशी, उत्तर, 77/4-7, 41-43)

भीमशङ्कर

शिव का भीमशङ्कर नामक छठा अवतार भीम असुर का नाश करने वाला हुआ। शिव ने दैत्य को मारकर सुदक्षिण नामक कामरूप देश के राजा की रक्षा की। डाकिनी में लिङ्ग रूप से शिव स्थित हुए और भीमशङ्कर कहलाए। (शिव, शत, 42/27-29)

विश्वेश:

विश्वेश ही विश्वेश्वर नाम से प्रसिद्ध हैं। शिव का यह सातवां अवतार अथवा ज्योतिर्लिङ्ग काशी में हुआ। वे वहां पर ज्योतिर्लिङ्ग के रूप में विराजित हैं। काशी और विश्वेश्वर को भक्ति से पूजने वाले तथा उनके नाम जपने वाले कैवल्य-पद के भागी होते हैं। (शिव, शत, 42/32-33) उक्त लिङ्ग का नाम विश्वेश्वर होने का कारण यह है कि विदर्भा के राजा विश्वेश ने उक्त लिङ्ग की आराधना करके शिव को प्रसन्न किया था और अपने नाम से उस लिङ्ग को विश्वेश्वर कहलाने का वर भी शिव से प्राप्त किया था। (स्कन्द, आव, चतुर्, 53/34-39) विश्वेश्वर लिङ्ग काशी के पांच प्रमुख लिङ्गों में से एक माना जाता है। अन्य चार लिङ्ग हैं - ओङ्कार, कृत्तिवासेश्वर, मध्यमेश्वर तथा कन्दर्पेश्वर। शिव की कृपा से ही उक्त पांचों लिङ्गों का दर्शन प्राप्त होता है। (पद्म, स्वर्ग, 34/10-11)

इस लिङ्ग को लिङ्गात्मक शिव की देह की आत्मा भी स्वीकारा गया है। काशी के अनादिसिद्ध, स्मरण, दर्शन, स्पर्श आदि से भी स्वर्ग-अपवर्ग प्रदाता, नाना धातुमय स्वयम्भू असंख्य लिङ्गों में से जो चौदह लिङ्ग विशेषरूपेण कल्याणकारी हैं तथा जिनके समवाय के कारण आनन्दकानन मुक्तिक्षेत्र कहलाता है उनमें से चौदहवां लिङ्ग है विश्वेश्वर। (स्कन्द, काशी, उत्तर, 73/30-36)

देवादिदेव महादेव शिव

वस्तुतः काशीक्षेत्र में शिव के अनेक लिङ्ग प्रतिष्ठित हैं जिनमें से प्रत्येक की अपनी-अपनी महत्ता है। वीरेश्वर भी उन्हीं में से एक लिङ्ग है किन्तु उसकी कुछ विशिष्ट महिमा मानी गई है। इसी का प्रमाण है कि उक्त समस्त शिवलिङ्गों में से एक वीरेश्वर को लिङ्गात्मक शिव के शारीरिक रूप की आत्मा का स्थान दिया गया है जबकि अन्य कतिपय लिङ्गों की महत्ता को प्रतिपादित करते हुए उनको उस शरीर के विविध अङ्गों के रूप में कल्पित किया गया है। तदनुसार—

लिङ्ग नाम	शरीर का अङ्ग
कृत्तिवास	मस्तक
गोकर्ण, भारभूत	कान
वीरेश्वर, अविमुक्त	दक्षिण कर
धर्मेश, मणिकर्णेश	वाम कर
कालेश्वर, कपर्दीश	चरणद्वय
ज्येष्ठेश्वर	नितम्ब
मध्यमेश्वर	नाभि
महादेव	कपर्व
श्रुतीश्वर	शिरोभूषण
चन्द्रेश	हृदय
केदार	लिङ्ग
शुक्रेश्वर	शुक्र

उक्त लिङ्गों के अतिरिक्त जो अन्य करोड़ों लिङ्ग हैं वे शिव के नाखून, लोम तथा शरीर के आभूषण माने गए हैं। (स्कन्द, काशी, पूर्व, 33/125-173)

वीरेश्वर लिङ्ग को गुह्यतम तथा अनुपम माना जाता है। (वही, काशी, पूर्व, 10/103-105)

वीरेश्वर लिङ्ग की इतनी महत्ता का कारण यह भी माना जाता है कि स्वयं शिव ने ही इसको सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कहा है। हुआ यह था कि वैष्णव राजा अमित्रजित् के विष्णु के अंशभूत पुत्र वीर की तपस्या से प्रसन्न होकर शिव शिवलिङ्ग रूप में प्रकट हुए। वह ज्योतिर्मय लिङ्ग सप्त पातालों को भेद कर प्रकट हुआ था। वीर को वर देते हुए लिङ्गरूपी शिव ने कहा, 'वीर, यह लिङ्ग तुम्हारे नाम पर वीरेश्वर कहलाएगा। आज से मैं सदा इस लिङ्ग में रहूँगा और इसके आश्रितजनों को निश्चित ही परासिद्धि प्रदान

देवादिदेव महादेव शिव

करूँगा। वीरेश्वर लिङ्ग काशी के तीन करोड़ लिङ्गों में महाश्रेष्ठ होगा। जो रात्रि में वीरेश्वर लिङ्ग की अर्चना करेगा उसके द्वारा तीन करोड़ लिङ्ग अर्चित हो जाएंगे। यह लिङ्ग ऐहिक तथा पारलौकिक समस्त कामनाओं को पूर्ण करने में समर्थ है।' वस्तुतः ब्रतीजनों द्वारा वीरेश्वर के समक्ष ब्रतोत्सर्ग आदि करने से उसका फल निश्चित ही कोटिगुणा हो जाता है। (वही, काशी, उत्तर, 83/43-121)

त्र्यम्बकम्

काशी में विराजित कृत्तिवास लिङ्ग का सत्ययुग में नाम था त्र्यम्बक। (नारद, उत्तर, 49/6-9) माना जाता है कि देवों ने शिव से संसार पर दया करने के लिए पृथिवी पर निवास करने की प्रार्थना की थी तब गङ्गा गौतमी नाम से और शिव त्र्यम्बक नाम से विराजित हुए थे। त्र्यम्बक लिङ्ग की पूजा करने से समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं। (शिव, कोटि, 26/46-55)

वैद्यनाथ

दशानन रावण ने हिमालय की भूमि में गह्वर बनाकर कठोर तप किया। अन्त में अपने सिरों को काटकर आराध्य को प्रसन्न करने के लिए उनकी आहुति देने लगा। एक सिर के अवशिष्ट रहने पर शिव प्रकट हुए तथा उसके सिरों को यथावत् कर दिया। रावण ने तब शिव को अपने साथ लङ्कापुरी ले जाने की इच्छा व्यक्त की। शिव ने उसे ज्योतिर्लिङ्ग को ले जाने की अनुमति दी और सावधान कर दिया कि यदि मार्ग में वह कहीं भी ज्योतिर्लिङ्ग को रखेगा तो वह उसी स्थान पर स्थिर हो जाएगा। शिव की माया से रावण को मार्ग में लघुशङ्का की इच्छा हुई तो वह लिङ्ग को एक गोप को थमाकर लघुशङ्का से निवृत्त होने लगा। रावण को इस कार्य में विलम्ब लग गया। एक महूर्त तक लिङ्ग को धारण कर उसके भार से गोप ने उसे भूमि पर रख दिया तो वह वहीं स्थिर हो गया। वह लिङ्ग ही वैद्यनाथेश्वर नाम से प्रसिद्ध हुआ। (शिव, कोटि, 28/4-21)

नागेश अथवा नागेश्वर

देवादिदेव महादेव शिव का लिङ्गरूपी दशम अवतार है नागेश या नागेश्वर। उन्होंने दारुक राक्षस का वध करके सुप्रिय नामक अपने भक्त की रक्षा की थी और तभी ज्योतिर्लिङ्ग रूप में नागेश्वर प्रकट हुए। (शिव, शत, 42/42-44)

रामेश अथवा रामेश्वरम्

रामेश्वर अभिधान से प्रतिष्ठित अनेक लिङ्गों में से एक लिङ्ग दक्षिण समुद्र तट

देवादिदेव महादेव शिव

पर है। रावण को विजित करने की इच्छा से समुद्र पार करने को व्यग्र राम ने शिव की वहीं पर पूजा की थी। प्रसन्न होकर शिव प्रत्यक्ष हुए तो राम ने रावण पर विजय की प्रार्थना की तथा भक्तों को उपकृत करने के लिए शिव से वहीं अवस्थान करने की भी याचना की। तभी से शिव वहां समुद्र-तट पर राम के नाम से, रामेश्वर अभिधान से प्रतिष्ठित हैं। (शिव, कोटि, 31/30-40)

घुश्मेश या घुश्मेश्वर

परम शिवभक्त नारी घुश्मा प्रतिदिन मिट्टी के एक सौ शिवलिङ्ग बनाकर भक्तिपूर्वक उनकी पूजा करती थी और पूजा के अन्त में तालाब में उनको विसर्जित कर देती थी। उसकी सपत्नी सुदेहा ने ईर्ष्या के कारण घुश्मा के पुत्र को विष देकर उसका वध कर दिया। पुत्र की मृत्यु से सन्तप्त होने पर भी घुश्मा ने अपने नियम को नहीं छोड़ा अतः उस दिन भी यथा नियम उसने सौ शिवलिङ्ग बनाकर उनका पूजन तथा विसर्जन किया। तट पर आने पर उसने अपने पुत्र को जीवित अवस्था में तट पर खड़े देखा। उसी समय शिव ने प्रत्यक्ष हो उसे दर्शन दिया और वर मांगने को कहा। घुश्मा ने अपने नाम से शिव को वहां स्थिर रहने तथा विश्व का कल्याण करने की प्रार्थना की। घुश्मा की प्रार्थना पर शिव वहाँ पर घुश्मेश्वर नामक ज्योतिर्लिङ्ग के रूप में विराजित हो गए। (शिव, कोटि, 32/7-52; 33/1-48)

शतरुद्रीयम्

रुद्र अर्थात् शिव के शतलिङ्गों की नामावली शतरुद्रीयम् कहलाती है। इस सूची में रुद्रनाम, लिङ्ग के निर्माण का आधार तथा उसके उपासक के नाम समाविष्ट हैं। शतरुद्रीयम् रुद्र के उत्तम माहात्म्य रूप है जिसमें विभिन्न वस्तुओं से निर्मित अनेक लिङ्गों के नामों का समावेश है। देव-दानव, नाग, यक्ष आदि प्रायः सभी योनियों के प्राणी निश्चित नामों से उन लिङ्गों का जप करते हैं।

शतरुद्रीय का श्रवण करने से सभी पापों का प्रक्षालन होता है। प्रतिदिन प्रातः काल उसका पाठ करने वाले को प्रसन्न होकर शिव समस्त वर प्रदान करते हैं।

शतरुद्रीय में पठित लिङ्गों के नाम, उनके प्रतिष्ठा-स्थान तथा पूजक के नाम निम्नवत् हैं—

लिङ्ग-वैशिष्ट्य

1. हाटकम्
2. कृष्णलिङ्गम्

लिङ्गनाम

जगत्प्रधानम्

उपासक

ब्रह्मा

सनकादि

देवादिदेव महादेव शिव

लिङ्ग-वैशिष्ट्य	लिङ्गनाम	उपासक
3. दर्भाङ्कुरमयलिङ्गम्	विश्वयोनिः	सप्तमुनयः
4. जगद्बीजम्		नारदः
5. वज्रलिङ्गम्	विश्वात्मा	इन्द्रः
6. ताम्रलिङ्गम्	विश्वसृक्	सूर्यः
7. मौक्तिकलिङ्गम्		चन्द्रः
8. इन्द्रनीलमयम्	विश्वेश्वर	वह्निः
9. पुष्परागम्	विश्वयोनिः	गुरुः
10. पद्मरागमयम्	विश्वकर्मा	शुक्रः
11. हेमलिङ्गम्	ईश्वरम्	धनदः
12. रौप्यजम्	जगतां पतिः	विश्वदेवाः
13. शीतिजम्	शम्भुः	वायवः
14. काशजम्	स्वयम्भुः	वसवः
15. त्रिलोहम्	भूतेशम्	मातरः
16. लौहम्	भूतभव्यभवोद्भवम्	राक्षसाः
17. सीसजम्	योगम्	गुह्यकाः
18. योगेश्वरम्		जैगीषव्यः
19. शर्वम्		निमिः
20. गोमयम्	सर्वलोकाश्वरेश्वरम्	धन्वन्तरिः
21. दारुजम्	सर्वश्रेष्ठम्	गन्धर्वाः
22. वैडूर्यम्	जगज्ज्येष्ठम्	राघवः
23. मारकतम्	वसिष्ठम्	बाणः
24. स्फाटिकम्	परमेश्वरम्	वरुणः
25. विट्मल्लिङ्गम्	लोकत्रयङ्करम्	नागाः
26. तारलिङ्गम्	लोकत्रयाश्रितम्	भारती
27. जगन्नाथः		शनिः

देवादिदेव महादेव शिव

लिङ्ग-वैशिष्ट्य	लिङ्गनाम	उपासक
28. जातीजम्	सुदुर्जयम्	रावणः
29. मानसम्	काममृत्युजरातिगम्	सिद्धाः
30. उञ्छजम्	ज्ञानात्मा	बलिः
31. पुष्पजम्	ज्ञानगम्यम्	मरीचिपाः
32. शकृतम्	ज्ञानज्ञेयम्	शकृताः
33. फेनजम्	सुदुर्विदम्	फेनपाः
34. वालुकालिङ्गम्	वरदः	कपिलः
35. वाचिलिङ्गम्	वागीश्वरः	सारस्वतः
36. मूर्तिमयम्	रुद्रम्	गणाः
37. जाम्बूनदमयम्	शितिकण्ठम्	देवाः
38. शङ्खलिङ्गम्	कनिष्ठम्	बुधः
39. मृन्मयम्	सुवेधा	अश्विनौ
40. पिष्टलिङ्गम्	कपर्दी	विनायकः
41. नावनीतम्	करालम्	कुजः
42. ओदनलिङ्गम्	हर्यक्षम्	ताक्ष्य
43. गौडम्	रतिदम्	कामः
46. लवणलिङ्गम्	बभ्रुवेशम्	शची
45. प्रासादलिङ्गम्	याम्यम्	विश्वकर्मा
46. पांसूत्थम्	सुहृत्तमम्	विभीषणः
47. वंशाङ्कुरोत्थम्	सङ्गतम्	सगरः
48. रामठं लिङ्गम्	गम्यः	राहुः
49. लेप्यलिङ्गम्	हरिनेत्रम्	लक्ष्मीः
50. सर्वभूतस्थम्	स्थाणुः	योगिनः
51. नानाविधम्	पुरुषं नाम	मनुष्याः
52. तेजोमयम्	भगभास्वरम्	ऋक्षाणि

देवादिदेव महादेव शिव

लिङ्ग-वैशिष्ट्य	लिङ्गनाम	उपासक
53. धातुलिङ्गम्	सुदीप्तम्	किन्नराः
54.	देवदेवम्	ब्रह्मराक्षसाः
55. दन्तजम्	रंहसम्	वारणाः
56. सप्तलोकमयम्	बहुरूपम्	साध्याः
57. दूर्वाङ्कुरमयम्	सर्वम्	ऋतवः
58. कौङ्कुमम्	शम्भोप्रियः	अप्सरसः
59. सिन्दूरजम्	प्रियवासनम्	उर्वशी
60. ब्रह्मचारी	उष्णीषी	गुरुः
61. अलक्तकम्	सुबुभुकम्	योगिन्यः
62. श्रीखण्डम्	सहस्राक्षः	सिद्धयोगिन्यः
63. मांसलिङ्गम्	मीढुषम्	डाकिन्यः
64. अन्नजम्	गिरिशम्	मनवः
65. व्रीहिजम्	सुशान्तम्	अगस्त्यः
66. यवजम्	पतिम्	देवलः
67. वल्मीकजम्	चिरवासी	वाल्मीकिः
68. बाणलिङ्गम्	हिरण्यभुजम्	प्रतर्दनः
69. राजिकम्	उग्रम्	दैत्याः
70. निष्पावजम्	दिक्पतिम्	दानवाः
71. नीरमयम्	पर्जन्यपतिः	मेघाः
72. राजमाषमयम्	भूतपतिम्	यक्षाः
73. तिलान्नजम्	वृषपतिः	पितरः
74. गोरजमयम्	गोपतिः	गौतमः
75. फलमयम्	वृक्षावृतम्	वानप्रस्थाः
76. पाषाणलिङ्गम्	सेनान्यः	स्कन्दः
77. धान्यम्	मध्यमः	अश्वतरः नागः

देवादिदेव महादेव शिव

लिङ्ग-वैशिष्ट्य	लिङ्गनाम	उपासक
78. पुरोडाशमयम्	सुवहस्तम्	यज्वा
79. कालायसमयम्	धन्विनम्	यमः
80. यवाङ्कुरम्	भर्गदैत्यः	जामदग्न्यः
81. अन्नमयम्	बहुरूपम्	पुरुखा
82. शर्करालिङ्गम्	बाहुयुगम्	मान्धाता
83. पयोमयम्	नेत्रसहस्रकम्	गावः
84. भर्तृमयम्	विश्वपतिः	साध्याः
85. मौञ्जम्	सहस्रशिरः	नरः नारायणः
86. तार्क्ष्यम्	सहस्रचरणः	पृथुः
87. व्योमलिङ्गम्	सर्वात्मकः	पक्षिणः
88. मेरुलिङ्गम्	पृथिवी	द्वितनुः
89. भस्मलिङ्गम्	महेश्वरः	पशुपतिः
90. ज्ञानलिङ्गम्	चिरस्थानम्	ऋषयः
91. ब्रह्मलिङ्गम्	ज्येष्ठः	ब्राह्मणाः
92. गोरोचनमयम्	पशुपतिः	शेषः
93. विषलिङ्गम्	शङ्करः	वासुकिः
94. कालकूटाख्यम्	बहुरूपम्	तक्षकः
95. हालाहलम्	एकाक्षः	कर्कोटः
96. विषमयम्	शृङ्गी, धूर्जटिः	पद्म
97. पितृमयम्	विश्वरूपम्	पुत्रः
98. पारदम्	त्र्यम्बकः	शिवा
99. शास्त्रलिङ्गम्	वृषाकपिः	मत्स्याद्याः

(स्कन्द, माहे, कौमा, 13/143-198)

(ध्यातव्य है कि शतरुद्रीय कहा गया है जबकि लिङ्गनाम निन्यानवे हैं)

संहारी शिव

परमेश्वर देवादिदेव महादेव शिव घोर-अघोर-उभयरूप हैं, यह तो उनके विषय में मान्य तथ्य है। उनकी दो मूर्तियां घोरा और शिवा समान रूप से उपास्य हैं, ध्येय हैं। शिवामूर्ति सौम्यरूपा है जिसकी अभिव्यक्ति धर्म, जल, चन्द्र आदि में होती है। उनके सहस्रनामों, स्तुतियों तथा स्तवनों आदि में उनके इसी शिवरूप, सौम्य रूप को अभिव्यक्त करते हुए उनके अनेकानेक अभिधान मिलते हैं यथा— सुशील, सुशीली, सौम्येक्षण, गौर, पद्मवर्ण, नृत्यशील, उपनृत्यप्रिय, गीतशील, चूडामणिधर, शम्भु, शान्त, इन्दुशेखर, नर्तनवादनप्रिय आदि।

ऐसे सौम्यमूर्ति सोमधारी शिव का दूसरा घोर रूप भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है, स्मरणीय है, ध्येय है। इसी घोरामूर्ति वाले शिव प्रलयकाल में जगत् का संहार करते हैं। तीक्ष्ण, उग्र, प्रतापी वे ही प्रलयकालीन अग्नि के रूप में मांस, मज्जा, शोणित आदि को ग्रहण करते हैं और तभी रुद्र कहलाते हैं। समस्त प्राणियों की उत्पत्ति तथा स्थिति के हेतुभूत होकर भी वे ही ऊर्ध्व में स्थित होकर जीवों के प्राणों का दहन करते हैं। (महा, अनु, 146/1-17)

उन संहारी शिव के उस प्रलयङ्करी रूप को परिचित करवाते हुए अनेक साभिप्राय अभिधान उनके स्तवनों आदि में यत्र-तत्र दृष्टिगोचर होते हैं यथा — काल, कालकाल, महाकाल, मृत्यु, कृतान्त, क्रूर, उग्र, दुष्टप्रकम्पक, अक्षोभ्यक्षोभण, प्रलयोद्भूतिहेतु, ज्वलनस्तम्भरूपी, महामैरवनाद, भीमरूप, भैरववेग आदि।

वस्तुतः शिव हैं जगत्सृष्टिविनाश-कारण तभी तो वे अचिन्त्याव्यक्तरूप कहलाते हैं। अब तक उनके जगत्सृष्टिकारण रूप को ही सामने लाने का प्रयास किया गया है। अब उस प्रयास का उपसंहार उनके संहारी रूप से किया जा रहा है।

पहले उल्लिखित किया जा चुका है कि स्वयं परमेश्वर, देवादिदेव महादेव शिव ने ही विश्व की उत्पत्ति, उसके पालन तथा संहार का दायित्व क्रमशः ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्र को सौंपा था। ब्रह्माण्ड पुराण का इस विषय में स्वतन्त्र मत है। तदनुसार परमेश्वरी जगदम्बिका ललिता देवी ने सृष्टि के प्रारम्भ में तीन अण्डों का सृजन किया। उनमें से

देवादिदेव महादेव शिव

पहले अण्डे में से अम्बिका पार्वती तथा पुरुषोत्तम विष्णु, दूसरे अण्डे में से लक्ष्मी देवी तथा ब्रह्मा एवं तीसरे अण्डे में से सरस्वती और शिव उत्पन्न हुए। उन सभी के दायित्वों का विभाजन करते हुए स्वयं ललिता देवी ने शिव के हाथों पार्वती को सौंप दिया तथा शिव को संहार-कार्य में नियुक्त किया। (ब्रह्माण्ड, मध्य, उप, 40/3-12) इस मान्यता के अनुसार संहार करना शिव की स्वतःस्फूर्त प्रेरणा से आरम्भ नहीं हुआ अपितु ललिता देवी के निर्देश पर ही हुआ।

अस्तु! स्वतःस्फूर्त होकर शिव संहार करते हैं अथवा निर्दिष्ट होकर, इस प्रश्न को छोड़ भी दें तो स्पष्ट होता है कि प्रायः समस्त वाङ्मय ही शिव को संहारी रूप में स्वीकृति प्रदान करता है।

पुराणों का महत्त्वपूर्ण प्रसङ्ग दक्ष-यज्ञ-विध्वंस के मूल कारण की खोज करते हुए विनाश करने वाला होने के कारण ही जामाता शिव को अमंगलकारी स्वीकार करते हुए यज्ञ के मांगलिक अवसर पर दक्ष ने शिव को आमन्त्रित तक नहीं किया था। इसी का परिणाम हुआ सती-दाह तथा यज्ञ-विध्वंस। (मत्स्य, 13/12-61; वाराह, 22/1-5)

वस्तुतः समस्त जगत् को जवनशील, क्रियाशील बनाने वाले कालरूपी शिव एक अंश से सम्पूर्ण जगत् की रचना करते हैं, एक दूसरे अंश से उसका पालन करते हैं और एक तीसरे अंश से उसका संहार करते हैं। भगवान्, ईश्वर, स्वयंज्योति, सनातन, परमात्मा, परमब्रह्म शिव से भिन्न कुछ भी न होने पर भी (कूर्म, उत्तर, 6/6-7, 51) सृष्टि के अवसान के समय उनका केवल संहारी रूप ही प्रकट होता है।

इस विषय में एक मत यह भी है कि शिव का एक रूप रुद्र भी है जिन्हें जन्मग्रहण करने वाले के रूप में चित्रित किया गया है। वे रुद्र ही संहारी हैं, अघोर शिव नहीं। काली देवी के सहयोग से रुद्र जो कार्य करते हैं, वह प्रलय ही तो है। (शिव, रुद्र, सृष्टि, 9/51-52)

स्कन्द पुराण में उसी संहार का चित्रण इस भांति प्रस्तुत किया गया है - सृष्टि के अन्त में शूली मातृगणों और भूतगणों से परिवेष्टित होकर संहार की इच्छा से रौद्र रूप में नृत्य करने लगे। उन्होंने वडवामुख के समान अपना मुख खोलकर घोर अट्टहास किया। इससे समस्त दिशाएं और सागर क्षुब्ध हो गए। शीघ्र ही सम्पूर्ण लोक रुद्र के विशाल मुख-गह्वर में प्रविष्ट होने लगे। उनके मुख से निकली अग्नि की ज्वालाएं चारों ओर फैलने लगी, द्वादश आदित्य प्रज्वलित होने लगे। (स्कन्द, आव, रेवा, 16/1-12, 17/9-12)

उस प्रलयकाल में मार्कण्डेय ऋषि ने महामेघ के समान ईशान शिव को देखा।

देवादिदेव महादेव शिव

उस समय महासमुद्र, सप्त सरोवर, द्वीप, नदियां, भू, भुव आदि लोक— सभी एकाकार जलमय हो गए थे। केवल शिव ही शङ्ख, चक्र, असि, किरीट आदि से शोभित हो विराजमान थे। (वही, आव, रेवा, 18/9-13)

उस महाप्रलय की वेला में मनु के साथ जब मार्कण्डेय ऋषि ने पोत पर आरोहण किया तब उन्होंने निम्न नामों से शिव का स्तवन किया — सद्योजातः, वामदेवः, भक्तिगम्यः, भूभुवः, रामज्येष्ठः, भद्रकालः, कलिरूपः, अचिन्त्याव्यक्तरूपः, धामा, देवदेवः, रुद्रः, जगत्सृष्टिविनाशकारणम्। (वही, आव, रेवा, 3/35-40)

